

जलसाधर

मूल

ताराशंकर चन्द्रोपाध्याय

हिन्दी रूपान्तर

रंगनाथ राकेश



भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन



राष्ट्रभारती

सौकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक 302

जलसागर

(कहानी-संग्रह)

तारशंकर बन्धोपाध्याय

तृतीय संस्करण 1984

मूल्य : 24/-

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

बी/45-47, कनाउट प्लेस,

नवी दिल्ली-110001

मुद्रक

अंकित प्रिंटिंग प्रेस

शाहदरा, दिल्ली-110032

आवरण-शिल्पी : हरिपाल त्यागी



BHARATIYA JNANPITH

JALSAGHAR : (Stories) : by Tarashankar Bandyopadhyaya
Published by Bharatiya Jnanpith B/45-47, Connaught
Place, New Delhi-110001. Printed at Ankit Printing Press,
Shahdara Delhi. Third Edition 1984. Rs. 24/-

जलसाघर

अनुक्रम

•

रसकली	१
नारी और नायिन	२७
पास का फूल	३६
सत्यया मणि	५५
मेला	७४
काला पहाड़	६२
नारी	१२२
ध्याघ्रचर्म	१३६
डाइन	१४३
तीन शून्य	१७३
नहीं	१८४
पुत्रेष्टि	२०५
जलसाधर	२४६

रसकली

पाल-पोखर के घाट पर विशाल बरगद के पेड़ की एक जटा अजगर की तरह कुण्डली मारे, गर्त के भीतर घसी हुई, जैसे धूप ले रही हो। पुलिनदास उसी पर 'द' की तरह घुटने मोड़ कर नीचे झुका हुआ पानी में मिट्टी के टूटे बर्तनों के गोल ढेलों से 'ब्याङ्ग छुड़छुडि' खेल रहा था। उस के कंधे पर गमछा, कान पर थी एक जली हुई बीड़ी।

उस के साथी बलाईदास ने आ कर पुकारा—अरे ओ पेला, उठ आ। अरे ओ क्रोधी बाली, उठ आ। चाचा तो—
पुलिन ने हाथ के ढेले पानी के बदले जमीन पर फेंक कर कहा—तो बुढ़ा बेदा अब-तब है?

बलाई ने उत्साहपूर्वक कहा—अब देर नहीं, उठ आ। दोनों ही गांव की डगर पर चले, बलाई आगे, पुलिन पीछे।

पुलिन ने सहसा कहा—बहू खूब रो-धोर ही है, क्यों रो बलाई?

बलाई ने कहा—ब-हु-त, गिर-पड़ रही है। उस का सिर गर्दन के पास सटक सा आया, दोनों होंठ ठुहड़ी तक टेढ़े हो गये।

-
१. टूटे हुए मिट्टी के बर्तनों के गोल टुकड़ों को पानी की सतह पर इन तरह मारते हैं कि वह मेड़क सा उछलता, सरकता चला जाये। इसे भोजपुरी में 'छिछली मारना' भी कहते हैं।—अनुवादक।

दोनों ही चुपचाप, रास्ता पकड़े चले जा रहे थे। जमीन-छूती लम्बी रस्सी में बँधी हुई गाय घास चर रही थी। पता नहीं किस कारण से पुलिन ने चट बायें हाथ की दोनों अँगुलियों से गाय की पीठ दबा कर साथ ही नाक में धो-धो-घड़-धों की तेज आवाज की, तुरन्त ही गाय भी गर्दन हिला कर उछल पड़ी।

पुलिन तेजी से कूद कर हाथ हटाता हुआ बोला—बाप रे ! क्या रोव है ! मेरी बहू भी ठीक ऐसी है, हमेशा गरदन टेढ़ी किये रहती है।

केवल शरीर-सौन्दर्य को छोड़ कर पुलिनचन्द्र के पास कुछ भी प्रशंसा योग्य नहीं था। उस की देह सुन्दर थी, आकार दीर्घ, बलवान काठी, गोरा रंग, घुँघराते बाल और समूची देह पर जैसे एक मधुर लानप्य। इस के अलावा कोई भी गुण नहीं था। बुद्धि तो खँर कभी थी ही नहीं, बचपन में ही पाठशाळा के गुरु जी—एक पैसे के तीन आम तो तीन आम के दाम, मुँह-जवानो सवाल उसे तीन घण्टे में भी नहीं समझा पा कर स्वयं ही उस का बोरिया-बस्ता बाँध कर उस के थगल में दे कर बोले थे—बेटा, तो शुभकर इस जन्म में बैरागी-कुल में जन्म ले कर हिसाब तक से बैराग्य ले चुके हैं, यह नहीं जानता था मैं। तुम्हें पढ़ाना मेरे बूते का नहीं है।

इस के ऊपर वह पा भूतिमान् अगिया-बैताल।

मण्डली में भले ही लकाकाण्ड की तरह गम्भीर आलोचना चल रही हो, बूढ़े जाम्बवन्त राम दे रहे हों, महफिल के सारे लोग निस्तब्ध, स्तम्भित हों ! सहसा वहाँ पुलिनचन्द्र जैसे आश्चर्य की गुदगुदाहट से झिलझिला कर हँस पड़ता है—हँ-हँ-हँ-हँ-हँ-हँ, बाप रे यह तो मेरे चाचा के ही बारे में लिखा है। ये बड़े-बड़े बास और इतनी बड़ी दाढ़ी, ठीक, ठीक, जाम्बवन्त, जाम्बवन्त—हँ-हँ-हँ-हँ-हँ !

या हनुमान-भूर्य का प्रमग चल रहा हो, देवता भी जहाँ हँसते-हँसते सोट-पोट हो रहे हों, वहाँ पुलिन आश्चर्य के मारे विजड़ित। दोनों आँखें सेल-बड़े बड़े की तरह फटी-फँसी-सी, आस-पास के आदमियों से कहता—बाप रे, क्यों हँसते हो ? इस के बाद उत्साह से धादवाही देता—

बलिहारी है बाप हनुमान् ! बाबू लोगों के प्यादों से भी बढ कर तुम पहलवान हो ।

ग्रन्थकार को भी वह नहीं छोड़ता था, पुलिन कहता था—किताब है लेकिन मजेदार, चटपटी, अचम्भे में डाल देती है यह !

रावण-वध का प्रसंग है, सीता के उद्धार से थोटा मण्डली भावावेश में जय-जयकार कर रही है । लेकिन पुलिन का रस-बोध विचित्र था, वह आँसू भरी आँखों कहता—उफ् ! इतनी स्त्रियाँ विधवा हुईं, ओह, ओह !

और साथ ही साथ धवरा कर जैसे खोजपूर्ण बात कह उठता—अच्छा, लंका में तब मछली का भाव कितने सेर का था ? एक पैसा या दो पैसे सेर ? यह नहीं लिखा ?

लोग सभी उस की मूर्खता के ऊपर एक और रहा जमा कर कहते—पागल ।

पुलिन क्रोध नहीं करता, हँसमुख ही रहता, उत्तर के रूप में कहता—ऐं !

क्रोध करता है एक व्यक्ति, लज्जित और दुखी भी होता है एक दूसरा व्यक्ति । दोनों के बीच पहली है पुलिन की स्त्री, अठारह-उन्नीस साल की उम्र, गोल-गाल भरी-भरी देह, नाम गोपिनी ।

लेकिन पुलिन कहता—सविणी ! पुलिन की मूर्खता की लज्जा की खरोच से गोपिनी को त्रोघ आता, सापिन की तरह वह फुँककारती । उस की बातचीत भी होनी थी लपलपाती सविणी-जिह्वा सी ही तीक्ष्ण भयावह । मामूम, सभी के लिए हँसी के पात्र अपने पति के घर में सँकड़ो लज्जा के बीच में गोपिनी को जो एक सान्त्वना का आश्रय मिला था, वह था वही द्वितीय व्यक्ति, जो पुलिन के लिए लज्जा और दुख से मर-सा जाता था, वह था पुलिन का एक बूढ़ा चाचा रामदास महन्त, जिस के साथ पुलिन जाम्बवन्त की तुलना देता था ।

रामदास की हालत ठीक-ठाक, काफ़ी ज़मीन-ज़ायदाद, घर में दुधारू गायें, गाँव में दस-पाँच रुपये का सेन-देन !

उस का चेहरा आज सिर्फ़ दाढ़ी और बालों के ही कारण कुरूप नहीं,

मदैव से ही कैसा श्रीचिहीन सा था, युवावस्था में परम आग्रह से जिस श्रीमती के साथ घर-द्वार बसाया था, वही श्रीमती उस के उसी बुरे चेहरे के कारण घर-द्वार पर लात मार कर कही गायब हो गयी ।

श्रीमती की खोज में, गृही वैरागी का वंशज रामदास सम्बा अंगरखा पहन कर, कंधे पर झोला डाल कर धुमकड़ी भिखारी वैरागी बन गया, दुख के कारण उस ने सत्तार को झाड़-पोछ कर त्याग दिया लेकिन संसार ने उसे नहीं म्यामा ।

श्रीमती का पता नहीं लगा, लेकिन उस की झोली में किसी दिन श्री आ गयी और उसे सत्तार की ओर उन्होंने मोड़ दिया, तब भीछ माँगने से ही उन के पास तीन सौ रुपयों की पूंजी जमा हो चुकी थी, घर की जमीन से लमामियों और पट्टीदारों के यहाँ बहुत सारा धान भी जमा हो चला था । श्रीमती के अभाव में रामदास ने श्री को ले कर अच्छी तरह घर-द्वार बसा लिया ।

दस-पाँच लोगो ने कहा—महन्त ! हम वार अच्छी तरह से घर द्वार बसाओ, जरा देख-सुन कर एक अच्छी सी बेटनबी...

रामदास ने कहा—राधे, राधे, ये बातें छोड़ दो भाई, राधारानी मेरे मन में ही ठीक है, दयान में ही ठीक है वे, बाहर कुछ बे-जा या टेढ़ी । जरा त्रिभगी मुद्रा वाले कृष्ण की ही लाछना देखो न ' जय राधे, श्रीमती, श्रीमती ।

पता नहीं किस ने, उसी बीच, स्त्री जाति की निन्दा की, महन्त ने मिर हिता कर कहा—राधे, राधे, ये बातें मत कहो, यह नहीं कहना चाहिए । श्रीमती की जाति है, वे सभी अच्छी हैं ।

किसी ने हाँठ काट कर मजाक में कहा—जो तुम्हारी श्रीमती...

महन्त ने हँस कर कहा—अरे भाई, वे सब श्रीमती की जाति की है, सुन्दर के ही साथ तो उन का सम्बन्ध है । कुरु को असो बब, कौन पसन्द करता है भाई ?

इसी समय रामदास के बड़े भाई श्यामादास अपने मातृहीन आठ वर्षीय सुन्दर पुत्र पुलिन को छोड़ कर स्वर्ग मिथारे । रामदास पुलिन को गले लगा कर मसीहा की तरह भाँ बन गये ।

रूपवान् पुलिन बड़ा हुआ। वैष्णव का लड़का, कोतेन के अखाड़े में झाल-मँजीरा छोड़ कर लाठी के अखाड़े में लाठी चलाना सीख गया। बसाई हुआ साथी। गाँजे की पड़ी लत। रामदास नियन्त्रण नहीं कर पाये। केवल दुख किया। मन-ही-मन सोचा कि सुन्दरी बहू पाने पर पुलिन आदमी बन जायेगा, मूर्ख पुलिन बुद्धिमान् हो जायेगा, घर-द्वार समझेगा-बूझेगा।

रामदास पुलिन के लिए विवाह योग्य कन्या खोजने लगा।

सौरभी वैष्णवी ने आ कर कहा—तो महन्त ! मेरी बेटा मजरी के साथ पुलिन का विवाह क्यों नहीं कर देते ? दोनों ही वचपन के साथी हैं, मेल-जोल भी है खूब—

रामदास ने कहा—राधे, राधे, वह भला कैसे हो सकता है, सौरभी ? हम लोग ठहरे जन्मजात वैष्णव, तुम लोग 'भेखदारी'।

सौरभी थी धोबी की लड़की, वेप से वैष्णव हुई है। उस की लड़की के साथ भतीजे का विवाह रामदास को नहीं रचा। नहीं तो सौरभी की बेटा मजरी सुन्दर थी, नजर लग जाये ऐसी लड़की। परन्तु तनिक चुलबुली, मदमाती-सी। उस की देह में जैसे तरंगें उठती हैं, बातचीत करते-करते हँसी का स्रवण फूट पड़ता है। हँसने पर उस के गोल गालों में गड्ढे पड़ जाते, खड़ी होती है वह तिरछी गर्दन कर के। नाक पर रसकली^१ बनाती है, जूड़ा बाँधती है केशों का, बोलने की शैली भी न जाने कैसी बौकी। लोग पता नहीं क्या-क्या कहते, लेकिन वह उस पर कान नहीं देती। नदी की छाती को लोहे से काटने-धीरने पर भी उस पर निशान नहीं पड़ते, उस का प्रवाह बन्द नहीं होता। ऐसी थी रसकली।

मजरी पुलिन से चार वर्ष छोटी, पुलिन की बाल्य-सचहरी। दोनों जने की छनती भी है खूब। पुलिन समय-असमय मजरी के घर जाता, मजरी आदर सहित अभ्यर्थना करती। उस का मुखड़ा दमक उठता, रसोच्छला और भी चंचला हो उठती।

१. वैष्णवी स्त्रियाँ और वैष्णव पुरुष नाक के शर-बार, चन्दन से जो निगान बनाते हैं।—प्रभाकर।

पुलिन कहता—क्यों री, रसकली, क्या कर रही हो ?

दोनों ही जने नाक पर रसकली रचा रहे हैं ।

मंजरी मुसकरा कर कहती—

सयत्न, तुम्हें इस अंग पर, आँक रही हूँ ।

पुलिन इस बात का उत्तर नहीं दूँड पाता ।

मंजरी की माँ मुसीबत के समय कहा करती—देख तो मंजरी, दो रुपये किसी से मिल सकते हैं, नहीं तो तेरे छड़ूए बन्धक रखने होंगे ।

मंजरी कहती—मैं अपने छड़ूए बन्धक पर नहीं दूँगी, तुम रुपये ला दो कही से ।

पुलिन अन्त-व्यस्त सा हो कर कहता—यह क्या, रसकली की माँ, उस के छड़ूए बन्धक दोगी ? मैं रुपये ला दे रहा हूँ ।

अपने चाचा के तम्बूक से या वहाँ नहीं पाने पर चावल बेच कर पुलिन रुपये ला देता ।

फिर कभी-कभी मंजरी पुलिन का हाथ जोर से पकड़ कर कहती—नहीं, नहीं, तुम नहीं दे सकते, वह सब माँ की चास्ताकी है ।

माँ-बेटी में झगडा होता, पुलिन जैसे परेशान सा हो उठता । लेकिन मंजरी कहती—छबरदार ! कुट्टी कर लूँगी ।

दस साल की ही उम्र में मंजरी का एक बार विवाह हो गया था लेकिन दूल्हा मंजरी को पसन्द नहीं आया । मंजरी ने उसे अस्वीकार कर दिया था । यह बेचारा कई बार मंजरी के पास दौड़-दौड़ कर आया । लेकिन निराश हो कर उसे दूसरी जगह शादी करनी पड़ी । मंजरी को उस ने बदल दिया ।

कई कारणों से रामदास सौरभी की बात टालते रहे ।

रामदास ने सौरभी को लौटाया तो सौरभी ने पुलिन को वापस करते हुए कहा—बेटा, मेरी सड़की जवान उम्र की है । तुम अब मत आया करो । बीस ही दम आदमी दस तरह की बातें करते हैं । मन में सोचा था कि तुम दोनों बचपन के साथी हो, दोनों का गठबन्धन देख कर आँखें जुड़ा लूँगी, लेकिन तुम्हारे चाचा तो विवाह के लिए राजी नहीं होते । मुझे तो अपनी बेटी ब्याहनी होगी ।

यात पुलिन को बहुत गहरी लगी। उस ने दो दिन भोजन नहीं किया, सोया नहीं, खेतों-भैदानो घूमता फिरा।

रामदास अन्त में राजी हो गया—ठीक है, मंजरी के साथ ही पुलिन का विवाह हो।

समय ठीक हुआ होनी का। रामदास के श्रीवृन्दावन से लौटने पर यह विवाह होगा, यही तय हुआ।

लेकिन ऊपर वाले की मशा थी कुछ दूसरी।

वृन्दावन में हठात् एक दिन रामदास की भेंट खोयी हुई श्रीमती से हो गयी। उस वक़्त श्रीमती हैजे के कारण छटपटा रही थी। पास में बारह-तेरह साल की लड़की गोपिनी बैठ कर पुष्पा फाड़ कर रोये जा रही थी।

स्त्री की ददंभरी चीखों और बच्ची की हलाई से दयावश रामदास आगे बढ़ कर रोगिणी के पास बैठा, एकाध क्षण उस की ओर निहार कर सस्नेह पुकारा—श्रीमती !

हैजे के दर्द से तड़पती श्रीमती रामदास के मुँह की ओर ताक कर, फफक-फफक रोने लगी। रामदास ने अपने उत्तरीय के छोर से उस की आँखोंकी कोर पोछ दी। श्रीमती ने रामदास के दोनों पैरों को जोर से पकड़ कर कहा—जाते समय मुझे अपने पैरों की धूलि दो। इस लड़की को ग्रहण करो। बड़ी अच्छी लड़की है, माँ की तरह नहीं। हो सके तो पुलिन के साथ विवाह कर देना। डर नहीं है, अजात लड़की नहीं है यह। वही, उस बाउल प्रेमदास की याद आती है तुम्हे ? वह भी वैष्णव है, उसी की है लड़की।

रामदास ने कातराद्रं स्वर में कहा—श्रीमती, राधारानी, मैं तो तुम्हारे ही लिए आज भी सूना घर बसाये बैठा हूँ।

श्रीमती ने इस बात का कोई भी उत्तर नहीं दिया, केवल अपनी पुत्री गोपिनी से कहा—बेटी, ये ही तेरे बाप हैं, इस के साथ जा, मुझ से भी अच्छी तरह से रखेंगे तुम को। और एक बात गोपिनी, याद रख, कभी भी पति को मत छोड़ना। वैष्णव हूँ, नियम-धर्म भले ही हों उस में, पर उस में सुख नहीं है।

श्रीमती को वृन्दावन में प्रवाहित कर के, गोपिनी को साथ ले, रामदास घर वापस आया ।

सौरभी को बुला कर, पहले एचाम, फिर एक सौ, अन्त में दो सौ रुपये उस के हाथ पर रख कर, रामदास ने कहा—भुज्जे बरी करो मेरे बादे से ।

खूंट में एक मुट्ठी भर रुपये बाँध कर सौरभी हँसती हुई घर वापस आयी ।

सौरभी ने मंजरी के लिए बर ठोक किया परन्तु मंजरी ने कहा—नहीं ।

अन्त में क्रोधित हो कर माँ रामदास के रुपये ले कर वृन्दावन चली गयी ।

मंजरी दो दिन रोती रही, फिर अपने को बटोरा उस ने, फिर हँसी वह । रसकली लगाती रही, लेकिन विवाह नहीं किया उस ने ।

इधर पुलिन के साथ गोपिनी का विवाह हो गया । पुलिन पर से जैसे मंजरी का नशा उतर गया । वह रात-दिन घर के भीतर ही रहता—यह देख कर रामदास को सुख की हँसी आयी । मंजरी दो-चार दिन पुलिन की प्रतीक्षा करती रही, अन्त में एक दिन जड़ा बाँध कर, नाक पर रसकली बना कर, पान चवाते-चवाते रामदास के घर आ पहुँची । रामदास तब घर में नहीं था, बाहर बरामदे में खड़ी हो कर, बन्द दरवाजे की ओर ताक कर ही मुसकरा कर मंजरी ने आवाज दी—भयों रसकली, अरे, दुल्हन तो दिखाओ ।

पुलिन घर में गोपिनी के साथ बात-चीत कर रहा था, मंजरी की आवाज सुन कर वह दूसरे दरवाजे से निकल भागा । गोपिनी घर में ही मुँह नीचे किये हुए खड़ी रही । मंजरी घर में जा कर गोपिनी का घूँघट खटाते हुए होंठों की बिचका कर बोली—तुम दुल्हन ?

गोपिनी ने उस की ओर निहारा ।

मंजरी फिर बोली—तो, हाँ, दुल्हन, तुम्हें रसकली ने पसन्द किया है ?

गोपिनी इस बार जैसे बिजोटी काटती हुई बोली—नहीं ।

मंजरी बोली—वाह, मैना तो बोल रही है खूब । तो हाँ, दुल्हन, क्यों नहीं पसन्द हुई, कुछ जान सकी हो ?

गोपिनी ने फिर उसी चिकोटी काटने के ही स्वर में कहा—मैं रसकली लगाना जो नहीं जानती, इसी से ।

मंजरी सब कुछ समझ गयी । इस बार हँस कर आश्चर्य की मुद्रा में गाल पर हाथ रख कर बोली—हाय री अम्मा, इसी से क्या ? तो मुझ से रसकली लगाना सीखोगी दुल्हन ?

—सिखाओगी ? देखो, ठीक तुम्हारी ही तरह होना चाहिए ।

—हाँ, सिखाऊँगी । लेकिन धीरज रख सकोगी तो ?

—हाँ, रख सकूँगी । तुम्हारे पास समय कहाँ से होगा ? मैं कहती हूँ, रसिकों से तुम्हें छुट्टी मिलेगी तब तो ?

—मेरे रसिकों की बात छोड़ो, वे तो अक्सर भी आ कर समय दे सकते हैं पर तुम्हारा रसिक तो एक क्षण भी तुम्हें नहीं छोड़, पाता, देख रही हूँ ।—मंजरी ने कहा ।

—वह तो दो दिन की बात है, अभी तो नरम-नरम सोआ-पालक का साग है री, बाद में बूढ़ा बैल ठीक जगह ही जा कर चरेगा, डर की बात नहीं है ।

मंजरी ने थोड़ा झलक कर सीलेपन से कहा—तो भाई, बूढ़े बैल को बांध रखो, बस, जिस के पास पगहा नहीं हो तो उसे बैल पालने का शौक क्यों ?

गोपिनी भी झुंझला कर इस बार बोली—थोड़ा रहने पर क्या चाबुक की कमी होती है, री, नहीं । जब बैल पाल रखा है, तब पगहा क्या नहीं जुटेगा ? मैं कहती हूँ कि साड़ी तो है, आँचल से बाँधूँगी ।

—अगर तोड़ कर भाग जाये तो ? मंजरी ने हँस कर कहा ।

—इस्स, उस के बूते की बात नहीं ! गोपिनी बोली ।

मंजरी ने कहा—देखो ।

गोपिनी ने उसी दाम्भिक स्वर में कहा—तब नहीं होगा तो पटे आँचल को गले में डाल कर झूल पड़ूँगी, लेकिन अभी तो जिन्दे ही उसे गढ़े में डबेल नहीं सकती ।

इस के बाद मजरी ने बातें नहीं कीं । अचकचा कर ही जैसे घर वापस आयी । तब उस के मुँह पर हँसी नहीं थी । डबडबाये पनले बादर सा हो गया था चेहरा ।

दूसरे दिन से ही मजरी के घर पर पुलिन का आदर जैसे बढ़ गया । आदमी भेज कर उस ने पुलिन को बुलवाया । उस की सज्जा उड़ चुकी थी । अब पुलिन के गाँजे के अङ्ग्रे पर मजरी धरना नहीं देती । पुलिन के साथी बलाई को देख कर उदासीन भी नहीं होती । अब तो जैसे बात-बात पर बुलकी सी पड़ती है । पान देती है । पुलिन ने फिर घर छोड़ दिया, पहले की तुलना में मजरी के घर पर उस ने और ज्यादा बैठक-बाजी शुरू कर दी ।

मजरी बीच-बीच में यह भी कहती—

रसकसी, यह तो अच्छा काम नहीं हो रहा है ।

पुलिन मूर्खों सा कहता—क्या ?

मजरी मुसकरा कर कहती—अरे यही मेरे घर में ऐसे चौबीसों घण्टे पड़े रहना ।

पुलिन उसी तरह से पूछता—क्यों ?

मजरी सस्वर गाने लगती—

'पाँच चवन्नी की है तेरी वृष्णवी

अरे हो गये नाराज, हो गये नाराज !'

पुलिन कहता—घट् ।

गोपिनी इस बार सचमुच ही नाराज हुई । लेकिन इन नाराजी को तोड़ता कौन ? जिस के ऊपर मान—उमी ने उस मान के ऊपर राख डाल दी । वह पाने की बेर आता, दस आदमियों के हँसी-ठट्टे का विषय बन कर सौट जाता, मजरी के घर पर बैठक जमाता, घर का खर्चा-पैसा तक मजरी के घर में दे देता । मजरी को सोने की निया बन रही है शामद—यह जान कर गोपिनी जल-मुन गयी । पुलिन जो दो-चार बातें भी करता, वे मजरी के उल्लेख से भरी होती । उस दिन बात ही बात में पुलिन ने मामूलियत से कहा—

मजरी तुम्हें क्या कहती है, जानती हो ? गोपिनी नहीं, साँपिनी ।

सो तो सचमुच ही हो तुम । हर बात में फुफकारती रहती हो ।

गोपिनी एक जलती-तीखी नजर से उस की ओर ताक कर बाहर दौड आयी । रात गये दो घड़ी तक बाहर वह रोती रही । रोते-रोते याद आया कि उस ने कहा था—यदि आँचल फट जाये तो फटे आँचल की डोरी बना कर फाँसी लगा लूंगी उद्घ्रान्त व्यथाहता नारी सचमुच ही आँचल फाड़ कर डोरी बनाने लगी । घर में पुलिन तब धोडा बेच कर सो रहा था, शायद रमकली का स्वप्न देख रहा था ।

बगल के कमरे में दरवाजा खोल कर बूढा महन्त बाहर आया । श्वेतवस्त्रा गोपिनी को देख कर अचम्भे में आ गया वह, कहा उस ने—कौन ? कौन ? यह क्या बेटी, बाहर क्यों, मेरी बेटी ?

गोपिनी फफक कर रो पड़ी । बूढ के स्नेह-स्पर्श से उस के हाथों बनायी हुई आँचल की रस्सी खुल कर भिर पड़ी ।

महन्त ने गोपिनी को अपनी छाती से लगा रोते हुए कहा—बहू माँ, इस बूढे बेटे के मुँह की ओर देख कर धीरज धरो । मैं आशीर्वाद दे रहा हूँ—तुम्हारा भला होगा, भला होगा ।

पुलिन के इस दुर्ग्यवहार से शान्त, स्नेह-दुर्बल बूढ को मर्मन्तिक पीड़ा हुई । फाँटोर होने की चेष्टा की बूढे ने । रुपये-पैसे देने से मुट्ठी सिकोड-सी, बात-चीत बन्द कर दी, लेकिन जो पुलिन था, वही पुलिन रहा । अन्धे के लिये जैसे रात, वैसे ही दिन ।

केवल मजरी के घर में बैठा, बलाई के साथ, अपने चाचा की उम्र के दिन गिनने लगा ।

लेकिन रामदास जीना चाह रहा था । भीतर से मरा हुआ था वह, किन्तु जीना चाह रहा था गोपिनी के लिए । सदैव उसे यह लगता कि उस के मर जाने पर गोपिनी का क्या होगा ?

लेकिन आदमी अमर नहीं है । मरने का परवाना वह पैदाइश के साथ लिये आता है । एक दिन रामदास की भी पेशी हुई । महन्त को उम्र हो चली थी, दमे का मरीज था वह । यकायक एक दिन दमा मृत्यु के रूप में उस की छाती पर आ सवार हुई ।

गोपिनी आँसू ढरकाती हुई सेवा करने लगी । पड़ोसी भीड़ जमाये हुए

बैठे हैं। कोई कहता—महन्त, हरि बोलो, बोलो जय राधारानी !
राधारानी के जय-गान में चिर-मुखर चारण-कण्ठ इस समय जै
राधारानी का ध्यान नहीं कर पाया। मायाच्छन्न राजा भरत की तरफ
सिफं कहा—माँ गोपिनी, कुछ नहीं कर पाया माँ !

गोपिनी अन्त में पछाड़ खा कर गिर पड़ी। हाय, उस का नीड़ जो
उजड़ा जाता है ! भ्रष्ट नीड़ विहगिनी रोने के अतिरिक्त और क्या कर
सकती है ? टोले-मुहल्ले की स्त्रियाँ दूर खड़ी थी, लेकिन कोई गोपिनी को
पकड़ने का साहस नहीं कर सका। बूढ़ा रोगी, कब आखिरी साँस दूट
जायेगी, मरने के पहले, कम-से-कम सूचना भी नहीं देगा कि हम लोग
भजन कर लें। मृतक को दूँ कर भला कौन अशुचि होगा ?

पकड़ा अन्त में एक जने ने। वह थी मंजरी। आते ही शोक विह्वला
गोपिनी को मजरी ने पकड़ लिया। बोली—डर क्या ?

मरणासन्न महन्त एक लम्बी साँस फेंक, उखड़े-उखड़े स्वर में बोला—
यहाँ गाँव के पाँच आदमी हैं, मैं अपनी अन्तिम इच्छा प्रकट करता जाऊँ—
मेरा समस्त स्यावर सम्पत्ति की मालकिन हुई गोपिनी, और सभी से मेरी
यह भीख है कि लड़के को उस देखा के हाथों से बचा दो।

दस बात पर सभी की नजर मजरी की ओर जा ठहरी। सभी ही सोच
रहे थे कि वह कैसे बैठी है अब तक ! लेकिन मजरी बड़ी निश्चिन्तता से
गोपिनी की धीली-ढाली काया को समेट-बटोर कर बैठी थी, बैठी ही रही
वह, तनिक भी उद्विग्नता नहीं आयी उस में।

महन्त ने जब यह बात कही थी, पुलिन भी तब वहीं था, उस ने भी
यह बात सुनी।

इस बात ने आज पहली बार चोट की उस पर, मान-अपमान का
स्वाद शायद पहली मर्तवा समझा उस ने।

सोच तब महन्त की आखिरी इच्छा की आलोचना-ममालोचना में
ब्यस्त थे। पुलिन दरवाजे से बाहर निकल पड़ा, किसी की नजर नहीं पड़ी,
लेकिन मजरी ने पुकारा—जा कहाँ रहे हो ?

पुलिन ने कहा—अब इस घर में नहीं।

मजरी बोली—छि, यही है क्या तुम्हारे नाराज होने का वक्त ?

आओ, चाचा के मुँह में जल डालो, कान के पास भगवान का नाम सुनाओ ।

टोले-मुहल्ले के सभी लोगो को, इस बेहया स्त्री की सीमाहीन निर्लज्जता से जैसे काठ सा भार गया, सभी उस का मुँह निहारने लगे । द्विषों ने गाल पर हाथ दिया—हाय राम ! पुलिन ने भी मंजरी की ओर देखा, इस के बाद धीरे-धीरे चाचा के सिरहाने की ओर बैठ कर, मुँह में गंगा-जल दिया उस ने, फिर जोर से कहा—बोलो चाचा, जय राधा-रानी !

बूबा बोला—जय राधारानी ! दया करो माँ, अनाथिनी, दुखिनी पर कृपा करो माता !

अठ्ठाई पहर दिन ढले रामदास मरा, अन्त्येष्टि क्रिया समाप्त होते-होते एक पहर रात बीत गयी ।

तब मजरी ने गोपिनी से कहा—अच्छा, तो मैं अब चलूँ ?

गोपिनी बोली—अच्छा ।

मंजरी ने चारों ओर देख कर सरल भाव से ही कहा—मालिक कहाँ ? अकेली रहने पर डरोगी तो नहीं ?

गोपिनी को लगा कि मजरी उस में ठूठा कर रही है । उस ने उत्तर दिया—आना-जाना ही जब अकेले है तो अकेली रहने पर डर लगने से भला कैसे चलेगा ? और प्रायः अकेली ही तो रहती हूँ ।

मंजरी ने बिना घात बढ़ाये कहा—लेकिन भाई, मैं तो अकेली नहीं रह सकती थी ऐसी हालत में ।

गोपिनी बोली—मैं अगर अकेली नहीं रह पाती तो गले में फाँसी की डोर लगा लेती, लेकिन—

मंजरी ने इस बार जरा झुंझला कर उत्तर दिया—वाह, कहने से ही हुआ क्या ? मरूँगी क्यों ? अच्छा चलूँ भाई, लेकिन रसकली गया कहाँ ?

गोपिनी क्रोध से पागल हो बोली—रसकली तो नाकपर ही है, घर पर जा आइने में देखो, तुम मुँह-झाँसी के चेहरे पर ही झलक रहा है ।

मंजरी इस ओचक आघात को नहीं सहन कर सकी । बहुते कष्ट के साथ उस ने अपने को सँभाला लेकिन आखिरी वक्त जबाय देते समय

कह ही दिया—रसकली तो अपनी नाक पर ही रहती है दुल्हन, इसे छीना नहीं जा सकता ! हाँ, तुम अगर चाहती हो तो मैं देने की कोशिश करूँ ।

गोपिनी फुँफकार कर बोली—क्या कहा तुम ने ? तुम से मैं भीख नहीं चाहती, नहीं चाहती । जाओ, जाओ तुम ।

एक ही साँस में ये बातें कह कर, भीतर घर में जा मजरी के सामने ही उस ने घड़ाम से दरवाजा बन्द कर लिया ।

मजरी धीरे-धीरे घर लौटी । उस की छाती में जैसे आग जल रही थी । साँपित का इतना विष ! अपने ही विष से अभागी अपने आप मरे !

अपने घर में प्रवेश करते ही मजरी ने देखा कि पुलिन उस के दरवाजे पर बैठा हुआ है ।

मजरी की सारी देह को छूनी हुई एक लहर तैर गयी, हँसी से उस का चेहरा भर उठा ।

पुलिन ने खड़ा होते हुए कहा—रसकली !

मजरी ने हँस कर कहा—बैठो, मैं कहती हूँ ।

पुलिन बैठ गया ।

घर का ताला खोलते-खोलते मजरी बोली—रसकली, तुम भाई बड़े भाग्यवान् पुरुष हो, स्त्री के भाग्य से घन पा रहे हो ।

पुलिन ने क्रोध से ही कहा—वह धन मेरे लिए बैसे ही है जैसे भँसुर के लिए छोटे भाई की परनी को छूना भी पाप ।

मजरी ने ज़िलखिला कर हँसते हुए कहा—और दुल्हन ? क्यों, चुप क्यों हो गये जी ? जवाब नहीं दे सके न ? अच्छा, तो मैं ही बता दूँ वह है तुम्हारे गले की माला, तुम्हारे होठ की हँसी ।

पुलिन बोला—नहीं, रसकली, नहीं जनी तेरी बात, वह है मेरे गले की फाँसी । हँसी नहीं कर रहा हूँ रसकली, एक बात तुम्हें बताने आया हूँ कि मैं कल से अपने घर रहूँगा । अब उस घर में नहीं रहूँगा ।

अपने घर से तात्पर्य है पुलिन का पैतृक घर । वास्तविक आँखों से देखते पर तो घर जैसे मूर्त भयानकता का रूप हो, लेकिन कल्पना में वह सुन्दर, चबूतरानुमे जमीन पर बनेंते फूलों से घिरा हुआ, पहारदीवारी की

सीमा तोड़ कर निःसीम आकाश में अपने को मिलाता हुआ सा, घर के भीतर भी चाँदनी आँखमिचौनी खेला करती ।

मंजरी ने कहा—ठीक, यह तो अच्छी बात है, कैसे खाओगे पर ?

पुलिन ने चट से जवाब दिया—वैष्णव का लड़का हूँ, भीख माँग कर खाऊँगा ।

मंजरी बोली—और भी अच्छी बात है, लेकिन भीख में तो मिलता है ; चावल, कौन पकायेगा भात ? बहू को साथ लिये जाओ ।

पुलिन ने जोरदार विरोध में गरदन हिलाकर कहा—नहीं ।

मंजरी बोली—क्यों ? और तुम्हारे नहीं लिवा जाने पर भी यदि वह तुम्हारा साथ न छोड़े तो ?

पुलिन ने कहा—साथ नहीं छोड़ेगी ? मार के आगे भूत भागता है, यह जानती हो ? कहावत भी है—मान गये तो दूध-शक्कर, नहीं तो ले फिर लकड़ !

मंजरी बोली—बिलकुल ठीक । रसकली मेरा कहता ठीक ही बात है । लेकिन यह तो ठीक वैसी बात हुई जैसे उस तरफ धान की बालियाँ पकी और इत्तर लंका का रावण चट से मर गया । सो जो हुआ सो हुआ, आज तो रात भर के लिए घर जाओ ।

पुलिन ने कहा—नहीं, और नहीं ।

मंजरी ने परिहास-छल से ही कहा—तो आज की रात पाल-पोखरे के बरगद पर ही काटोगे क्या ?

पुलिन बोला—नहीं, तुम्हारे दरवाजे पर ही पड़ा रहूँगा ।

मंजरी हँसी । दो और दो मिल कर चार हुए—यही बात जो नहीं समझता, अगर वह चार का महत्त्व नहीं समझे तो उस के ऊपर शीघ्र करने से क्या लाभ ?

फिर भी वह बोली—सोच क्या कहेंगे ?

पुलिन बाहरी दरवाजे की ओर फिरा ।

मंजरी ने कहा—चले कहाँ ?

पुलिन ने उत्तर दिया—देखूँ कहीं भी ।

मंजरी ने आ कर उस का हाथ पकड़ते हुए कहा—नहीं, जाओगे नहीं,

आओ, सोओगे आओ ।

पुलिन ने चिन्तित स्वर में कहा—नहीं, नहीं, लोग क्या कहेंगे ?

मजरी बोली—जो कहना था—उसे तो लोग कह ही चुके, अब और क्या कहेंगे ? सुना नहीं तुम ने, आज ही तुम्हारे चाचा ने कहा—‘उस...’।

पुलिन ने उस का मुँह दबा कर कहा—तुम्हारे पैरो पड़ता हूँ रमकली, छि, वे बातें तुम मत कहो ।

मजरी ने हँस कर धीमे स्वरों में गाना शुरू किया—

‘लोग कहते हैं कृष्ण-कलकिनी हूँ,

सखि, मैं तो उसी गर्व से गर्विता हूँ ।’

पुलिन ने उस का हाथ जोर से पकड़ लिया । उस के स्पर्श में कितना उत्साह ! मजरी ने मोठे झटके से अपना हाथ छुड़ा कर शांत मधुर कंठ से कहा—छोड़ो, बिछोना कहूँ ।

साक-मुयरा लकड़क कमरा, साल-मिट्टी से लिपा-पुता, रंग-बिरंगी अल्पना से चित्रित छत, दीवारों पर कुछ पुराने ढर्रे के पट-चित्र—गौराग महाप्रभु, जगन्नाथ, राधा-कृष्ण, सभी के पाँवों में चन्दन पुता हुआ । फर्श पर एक तरुणपोश, एक तरफ ऊँची वेदी पर झकझकाते बर्तन सजे हुए ।

तरुणपोश के ऊपर मोड़-तहा कर रखे हुए बिछौने को बिछा कर, एक छोटी चौकी पर दूसरे बिछौनों के ढेर में से एक सुजनी निकाल कर पुराने बिछौने के ऊपर उस ने बिछा दिया । सुजनी मजरी के अपने हाथों काड़ी गयी थी, अद्भुत कारीगरी का नमूना थी वह सुजनी । बिछौने को इधर-उधर घुमा-फिरा कर फिर उसे बुलाया—आओ ।

पुलिन धर में आ कर तरुणपोश पर बैठ गया । उस ने देखा कि मजरी अपनी उसी तिरछी-बाँकी मुद्रा में खड़ी है—वह हँसी, वही सब कुछ, केवल दृष्टि में कुछ नवीनता है । वह तब मुग्ध, आविष्ट, एकाग्र थी ।

पुलिन ने सन्तुष्ट भाव से गद्गद वाणी में कहा—रसकली !

मजरी जैसे सोते से जाग कर बोली—क्या ?

पुलिन ने कहा—तुम...तुम...मेरी...मेरी...मेरी...

यात पूरी नहीं कर सका पुलिन, प्रत्येक बार ही अटक जाता और पुलिन सज्जा में लाल हो उठता ।

मंजरी खिलखिला कर हँसते हुए बोली—तुम्हारी...तुम्हारी...
क्या जी ?

फिर सहज कीतुक-भाव से गरदन तिरछी किये हुए, थोड़ी देर तक पुलिन के सज्जित मुख के ऊपर उजली दृष्टि डाल कर, मंजरी ने अपना मुँह पुलिन के कान के पास ले जाकर कहा—मैं तो तुम्हारी ही हूँ ।

यह कह कर वह चट से घर के बाहर हो गयी, छोटे-से त्वरित क्षरने की गति की तरह । बाहर जाते ही दरवाजा खींच कर उस ने साँकल चढ़ा दी । एक झोका दक्षिण की बयार आ कर जैसे पुलिन को तृप्त करते हुए, उसे रस से सराबोर करते हुए चली गयी ।

साँकल चढ़ा कर आँखल से मुँह पोछते-पोछते वह ढंकी-घर में आ कर अपना आँखल बिछा कर सो गयी ।

रात को पुलिन आया नहीं, एक पहर रात बीत गयी, सब भी नहीं दिखा । गोपिनी उसे अगोरती रही थी, सहसा उस प्रतीक्षा के भाव को झाड़-पोछ कर वह उठी, नहा-घो कर उस ने रसोई चढ़ा दी ।

उद, शब्द हुआ, शायद वह आया । मान भरी विकल दृष्टि को उस ने कड़ाही में आवद्ध किया, हाथ की कलछल आवश्यकता से अधिक घूमने लगी—खन्-खन्-खन् ।

लगा कि पुकार रही है वह—अरी ओ साँपिन !

पालतू बिल्ली दरवाजे पर कूद पड़ी—म्याऊँ-म्याऊँ-म्याऊँ !

दृष्टि नहीं मानी, सौटी, लेकिन कहाँ ? सूना आँगन, उड़काया हुआ दरवाजा—इन से कहीं आदमी की गन्ध तो नहीं आयी ।

हाथ की कलछल की जोर से बिल्ली की पीठ पर मार कर गोपिनी ने गाली दी—निकल, निकल, निकल जा आफत कहीं को !

कितनी देर हुई—गोपिनी को लगा कि एक युग बीत गया ।

हठात् बाहरी दरवाजा खोल, बत्ताई चौखट पर आ कर बैठ गया । हाथ का हुक्का पीते-पीते उस ने कहा—मुना है मितनी, कल रात को भीत तो मंजरी के घर—

बत्ताई पुलिन का मित्र है, इसी से गोपिनी को कहता था—मितनी,

गोपिनी उसे कहती थी—भीत ।

गोपिनी ने कहा—सुना नहीं, पर जानती हूँ ।

बलाई बोला—अब अपना घर साफ़ हो रहा है, वही रहेगा, इस घर में नहीं रहेगा ।

एक लाज छिपाने के लिए और पाँच लाज सिर पर डोनी पड़ती है । गोपिनी ने कहा—मैं रहने नहीं दूंगी, यह मैं ने कल कह दिया है, घर में आने पर झाड़ू से बात करूंगी ।

बलाई ने जानकार की भाँति गरदन हिला कर कहा—ओह, तभी इतना सब ! और सुना कि मजरी को चारिस बना रहा है वह !

छाती पर परपर दे कर भी आदमी उफ-आह कर सकता है पर इस बात ने गोपिनी के ऐसे मामिक स्थान पर चोट किया कि वह कुछ बोल नहीं सकी ।

बलाई ने कहा—कल रात में जमींदार गाँव में आये हुए हैं, तुम नालिश करो ।

गोपिनी ने तीव्र प्रतिवाद के स्वर में कहा—नहीं !

इस के बाद दोनों ही नीरव, गोपिनी के हाथ की कलछल नहीं हिलती, आँखें कड़ाही पर, लेकिन दृष्टि जैसे कहीं अन्ध, अपसक निमिष ।

बलाई मन ही मन कुछ सोच रहा था, आखिरकार दलाली के स्वर में जरा रसीला पुट दे कर बोला—उम बंदमाश बंस की तुलना में सीघ्रा-मादा ग्वाला ही ठीक है ।

इस के बाद फिर दृक् पर दम लगाया फड़र-फड़र । घर गाल घुमा छोड़ कर कहा—हम सोंगो में तो भासा टूटने पर उसे फिर से गूँघने का रिवाज है । मात रहने पर मला क्या कीओ का अभाव होता है, बोली मितनी ! मैं हूँ ही, सब ठीक कर दूँगा तुम्हारा ।

अन्त में सम्मति की आशा में गोपिनी के मुँह की ओर ताका ।

गोपिनी ने किसी बात का उत्तर न दे कर घर के भीतर जा, दरवाजा बन्द कर लिया । रसोई चलने लगी ।

पुलिन हाथ में कुदाल से कर घर साफ़ कर रहा था । पसीने के मारे तर-ब-तर, माथ की नखें टन्-टन् करने लगी थीं, हाथों में फफोने, पर काम

तो खत्म करना ही है। औरत जात की गुलामी ! छिः ! इम से बड़े शर्म की भला क्या बात होगी ?

बलाई ने आ कर कहा—अच्छे तो हो मीत ?

पुलिन ने कुदाल नीचे रख कर कहा—चिलम मे कुछ है ? हुक्का नहीं, अशौच है मेरा ।

बलाई ने हुक्के से चिलम निकाल कर पुलिन को थम्हाया । धतूरे के फूल की आकार वाली चिलम की पेंदी पर हाथ बाँध कर पुलिन ने कश खीचा—हुश-फूँ-हुश-हुश ।

बलाई ने कहा—तो एक काम क्यों नहीं किया मीत ? जमींदार आये है, उन के पास एक बार बात करने मे क्या नहीं होता ? तुम्हारा तो है अपने बाप का सगा भाई यानी चाचा और उस का तो बस धर्म-पिता । वारिम तुम हुए । वह लडकी इस जायदाद की क्या होती है ? बल एक बार तू, जरा देख तो सही, तेरी सम्पत्ति तेरी ही हो जायेगी ।

अद्भुत है पुलिन । विचित्र है उस का लौकिक बोध । उस ने कहा—उस का क्या होगा ?

बलाई ने कहा—तेरी बहू है, तू देगा उसे भोजन-वस्त्र ।

पुलिन ने कहा—नहीं, नहीं, मैं तो रसकली को—

बलाई ने उत्साह से कहा—रसकली को तू वारिम बनायेगा, वह चूल्हे-भाड में जामे—जो मन मे आये वह करे । तेरा क्या ?

लेकिन यह तो अमानवीय हुआ, हजार भी हो क्यों न, पर है तो वह पत्नी ! पुलिन का मन ऐंठने-उमड़ने लगा । पहले उसके मन में था कि अपने इस प्राप्य सम्पत्ति के एवज मे वह गोपिनी से अपने को मुक्त कर लेगा ।

पुलिन ने कहा—नहीं मीत, यह नहीं हो सकता ।

—जैसे देवता, वैसे देवी ! बलाई धीज में उठ कर जमींदार की बचहरी की ओर चल पड़ा ।

पुलिन टूटे दरवाजे पर बैठ कर सोचने लगा ।

जमींदार के पछाह धपरासी ने आ कर टूटे कसि के दरख्त की मो आवाज में कहा—अरे ओ पुसिया, आ, आ, चाबू चुला रहे हैं ।

पुलिन ने चौंकते हुए कहा—क्यों, क्यों, कैसे दरवान जो ?

धपरासी ने कहा—सो हामि जाने ना ।

जमींदार की कचहरी में आ कर पुनिन ने प्रणाम किया ।

बाबू फर्शों में सम्बाकू पी रहे थे । सुमाशता कलम धसोट रहा था । कई मातबर लोग इस तरफ बैठे हुए थे, उस तरफ छाती तक घूंघट काटे बैठी थी सज्जिता गोपिनी ।

बाबू ने कचहरी के लोगो और पुनिन को सुना कर कहा—वह हरामजादी कही है ?

बैठे हुए तठैत रायाल ने कहा—वह नहा रही है, आती ही हैं ।

पुनिन को बाबू ने कहा—पुनिन, तुम्हे अपने चाचा की सम्पत्ति छोड़नी होगी ।

पुनिन अस्त-व्यस्त हो बोला—सम्पत्ति तो उसी की ही है, मेरी नहीं ।

हाथ जोंड कर उस ने गोपिनी की ओर जँवली से इशारा किया ।

बाबू बोले—वही हुआ तो, वही हुआ । पति और पत्नी । मुंह रहते नाक से भला कौन खाता है रे ? तुम्हारे रहते वह सम्पत्ति का कौन होती है ? उसे कैसे मिली यह भित्कियत ? बोली जी, चुप रहने से नहीं चलेगा ।

अन्त में गोपिनी भूदु कण्ठ से बोली—जी, वे मुझे दे कर गये हैं ।

—तुम्हें ही तब पारिज करना होगा, पाँच सौ रुपये लगेंगे ।—
बाबू बोले ।

पुनिन ने कहा—जी, वह स्त्री है—

बाबू पटककर बोले—तू चुप तो रह बेदा ! बोली जी, हाँ, सुन बोली, फिर चुप लगा गयी जो, पाँच सौ रुपये चाहिए मुझे ।

भूने बटोही काँ जो रास्ता दिया दिया जाये, वह उसी पर चलता है । किर्तनस्यविभूता गोपिनी ने पुनिन की ही बात को पकड़ कर कहा—
जी, मैं तो स्त्री—

बाबू बोले—अरे, सम्पत्ति तो स्त्री नहीं । अच्छा, नहीं दे सकती तो यह सम्पत्ति तुम पुनिन के नाम कर दो ।

पुनिन ने मबर कर कहा—नहीं !

गोपिनी भी बोली—नहीं । बाबू बिफर कर बोले—अच्छा, तब सम्पत्ति सरर में उल्ट होगी । और हाँ, पुनिन, तुम बेदा उन मजदूरी को से

कर गाँव में इतना घूरते-फिरते हो ? वह सब नहीं चलेगा । परिवार के ही साथ रहना होगा ।

स्थान-काल के ज्ञान से विहीन गोपिनी ने पुलिन को चुप देख कर हाथ हिला कर कहा—नहीं ।

गला फाड़ कर विरोध में ज़मींदार बाबू चीखे—चुप रहो हराम-जादी ! उस पुलिन के ही साथ तुझे रहना होगा ।

डर के मारे गोपिनी रो उठी ।

ठीक उसी समय मंजरी ने ज़मीन छू कर प्रणाम करते हुए कहा—बाबू, मुझे तलब किया है ?

बिना मुँह फिराये बाबू और बात नहीं कर सके । सामने रसोछला युवती—चूड़े के आकार में बँधे हुए केशों का जूड़ा, नाक पर रसकली अंकित, भुखड़े पर मीठी हँसी, गालों पर कपोलावतं । मंजरी को देख कर कुछ क्षणों तक तो बाबू की बोलती ही बन्द हो गयी ।

मंजरी ने फिर कहा—हुजूर !

बाबू चौंक कर बोले—हाँ, आओ । और हाँ, सुनती हो जी, वह सब नहीं चलेगा, पुलिन के ही साथ घर-द्वार बसाना होगा ।

आखिरी बात गोपिनी को लक्ष्य कर के कही गयी थी । इस बात के संकेत से मंजरी की दृष्टि भयभीत गोपिनी पर पड़ी । जल्दी से उम के पास जा कर उम ने उसे अपनी ओर खींच लिया ।

बात-चीत से भी आदमी पाता है भरोसा, दृष्टि से भी और स्पर्श से भी । गोपिनी को जकड़ कर स्नेह से मंजरी बोली—रसकली ! उस की हँसी से मंजरी का मुख चमक उठा, वह बोली—डर की क्या बात है रसकली ?

बाबू ने फिर कहा—समझी, यही है मेरा हुक्म । जवाब दो, राजी हो या नहीं ? सुनता है रे पुलिन ?

पुलिन और गोपिनी दोनों ही चुप । उत्तर दिया मंजरी ने, वैसे ही हँस कर—हुजूर, पति-पत्नी का झगड़ा क्या डरा-धमका कर मिटाया जा सकता है ?

बाबू बोले—असबसे मिटाया जा सकता है । नहीं मिटने पर कैसे चलेगा ?

मजरी बोली—यदि नहीं भी मिटता हुआ तो कोई बात नहीं। हम लोग वैष्णव है बात के। टूट जाने पर हम लोग फिर से माता मूँयते हैं।

बाबू बोले—तो ठीक है, वह बत्ताई को बारिस बनाये।

गोपिनी तीव्र विरोध के स्वर में कहा—नहीं, नहीं।

उम तरफ बैठा हुआ बत्ताई भीतर-ही-भीतर मुसकरा उठा।

बाबू बोले—तब क्या मतलब है, सुनूँ? लेकिन मेरे राज में वह सब बदमाशी नहीं चलेगी।

पुलिन ने जैसे एक मरियल सा क्षीण विरोध किया, किसी ने उस तरफ ध्यान ही नहीं दिया। वह हिल-डुल कर बैठा, जैसे उस से बैठा नहीं जा रहा था अब। विल में का साँप जैसे पकड़े जाने के पहले बाहर भी नहीं हो पाता लेकिन विल के ही भीतर कुण्डली मार कर क्रोध से फुँकारता हुआ घूमता रहता है, वैसे ही पुलिन का मन घूम रहा था।

लेकिन मजरी ने छुब विनम्रता से जोरदार विरोध किया—जोष काटती हुई वह बोली—छि: छि:, बाबू, यह बात आप को कहते नहीं सोझती।

बाबू जैसे इस बात के लिए तैयार नहीं थे, उसे डाँटते हुए बोले—अच्छा, अच्छा, तुम्हारा भी यहाँ रहना नहीं चल सकता है, इस आदमी इस तरह की बातें तुम्हारे बारे में करते हैं। तुम्हें गाँव छोड़ कर चले जाना होगा।

मजरी ने विनयपूर्वक कहा—जी हाँ, वहाँ जाऊँगी? औरत जात में—बाबू उसकी ओर ताक कर बोले—अच्छा, मेरे साथ चलो तुम, मेरे घर में रहना।

मजरी बोली—जी, मैं मजरी का काम नहीं कर सकती।

बाबू बोले—अच्छा, तुम्हें काम नहीं करना होगा।

मजरी ने हँस कर कहा—बाप रे! तो बहुरानी मुझे भोजन क्यों देंगी?

बाबू इस बार सरस हो कर बोले—वह तुम्हें नहीं सोचना होगा। अपने बगीचे में तुम्हारे लिए एक कुटिया बनवा दूँगा। यहाँ जैसे हो, वैसे ही रहोगी तुम।—ऐसा वह मुँह से फेंकुर-सार चुआते हुए बाबू हँसे, न जाने कौसी कुत्तित गन्ध उन की बात में लगी।

मंजरी ने कहा—मैं अपने इस जले मुंह को क्या कहूँ? सचमुच ही इस मुंह को फूँक देना होगा। आप राजा हैं, आप भी आखिर... नहीं हुआ, मैं यह गाँव छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगी। चाहे कोई कुछ भी करे।

बाबू इस तरुणी की ढिठाई देख कर भौचक्के हो उठे थे, यकायक पागलो की तरह वे चीखे—क्या कहा हरामजादी? भूतसिंह! लगाओ जूते हरामजादी को!

बन्द लोह-द्वार प्रमत्त हाथी भी नहीं खोल पाता ठेल कर। लेकिन अर्गला खुल जाने पर आघात के बिना ही वह खुल जाता है। पुलिन के हृदय-द्वार की अर्गला हाथ लगते ही खुल गयी! भीतर का पुरुष बाहर निकल पड़ा। एक विकट—भीषण दर्प से उस ने हँकार ली—खबरदार!

राखाल लठैत की ढीली पकड़ से साठी छीन, उसे पृथ्वी पर ठोक कर, पुलिन छाती फुला कर खड़ा हो गया।

पता नहीं बात कहाँ तक बढ़ती, कौन जाने, लेकिन जितनी देर में लोग बात समझ पाते—तब तक मंजरी झपट कर पुलिन और गोपिनी को हाथ से खींच कर बाहर लिवा लायी।

भौचक्के-से बाबू जब होश में आये तो चीखे—भूतसिंह!

बलाई ने धीमे गले से कहा—हुजूर, उस मंजरी के साथ गोकुलबाटी थाने के दारोगा के परिवार से मेस-जोल है, जरा समझ-बूझ कर... बलाई की बात को जैसे काट कर हाथ में साठी ले कर भूतसिंह दनदनाता हुआ बोला—

हजीर! हुकुम?

बाबू बोले—कुछ नहीं. जाओ।

मंजरी दोनों जनों का हाथ पकड़ कर सीधे रामदास के घर आयी। रास्ते भर जैसे वह किसी दुश्चिन्ता में पड़ी रही। दुश्चिन्ता कहना ठीक नहीं होगा, वह एक आवेश था, एक नशा था।

घर के भीतर जाते ही मंजरी ने दरवाजा बन्द कर दिया, एक मोटी सी साठी पुलिन के हाथ में दे कर वह चिलचिला कर हँसती हुई बोली—ओ पहरेदार! बाहर बैठ।

पुलिन साठी ले कर बाहर बैठा। घर के भीतर फर्श-पर बंटी मोरब

रसकली

आँखों से दोनों नारियाँ आँसू बहा रही थीं। गोपिनी नत दृष्टि से और मंजरी जैसे नशे में उस के मुख की ओर ताकती हुई।

सहसा हँस कर उस ने कहा—रसकली !

गोपिनी मुँह उठा कर हँसी—बड़ी उदास हँसी, जैसे मलिन फूल !

मंजरी बोली—कचहरी के लोर्गों के सामने तुम ने रसकली लगायी थी नाक पर, अब नहीं कहने से तो नहीं चलेगा।

गोपिनी बोली—हाँ।

मंजरी ने कहा—तो भाई, अनुष्ठान हो जाने दो, तुम मेरी नाक पर रसकली आँक दो और मैं तुम्हारी नाक पर। जो नियम है, उसे तो करना ही होगा। ऐसा कह कर मारे सामान ने कर तिलक घिसने लगी।

इस के बाद गोपिनी की गोद के पास बैठ कर मंजरी ने कहा—तुम ने भाई आगे कहा है, पहले तुम्हारी बारी है। चलो, मेरी नाक पर रसकली आँको।—ऐसा कह कर अपनी नाक की रसकली पाँछ दिया उस ने।

आश्चर्याहत गोपिनी ने काँपते हाथों से मंजरी की नाक पर चन्दन की रसकली उरेह दी।

मंजरी बोली—रको !—ऐसा कह कर बाहर ने पुलिन को पुकारा, उमी मधुर स्वर में—रसकली, मैं कहती हूँ आओ।

अपने हाथ में पुलिन का हाथ ले कर गोपिनी के हाथ में देते हुए वह बोली—

यह लो रसकली ! मैंने अपनी रसकली तुम्हें दी।

पुलिन की तो वाणी अकल्पित।

इसके बाद पुलिन से बोली—मैं दे रही हूँ, ना मत करो।

गोपिनी और पुलिन दोनों ही विस्मित, अवाक्।

सहसा गोपिनी मंजरी का हाथ छींचती हुई बोली—नहीं, नहीं, तुम भी आओ, हम दोनों बहनें—

रमोच्छता मंजरी रमोच्छता की ही तरह बोली—घन्, मैं तो रसकली हूँ न !

शाम ढल जाने पर मंजरी बोली—जरा रुको, मैं एक बार गाँव का झाल-चाल तो लेती जाऊँ ।

पुलिन ने बाधा देते हुए कहा—यह क्या ? अकेले ही ?

मंजरी हँसती हुए लोट-पोट हो उठी, बोली—भय क्या है ? मेरी रसकली तो साथ है—ऐसा कह कर नाक की रसकली दिखा दिया उस ने । फिर बोली—डर की बात नहीं है, मैं बाहर ही बाहर खोज-खबर लूंगी । समझ-बूझ कर मैं गोकुलवाटी थाने पर जाऊँगी । आज शायद रात को न भी लौट पाऊँ, समझे ? खबरदार ! तुम दोनों जने मत निकलना बाहर, कसम रही, निकलो तो मेरा खून पीना !

मंजरी चली गयी, रात को नहीं लौटी ।

दूसरे दिन सुबह बलाई ने आते ही पुकारा—मीत !

मंजरी की खबर पाने की आशा में अपनी विपत्ति की आशंका को साक पर रखकर पुलिन ने दरवाजा खोलते हुए कहा—आओ !

बलाई ने कहा—ठीक, ठीक है, पर मंजरी के हाथों क्यों दया भिजवाया ? खुद जाने से ही होता । खैर, वह भी ठीक ही हुआ । बाबू ने भी कहा—बलाई, जब पुलिन ने पचास रुपये जुमाना दे ही दिये, तो उस पर अब मेरा क्रोध नहीं है । शायद पुलिन ने डर के मारे खुद नहीं आकर मंजरी के द्वारा दया भिजवाया । मंजरी को भी माफ़ कर दिया है । तो एक बार आज जाना, बाबू को प्रणाम कर आना । डर की बात नहीं, मैं ने भी सब कुछ कह-सुन दिया है ।

पुलिन की तो बोलती बन्द !

बलाई की बात जमी नहीं, कई बार हुक्के पर दम लगा कर वह चला गया ।

पुलिन स्तम्भित सा, पता नहीं कितनी देर तक खड़ा रहा । एक पोटली काँध में दयामे हँसती हुई मंजरी ने पहले की ही तरह पुकारा—रसकली !

पुलिन नहीं बोला ।

हँस कर मंजरी बोली—रसकली, नाराज हो ?

पुलिन ने मान भरे स्वर में कहा—तुमने जमीदार...

मंजरी ने कहा—पानी में रह कर घड़ियाल से दुश्मनी करने पर चलेगा क्या ? इसी से निपटा दिया ।

पुलिन बोला—रुपये...?

मंजरी बीच में ही से बात छीनती हुई बोली—वह तो तुम्हारा ही है, मैं क्या तुम्हारी कोई नहीं ? इस के बाद पुलिन के दोनों हाथ धाम कर बोली—अच्छा, चलो ।

विभ्रान्त सा पुलिन बोला—कहाँ ?

मंजरी बोली—बृन्दावन !

पुलिन ने रुठने के-से स्वर में कहा—रसकली !

मंजरी बोली—अरे ! मैं तो तुम्हारी ही हूँ ।

गोपिनी दरवाजे के पीछे खड़ी थी, सामने आ कर अधिकार भरे स्वर में बोली—तही, जाने नहीं पाओगी ।

मंजरी बोली—तीर्थाटन को सारी वेश-भूषा छोड़ कर अब हुक्कुर बनूँ ?

गोपिनी बोली—तो कहो कि फिर लौटोगी ?

मंजरी ने कहा—आऊँगी ।

गोपिनी बोली—आओगी तो ? देखो ।

जवाब न दे कर मंजरी हँसती हुई पोटली उठा कर रास्ते पर चल पड़ी । विचित्र थी वह हँसी, रहस्यावृत मायामयी मधुरता में भरी हँसी, कौन बता सकता है उस का अर्थ ? चलते-चलते उस ने गाना प्रारम्भ किया—

‘लोग कहते हैं कृष्ण कलकिनी हूँ,
सखि, मैं तो उसी गर्व से गर्विता हूँ,
री उसी गर्व से गर्विता हूँ ।’

नाक पर उस के रसकली, मुण्डे पर हँसी, गति में एक विचित्र हिलमोल, जैसे रस-धारा सर्वांग से झर रही हो उमड़ कर ।



नारी और नागिन

ईंट के पैजावे में से लँगड़ा शेख ईंट उचाड़ रहा था। लँगड़े शेख का नया नाम है—यह कोई नहीं जानता, शायद लँगड़े को भी याद नहीं। पता नहीं कब से बचपन में उसके बायें पैर के टूटने के बाद से ही उसे लँगड़े के ही नाम से जाना जाता रहा है। केवल उस का पैर ही लँगड़ा नहीं है, जीवन में दुश्चरित्रता के परिणामस्वरूप कुत्सित रोग के कारण लँगड़े की नाक बँठ गयी है, वहाँ सिर्फ बस एक बीभत्स गह्वर दिखाई पड़ता है। उस के बाद उसे हुई चेचक, चेचक के दाग वाला कुत्सित लँगड़ा देखने में और भी भयंकर हो उठा।

अपने में ही डूबा हुआ लँगड़ा ईंटें उचाड़ रहा था।

थोड़ी दूर पर ही अदाई उर्फ बाहिद शेख बैलगाड़ी हाँकता चला आ रहा था। दोनों बैलों की पूँछ मरोड़ कर उसने एक अश्लील गाना अलापना शुरू किया। लेकिन हठात् उस का ताल-भग हो गया। दोनों बैल मकायक ठमक कर खड़े हो गये, अदाई एक धचका खा कर, गाना छोड़ कर बोला—
स्साले बैलों की ऐसी की तैसी, कहता हूँ कि कुछ नहीं...

क्रोध में बीछला कर उस ने बाँस का पैना उठाया कि उन्हें गड़ा दी जाये। लेकिन दोनों बैल लगातार फों-फो करते हुए गुर्रा रहे थे। अदाई का पैना हवा में ही रह गया, वह

वैतों को पीट नहीं सका और चीख उठा—लेंगड़ा ! अरे लेंगड़ा, साँप ! साँप ! !

अदाई की बेलगाड़ी के सामने ही एक साँप का पोवा अपना फन उठाये झुम रहा था। अदाई बेलगाड़ी से कूट कर एक इंट उठा कर मारने को तैयार।

उधर से लेंगड़ाते-लेंगड़ाते लेंगड़ा भेख खा रहा था, अदाई के हाथ में इंट देख कर वह बोल उठा—मारना मत, अदाई, मत मारना। मैं भा रहा हूँ।

अदाई के हाथ की इंट उठी ही रह गयी, वह बोला—वाह, क्या खूबसूरत साँप है ! उसका मुँह तो सिन्दूर की तरह लाल टक-टक है। माथ पर का चक्कर कितना खूबसूरत है ! लेकिन भागा, वह भागा, जल्दी भा।

साँप अब बड़ी तेजी से भाग रहा था। लेकिन जा रहा था लेंगड़े की ही ओर। अदाई को पीछे छोड़ कर भागना ही साँप का उद्देश्य था। लेंगड़े को उस ने नहीं देखा।

लेंगड़े श्रेष्ठ ने हाँक लगायी—अरे अदाई, अपना पैना तो घुमा कर मार। लो, वह तो इंट के पँजावे में जा घुसा। उदयनाग था वह साँप, यह साँप जल्दी नहीं मिनता। पकड़ लेता तो कुछ आमदनी होती रे !

लेंगड़ा भेख साँप का ओझा है। तिरक ओझा ही नहीं, साँप का नेस भी दिखाता है। छप्पर के घर के भीतर सटके हुए मिकहरों पर बड़ी-बड़ी हाड़ियों के मुँह बाँध कर उसने रख छोड़ा है। इन्हीं के भीतर वह साँपों को कैद करता है। कमजोर और पुराना हो जाने पर उन साँपों को वह दूर मैदान में छोड़ आता है। कितने साँप मर भी जाते हैं। जब साँप रहने हैं तब लेंगड़ा मजबूरी नहीं करता है। तब तो वह मद्धमर ओर घेंजरी ले कर साँप का नेस दिखाने निकल पड़ता है। आमदनी भी बुरी नहीं होती। लेकिन गाँजे-अफीम की लत और बढ़ जाती है तब। कभी-कभार शराब भी चमती है। फसतः साँपों के न रहने पर लेंगड़ा अपनी छाँची ओर बिड़वा ले कर चस पड़ता है। अच्छे खाते-पीने गृहस्थों के घर के सामने

जा कर, वह अपना बदसूरत चेहरा बढ़ा कर आवाज लगाता है—अरे, मजूर चाहिए—मजूर ?

खुशामदी लहजे में वह हँसता, उस का बीमत्स भयकर मुख और बीमत्सतर और भयंकरतर हो उठता । जिस दिन मजूरी का काम मिलता वह जान सड़ा कर काम करता, उस काम में कोताही नहीं करता । जिस दिन मजूरी का काम नहीं मिलता, वह भीख माँगने निकल जाता । जो कुछ भीख से मिलता उनी से अफीम-गाँजा खरीदता । इस के बाद भी यदि कुछ बच रहता तो जरा-सी ठर्रे की शराब गले में उड़ेल कर घर लौटता, अपनी वीवी जुबँदा का पैर पकड़ कर रोते-रोते कहता—‘मेरे हाथ में पड़ कर तेरी दुर्दशा हो रही है । तुझे खाना नहीं दे कर मैं भार डाले जा रहा हूँ ।’

जुबँदा हँसते-हँसते पति के माथ पर हाथ फेर कहती—चलो, चलो, पागलपन मत करो । छोड़ तो मुझे—कहीं से चावल तो लाऊँ ।

लँगड़ा की क्लाई और भी बढ़ जाती, वह इस वार जुबँदा का गला पकड़ कर कहता—एक नयी साठी तेरे लिए कभी नहीं खरीद कर ला सका । पुराना ही पहन कर तेरे दिन बीत गये !...

घर, वे सब बातें जानें दें । दूसरे दिन बिल्कुल भोर में लँगड़ा ईंट के पैजावे के पास आ कर हाजिर हो गया । हाथ में एक छोटी सी लाठी । बंगल में एक साँप । सामने पूर्व दिशा में बस अभी-अभी ललछौही आभा दीख पड़ना आरम्भ हुई थी । पेड़ों के झुरमुट में बैठ कर पक्षी बार-बार कलरव कर रहे थे । गाँव के किसी देव-मन्दिर में आरती की शय-घण्टा ध्वनि बज रही थी । एक ऊँचे टीले पर बैठ कर लँगड़ा चारों ओर सतक तीक्ष्ण दृष्टि से ताक रहा था ।

पूर्व दिशा में अरणिमा की प्रगाढ़ता एक परिधि में बढ़ती जा रही थी । उस रंग की शार्ड में पैजावे के अघजले ईंट और भी लाल लग रहे थे । सँगड़े के मँले कपड़े तक लाल रंग में रंग उठे थे । लँगड़ा उठ कर खड़ा हो गया ।

यही—यही है न ?

पोड़ी ही दूर पर मैदान में शायद यही साँपपूर्व की ओर मुँह उठाये हुए

अपनी फण नचा रहा था। प्रातःकालीन सूर्य की रक्तभासे साँप का रंग अरुणिम हो गया था। उस प्रगाढ़ लालिमा के भीतर उस के फण के चारों ओर का काला चक्राकार चिह्न अपूर्व सौन्दर्य से उद्भासित हो उठा था। तितली के लाल पंख में काले चकत्तो सा ही खूबसूरत लग रहा था वह। लँगड़ा मुग्ध हो उठा। अपने आप ही वह बोल उठा—वाह !

इम के बाद वह धीरे-धीरे आगे बढ़ा। उदीयमान सूर्य के अभिनन्दन में सर्प-शिशु इतना प्रमत्त हो उठा था कि लँगड़े की पद-चाप से भी उस की मुग्ध लीला नहीं टूटी। बहुत समीप आने पर उन ने चकित हो कर अपना मुख घुमाया। दूसरे ही क्षण फो-फो करता हुआ फण मारा उस ने। लेकिन फिर वह अपना फण उठा नहीं सका। लँगड़े ने बड़ी फुर्ती से धायें हाथ की लाटी से उस का सिर धर दबाया। दाहिने हाथ से साँप की पूँछ पकड़, उसे दो बार झटका दे कर, लँगड़े ने साँप को अच्छी तरह से देख कर कहा—नागिन !

छह महीने बाद। गाँव की दुकान से लौट कर लँगड़े ने जुबंदा में कहा—देखो, क्या लाया हूँ।

सामने के बरामदे में झाड़ू लगाती हुई जुबंदा ने कहा—क्या ?

कपड़े की छूंट से लँगड़े ने एक छोटी सी नयुनी निकाल कर अपनी हथेली पर रखा।

जुबंदा ने सवाल किया—क्या होगी इतनी छोटी नयुनी ?

हँसकर लँगड़े ने कहा—बीवी की पहनाऊँगा।

जुबंदा को तो काट मार गया। हँसते-हँसते लँगड़ा घर में घुसा। इन के बाद गले में एक साँप लपेटे हुए बाहर आया। बड़ी साँप था। इतने दिनों में उबरा और घरा हो चला था। लेकिन वह तेज नहीं था उस में। शान्त-भाय से वह अपना सिर उठाये हुए लँगड़े के गले और कंधे पर घूम रहा था।

जुबंदा बाँपी—देखो, यह बिनी का नहीं है। भने अब उस में वह दम नहीं है, लेकिन उम गाँव का विश्वास नहीं है।

हँस कर लँगड़े ने कहा—विश्वास नहीं है उन के बिप के दाँव का।

नहीं तो वे भी तो प्यार करते हैं जुबंदा ! विप-दांत नहीं हैं लेकिन और दांत तो हैं, परन्तु मुझे तो काटता नहीं है। कैंसी अच्छी लडकी की तरह 'बीबी' मेरी घूम-फिर रही है, देखो न ! ऐसा कह कर उस ने साँप के दोनों होंठों को हाथ से दबा कर उस के मुँह पर एक चुम्बन जड़ दिया।

जुबंदा को आश्चर्य नहीं हुआ ! यह दृश्य उस के लिए नया नहीं है। लेकिन वह नाराजगी से बोली—छि: छि: छि ! तुम्हें क्या घृणा भी नहीं लगती ? कितनी बार तुम्हें मना किया है, जरा बताओ तो ?

इस बात पर लँगड़े ने कान ही नहीं दिया। उस ने कहा—देखो-देखो, कैसे मेरे हाथ को लपेट रखा है ? जरा देखो तो सही। जानती हो, साँप और साँपिन जब आपस में खेलते हैं, तब ऐसे ही आपस में लिपटा-लिपटी करते हैं वे। कभी देखा है क्या ? आह, क्या मजेदार खेल होता है, कसम जुबंदा की।

जुबंदा ने कहा—मुझे देखने की जरूरत नहीं है, तुम ने देखा है वही अच्छी बात है। लेकिन तेरा खेल भी यही समाप्त करेगी, मैं समझती हूँ।

लँगड़ा तब एक सूई ले कर 'बीबी' की नाक में छेद करने बैठा। पैर के अँगूठे से साँप की पूँछ दबा कर और बायें हाथ से उस का मुख पकड़े हैं वह। दाहिने हाथ की सूई से नाक में छेद कर के साँप को नयुनी पहना कर, उस ने उसे छोड़ दिया। पीडा और क्रोध से फों-फों करती हुई 'बीबी' बार-बार लँगड़े को फन मारने लगी। साँपि का ढक्कन ढाल की तरह पकड़ कर लँगड़ा बार रोकने लगा, बार बचाते-बचाते वह बोला—गुस्सा मत कर बीबी, गुस्सा मत कर। जरा देख तो सही, कैंसी, खूबसूरत लग रही है तू। देख तो जरा आइना, जुबंदा, देख जरा तो। एक बार अपना चेहरा तो देखे।

जुबंदा बोली—नहीं दूंगी।

—दे, दे, तेरे पैरों पर पड़ता हूँ। देखूँ तो जरा वह अपना चेहरा देख कर क्या करती है ?

जुबंदा अपने पति के इस अनुनय की उपेक्षा नहीं कर सकती। वह आइना लेने के लिए घर में घुसी।

लंगड़े ने कहा—एक जीरे के बराबर थोड़ा सा सिन्दूर भी लेती जाना जरा मिहरवानी कर के ।

जुबंदा घर के भीतर से ही बोली—क्यों, होगा क्या ?

भोज में मस्त सा लंगड़े ने कहा—देखेगी ही तू, क्या होगा । आगे नहीं बता रहा हूँ ।

आइना और सिन्दूर ले कर आयी जुबंदा, उस ने थोड़ी दूर पर ये दोनों चीजें रख दी । लंगड़े ने बड़े कौशल से साँपिन को पकड़ कर, एक तीली से उस के माथ पर सिन्दूर की रेखा उरेह दी । इस के बाद वह हो-हो कर के हँसता हुआ बोला—उस से मैं नें निकाह कर लिया, ओ री जुबंदा, वह तेरी सौतिन हुई ।

इस के बाद साँपिन की ओर मुड़ कर उस ने कहा—देख, देख, बीबी, जरा देख तो सही, क्या खूबमूरती पटी पड़ रही है । साँपिन को छोड़ कर आइना उस के सामने रख दिया उस ने और खंजड़ी बजा कर कर्कश नक-नकातें अनुनासिक स्वर में गाने लगा—

जानि ना गो एमैन हवे—

गोकुल छाडिमा केप्टो मपुरा जावे

ओ जानि ना गो—

(नही जानती थी, अरे ! ऐसा होगा—गोकुल छोड़ कर कृष्ण मपुरा जायेंगे, अरे, नही जानती थी—)

कई महीने बाद ।

बारिश के बीच धीरे बढ़ती । सँगड़ा पता नही कहाँ गया था, सोट नहीं सका । जुबंदा ने अनुमध किया कि घर के भीतर से कंसो एक दीग लेजिन मदमाती मोटी मो गन्ध आ रही है ! इधर-उधर घूम-फिर कर भी वह पता नहीं पा सका कि यह क्या है ?

दो दिन बाद सँगड़ा सोटा । जल-देवता को एक अश्लील गानो दे कर उस ने कहा—कुछ पाने को दे जुबंदा । बड़ी भूष लगी है री ।

जुबंदा एक थाली में पान्ता भात^१ (पानी-मिठा भात) ले आयी। पैर की कीचड़ धो कर ज्यो ही लेंगडा घर में घुसा त्यों ही उसने कहा—जुबंदा, यह कैसी गन्ध है री ?

जुबंदा बोली—पता नहीं, दो दिनों से ऐसी ही गन्ध आ रही है।

लेंगडा कुछ भी नहीं बोला,^१ मिफें लम्बी-लम्बी गहरी साँस लेता हुआ वह गन्ध को पहचानने की कोशिश कर रहा था। इधर-उधर घूम फिर कर 'बीबी' की झाँपी के पास वह खड़ा हुआ। आदमी के पैरों की आवाज पा कर झाँपी के भीतर की नागिन फुँफकार उठी।

लेंगड़े ने कहा—हूँ !

जुबंदा ने उत्सुकता भरी जिज्ञासा की—क्या है, बताओ ?

लेंगड़े ने कहा—'बीबी' के देह की गन्ध है। साँपिन है न, साँप के साँप मिलने का वक्त हो गया है, इसी से। इसी गन्ध से साँप चले आते हैं।

जुबंदा की काठ मार गया। बोली—पता नहीं रे, तुम लोगों की बातें हैं। अच्छा उठ, चल अब पान्ता भात तो खा ले।

भात खाते-खाते लेंगड़े ने कहा—उसे मँदान में छोड़ आना होगा मुझे ! इस समय कैद कर के रखना पाप है।

एक गहरी साँस ले कर उस ने बात खत्म की।

जुबंदा ने परम तृप्ति की साँस ले कर कहा—वही अच्छा है, इसे मैं फूटी आँखों से नहीं देख पाती। इतने साँप मरते हैं, यह तो मरती भी नहीं !

भात खा कर झाँपी से 'बीबी' को लेंगड़े ने बाहर निकाला। उस का मुँह दबा कर उसे प्यार किया उस ने।

जुबंदा बोली—मह सो, कई दिन हुए, उस के दाँत तोड़े नहीं गये हैं, उस के दाँत उग आये होंगे। अब फिर क्या मोह है रे ! जा न, उसे छोड़ ही आ।

१. थाली में बासी धान की जेड़ बना कर बीच में भीतर और बाहर पानी मिठा कर रख देते हैं ताकि खराब न हो—अनुवादक।

लेंगड़े ने कहा—देख, देख तो मही, कैसे मेरे हाथ को लपेट रखा है, देख तो !

दोपहर को लेंगड़ा उदास बैठ गया। 'बीबी' को पाम के जंगल में छोड़ आया था वह। जुबैदा बोली—ऐसे क्यों बैठे हैं, बोल तो ? जा गाँजा-धाँजा खरीद कर तो फूँक मार ।

लेंगड़े ने कहा—'बीबी' के खातिर मन कैसा हो रहा है री !

जुबैदा ने हँस कर कहा—मर तू, मर । तेरी बात सुन कर तो मेरे—

—नही री जुबैदा, मन बहुत उदास है ।

जुबैदा इस बार पति के पास बैठ, उम के गले में बाँहें फँसा कर बोली—क्यों रे, मैं तुझे अच्छी नहीं लगती क्या ?

आदर में उसे खूम कर लेंगड़े ने कहा—तेरे ही खन पर तो बचा हुआ हूँ री जुबैदा ! तू मेरी जान से भी बढ़ कर है ।

जुबैदा बोल उठी—देख, देख 'बीबी' लौटी आ रही है । वह देख—नाली के बीच !

सपमुच ही नाबदान के मुहाने पर फन उठाये 'बीबी' धूम रही थी ।

लेंगड़े ने उठने की कोशिश करते हुए कहा—एकदम लाज, जरा ठहर ।

पति को प्राणपण से कम कर धरती हुई जुबैदा बोली—नहीं !—और इस के बाद कंकण स्वर में बोली—जा-जा, भाग जा, हट, हट ।

बायें हाथ में एक गोइठा उठा कर उन ने नागिन को मारा । नागिन ने शीघ्र से मिट्टी पर कई बार फन मारा और धीरे-धीरे नाबदान से बाहर घली गयी ।

तब शायद दोपहर रात थी । जुबैदा चीत्कार कर उठी—उठ, उठ, पता नहीं किस चीज ने मुझे काट गया है ।

हड़बड़ा कर भीधता में उठा लेंगड़ा । रोगनी जता कर उस ने देखा—सपमुच ही जुबैदा के बायें पैर की उँगनी पर एक बूँद खून झलझला रहा था ।

जुबैदा फिर चीख कर बोली—'बीबी'—'तेरी 'बीबी' ने मुझे काटा है, वह देख ।

एक हाँडी के इर्द-गिर्द नागिन धीरे-धीरे चल-फिर रही थी। फूर्ति से झपट कर लँगड़े ने साँपिन को फिर से झाँपी मे कँद कर दिया। फिर उस ने कहा—जुबैदा अगर नहीं बची तो मैं तुझे भी मार डालूंगा।

लेकिन जुबैदा बची नहीं। सूर्योदय के संग ही सग उस की देह मे मृत्यु के लक्षण प्रकट हो उठे। सिर के बाल ज़रा ना खींचते ही उपड़ आये। थोड़ा लोग चले गये। लँगड़े शेख का बीभत्स भयकर मुख फँसा करण हो उठा था जुबैदा के सिरहाने बैठे-बैठे !

एक उस्ताद ने कहा—तू भी जाता लँगड़े, पर बाल-बाल बच गया। इन साँपों का गुस्सा बड़ा तेज होता है, शायद तुझे भी काटने ही आयी थी।'

आँसू भरी आँखों से उस उस्ताद के मुँह की ओर निहार कर कहा—नहीं।

लँगड़े ने अब फकीरी धेश धारण कर लिया है। उस का पैतृक घर पेंडहर के दूह मे बदल गया है। लँगड़े के घर के बगल से ही एक पगडडी जाती थी, वह पगडडी अब बन्द हो चुकी है। कोई भी उधर से नहीं जाता। लोग कहते हैं—साँपों का बड़ा डर है। बड़े डरावने साँप हैं—उदय नाग। प्रत्यूप मे उपाकालीन सूर्योदय की बेला में उन्हें फन काड़े हुए झूमती अवस्था मे यहाँ देखा जा सकता है।

'बीबी' (साँपिन) को लँगड़ा मार नहीं सका। उसे छोड़ दिया उस ने जंगल मे। तिर्रं यही कहा था उस ने—तेरा क्या दोष ? औरत जात का स्वभाव ही है यह ! जुबैदा भी तुझे फूटी आँखों से नहीं देख पाती थी।



घास का फूल

रानीगज-खपरलो (टाइलो) से छाया हुआ उत्तर-दक्षिण तरफ का लम्बा बेंगला कोलियरी का ऑफिस है। ऑफिस के उत्तर में ही पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बाकार फूम से छाया हुआ बेंगला कोलियरी के बाबुओं का मेस है। दोनों बेंगलो के बीच के बड़े मैदान के बीच अतुल चहलकदमी कर रहा था। चारों तरफ अंधेरा। बाँयलर की बिमनियों के मुँह पर आग की लपटें धू-धू कर के जल रही थी। इधर-उधर कुलियों के केरासिन की डिबरी का प्रकाश जुगनुओं की तरह काँप उठता था। मेस के एक घर में कुम्भी-रिक्कूटर (कुलियों की भरती करने वाला) चन्द्रकान्त हुक्का पीते-पीने सर्वेयर से कह रहा था—भाई मेरे, सीतहू आने के भीतर साढ़े पन्द्रह आने झूठ बात कहता हूँ—साँ मैं झूठ नहीं बोलूँगा ?

बड़े टेबिल के ऊपर कोयले की खान के नक्शे पर एक नयी लकीर खींचते-खींचते सर्वेयर ने जवाब दिया—हाँ, वह नहीं रहने में शौकरी रहेगी क्यों ? जरा रोजनी जरा ऊँची कर दे चन्द्र बाबू, घरमे मे दीप नहीं पड़ता।

बगल के कमरे में लेबर-रजिस्ट्रार सीतापति अपने में दूबा हुआ एक चित्र बना रहा था। उस के सामने एक आदमी ठूँठ की तरह निष्पमक भाव से बैठा हुआ था।

उम के बगल के कमरे में बूढ़े कम्पाउण्डर आँखों पर ऐनक चढ़ाये अपनी पत्नी को पत्र लिख रहे थे—'यहाँ भगवान् की दया से दृष्टि हुई है। वहाँ बारिश हुई कि नहीं, पत्र में लिखना। असाभियों की हालत देख-सुन कर धान वगैरह बीज उधार देना।'

एक ओर दूसरे घर में लॉटरी का टिकिट खरीदा जा रहा था। मनेजर के नाम एक लॉटरी की रसीद-बुक आयी थी। उसी के टिकिट बड़े बाबू येच रहे थे। अठन्नी दाम थे हर टिकिट के। प्रथम पुरस्कार पाँच हजार रुपये। कालीपद एक छप्प नाम खोज नहीं पा रहा था। बड़े बाबू कलम पकड़ कर बैठे हुए थे, बोले—क्या नाम बँठाऊँ, बोलो जी, कालीपद ?

कालीपद ने कहा—थी बत्स—कैसा रहेगा ? उस नाम पर शनिश्चर की भी दृष्टि नहीं रहती। रुकिए, रुकिए, महालक्ष्मी—कैसा रहेगा ? कहिए न ?

बिल्कुल पास वाले कमरे में एक सुन्दर बुद्धक हारमोनियम ले कर गला साध रहा था—

'कि धूम तोरे पेयेछिलो हतभागिनी !'

(कैसी नींद लू गयी थी री अभागिनी !) यह तरुण कोयलरी के मालिकों के नाटक में नायिका का पाठ करता है। इसी से उम की नौकरी है यहाँ। तनउवाह बाईसरूपये थी। अब दो रुपये घट कर हो गयी है बीस।

पास के बरामदे में स्टोर-कीपर अमृत्य कुलियों को तेल बाँट रहा था, उस ने कहा—'विनोद, तू किमी 'यात्रा'-दल में शामिल हो जा। अच्छी तनउवाह पायेगा। क्यों बीस रुपये में पडा सडा रहा है ?' गाना रोक कर विनोद ने कहा—बहुत बड़ी चूक हो गयी गोदाम बाबू ! उम बार 'बीणा-पाणि' अपेरा बाने मेरे पीछे पडे थे, कहा था—तुम पेनीम रुपये मे काम शुरू करो—उह महीने वाद पचाम हो जायेगा। तीन मास में एक सौ रुपये महीने तनउवाह हो जायेगी। 'यात्रा' की मण्डली मद्रास कर में ने...

अमृत्य ने कहा—मैं एक दूकान करूँगा, भाई ! बेंगनी, फुल्लो, बाडे

की। समझे कि नहीं ? बीबी घर में बना देगी, एक छोकरे को रख लूंगा। काफ़ी फ़ायदा है।

तीन बच्चे दौड़ते-दौड़ते आ कर विनोद के बिस्तर पर कूद पड़े। एक लड़की ने कहा—घर में गाना सुनाना होगा विनू चाचा ! चलो, माँ ने बुलाया है।

दूसरी लड़की ने नकियाते हुए कहा—पकड़ कर ले जाऊँगी, हाँ नहीं तो।

छोटे लड़के ने तब तक हारमोनियम की रीढ़ दबा कर एक बेसुरी ध्वनि पैदा कर दी। विनोद ने हँस कर कहा—चलो, चलो, चलें फिर। कंधी कहाँ रखी गोदाम बाबू ? मेरी झूटी है, तो चलो, दो गाने सुना कर चला आऊँगा।

पहली लड़की ने कहा—किताब ले जाने को कहा है माँ ने। कई कोठियों के मालिक यहाँ रहते हैं। विनोद को बीच-बीच में इन के घरों में गाना सुनाना पड़ता है। रेलवे के कर्मचारियों की लाइब्रेरी से उपन्यास ला कर देना भी इस का एक काम है। हारमोनियम खुद ही ले कर विनोद चला गया। गोदाम बाबू बोले—देखा जी बाबू की बाबरी सँवारना ?

विनोद के साथ एक कमरे में रहने वाले आदमी ने अपना बाल सँवारते-सँवारते कहा—हूँ।

इस के बाद दर्पण ले, कई कोणों से अपना चेहरा देख कर उस ने कहा—अच्छा है भाई, और भला क्यों नहीं रहेगा ? चेहरा सुन्दर है, गला मीठा है। स्टोर-बीयर फ़िक्कू से हँग कर बोले—किताब लागा है—वह क्यों। मजदूराना को देखी तो वे तो बम टाइम बाबू के लिए पागल हैं।

अतुल सोच रहा था—हेनरी फ़ोर्ड ने जिन्दगी गुरु की घी काठ के मिस्तरों के रूप में—एडिम्सन नाम का एक लड़का अणुवार बेचा करता था। अतुल यहाँ आया है डेढ़ सौ मील पैदल चल कर, रास्ते बरसाती नहीं। नाथ में उत्तरार्द्ध का पैसा यदि देना तो पाने के पैसे टेंट में नहीं बचते—उम ने यह नदी तैर कर पार की थी। आज वह कोई कोयलरी का मैनैजर सा हो उठा है। एक साल बाद मार्शनिंग की परीक्षा देगा।

पास में ही दो कमचारी आ रहे थे। एक तो जोरदार आवाज में अंटे-शंट बकता चला आ रहा था। अतुल ने समझ लिया। मैनेजर ने आ कर कहा—‘यह आप, अतुल बाबू, मैं तो बस आप को ही खोज रहा था। आज कोयले की तहों में बारूद जल गया है। क्रमशः तह गरम होती जा रही है। आग न लग जाये कहीं।’

अतुल ने मीठे स्वर में पूछा—गन-पाउडर जल गया ?

ओवरमैन कड़ावर और मिहनती आदमी था। वह बात न कर के जैसे भाषण मा देता था। हाथ-पैर हिला कर, अभिनय कर के हर बात समझाना उस का स्वभाव है। वह कह उठा—‘जी हाँ, दक्षिण ओर की मेन गैलरी के ५८ नम्बर पिट के भीतर की दीवाल पर इतना बड़ा घट्टाननुमा कोयला जमा पड़ा है।’ ठण्डाराम सरदार ने कहा—बाबू, उस कोयले को दाग दूँ। बारूद का टोटा तैयार कर के ठण्डाराम को ले गया था दिखाने—कि जरा अपनी आँखों से एक बार वह देख ले। ठात् झुक कर ओवरमैन न कहा—‘ठण्डाराम, बारूद का टोटा जरा नीचे कर ले। फिर पड़े हो कर हाथ उठाते हुए वह बोला—‘मैं देख रहा हूँ—और बाबू—यह कोयले की घट्टान—और इधर बस फम्सू करती हुई बारूद ! एकबारगी बस जैसे सूरज उग आया हो उस अँधेरे में।’

तनिक थम कर, पीछे कई हाथ हट कर फिर शुरू किया उस ने—‘मैं तब पीछे हटने लगा था। समझ गया था कि नहीं, इसी से, लेकिन बेटा ठण्डाराम मुँह बाधे उल्लू की तरह खड़ा था।’

हक्के-बक्के-मे भूखें का अभिनय किया उस ने और तब रुका। इस के बाद अपना बायाँ हाथ गपाकु से पकड़ कर फिर उस ने कहा—‘ऐसे ही गप्पू से बेंटे का हाथ पकड़ कर उसे घड़घड़ाता हुआ खींच लाया।’

इस के बाद वह पानीपत युद्ध के विजयी अहमदशाह की तरह गम्भीर हो गया।

मैनेजर सीधा-सादा आदमी था। बुद्धि तो स्थूल थी ही उस की, आकार का भी स्थूल था। उस भले आदमी ने कहा—‘क्या किया जाये अतुल बाबू ?’

घास का फूल

अतुल ने सोच-भमझ कर कहा—उस पिट में काम बन्द करवा दीजिए ।

मैनेजर बोले—लेकिन मान लें अगर आम लग जाये !

हँस कर अतुल बोला—आम तो घरेली ही ।

बहुत परेशान हो कर मैनेजर बोले—तब ?

—तो हम लोग क्या करें ? आप उन लोगों को सूचित कीजिए जो यहाँ के मानिक हैं । हेडऑफिस को टेलीग्राम कर दें, वम मामला रफादफा ।

मैनेजर बोले—वही तो है—कोयलरी मेरे अपने हाथ द्वारा बनायी गयी है...

अतुल ने हँस कर कहा—मैं चला तीन नम्बर की पिट में । मेरी इप्पटी है वहाँ ।

मारी-भरकाम बीम । गियरहेड एक भयंकर ककाल की तरह छत को छूता हुआ । उमी के तले साढ़े तीन सौ फीट गहरा एक बड़ा कुआँ पृथ्वी की छाती में छेद करता हुआ नीचे चला गया है । उस तरफ इजिन-गेड है । उस के पास ही दो ऑयलरी के कनेजों में रावण की चिता जल रही है । इजिन-गेड के उलटे तरफ एक छोटा रोड । यह पिट-ब्लक ऑफिस है । एक ओर छोटी सी बेंच । बीच में एक टेबिल । इस तरफ एक चेयर । टेबिल के पहर एक लासटेन असहाय भाव से चारो ओर के विराट् अन्ध-कार में टिमटिमाती-सी । रोड के बाहर लोहे की बड़ी ओरमी में दहू-दहू, करने हुए कोयले जल रहे थे ।

उमी आम पर अपनी भीगी हुई झोली सेंक कर मुड़ा रही थी एक कुम्भी की लड़की । चेयर पर अतुल बैठा हुआ है घुपचाप—उस तरफ की बेंच पर विनोद नाम का, बही छोकरा, एक खाने में कुत्तियों के नीचे उतरने-चढ़ने का हिमाज कर रहा था । सेबैर-रजिस्ट्रार की पदवी है उस की । विनोद के पास बैठा था श्यामापद—दो नम्बर ओवरमेन । उमी ने कहा—ओ री छोकरा ! अपनी झोली जला देगी क्या रे ?

इधर पिट-माउथ पर पण्डा बज उठा—टन्-टन्-टन् । नीचे से यह मनेल था कि आदमी ऊपर जा रहा है ।

इस संकेत के प्रत्युत्तर में 'टालवान' चिल्ला उठा—हो-इ ! यह संकेत
या इंजिन ड्राइवर को ।

घरघराता हुआ, शोर करता हुआ इंजिन चलने लगा । इंजिन की
गति के साथ-साथ गियर हेड के चक्के पर मोटे तार की डोरी का एक
सपेठा सनसनाता हुआ उम अन्धकूप में उतर गया । साथ-ही-साथ एक
और लौह-डोरी ऊपर की ओर आ रही थी । उसी डोरी के साथ एक 'केज'
आवाज करता हुआ पिट के मुँह से आ लगा ।

उस पिजड़ेनुमा घर में थे चार आदमी ।

बिन्नु ने पूछा—कौन हो रे ?

उत्तर आया—हम हैं जी, भक्ता के आदमी—नारायण भवता ।

इस पिजड़े से बाहर आमी—कीचडनुमा कोयले से पुती हुई भीमत्स
काली मूर्तियाँ । जलते हुए कोयले के प्रकाश में वे प्रेत-सरीसे लगते थे ।
नग-घड़ंग । मिर्के एक लेंगोटी । औरतों के हाथ में झोली । कोयले की
कालिमा-लिप्त सारी देह में दो सफेद चमकती आँखें देख कर डर लगता ।
बात करने पर दृष्टिगोचर होते उन के सफेद दाँत । शेट से बाहर आ कर
वे जरा मुँह उठा कर खड़े हुए । अतुल सोच रहा था कि वह मनेजरशिप
की परीक्षा में प्रथम स्थान पायेगा ही, उसे बिन्दु मात्र भी सन्देह नहीं है ।
खनिज-विज्ञान में वह दस हो उठा है । यही जो आग है—पृथ्वी के वक्ष
के भीतर लाखों-लाखों टनों कोयले की परतों में जो भयंकर अग्निफाण्ड
होता है—जो आग पानी से नहीं बुझती—उसी आग की बुझा देने का
आविष्कार उस ने किया है । लेकिन अपनी जिन्दगी खतरे में डाल कर
क्यों दूसरे का उपकार करने जायेगा वह । उस के जीवन का मूल्य, उस
की जिन्दगी की कीमत पचास रुपये नहीं !

टन्-टन्-टन् ! फिर हुआ संकेत । एक 'केज' नीचे उतर गया, दूसरा
पिट के मुँह पर आ डटा—घुच्चाक् ! 'केज' के भीतर कोयले भरी टच-
गाही । लियर-रजिस्ट्रार ने पूछा—क्या है आदमी या कोयला ?

ओवरमैन एक कुत्ती से कह रहा था—अरे, क्या नाम है—क्या नाम
है तेरा ? गुंघरना ! सुन, सुन, इधर सुन !

—है-हो ! होशियार !—छोटी लाइन पर कोयले से भरी टब-गाड़ी ठेल कर चिल्लाया टालवान । आवाज करती हुई गाड़ी लाइन पर सरग्री चली गयी ।

उम और पिट के मुँह पर घण्टे पर घण्टे बजते जा रहे थे । 'बेज' ऊपर-नीचे आ-जा रहे थे । गुरुचरण कह रहा था—मुझे नीचे उतरने को कह रहे हैं क्या ?

ओवरमैन नाराजी से बोल उठा—नही—कहता हूँ जो गुरुपुत्र मेरे ! मेरे पास दयापूर्वक आ बैठिए—मैं तुम्हारे पाँव धोवाँगा ।

मेयर-रजिस्ट्रार विनू अपना पाता लिखने-लिखते गुनगुना रहा था—
'तुम आये थे आज सबेरे ओ रे सुन्दर !

अनुन मन-ही-मन हँसा । मचमुच मजे में है यह छोकरा, घर में चाहे भूँजी भाँग न हो लेकिन यहाँ वह पोशाक पहन कर रानी सजता है । दो रुपये उस के कटते हैं और वह घर के भीतर गाना गा कर अपने को धन्य समझता है । कोयले का हिसाब लिखने समय भी वह गाता है—'सुन्दर तुम'...'

नीचे के अन्धकूप से आदमियों की हलकी माहट आ रही थी ।

ओवरमैन चिल्लाया—हाँको-हाँको-हाँको ।

पिट के मुँह पर खड़े दोनो टालवान एक साथ झुक कर आवाज दे उठे—हो-हे-ओ-हे !

अतुल जरा अन्धमनस्क हो कर चतुर्दिक् पमरे अन्धकार की ओर ताक रहा था । गम्भीर अन्धकार में कोयलरी में जलती हुई कोयलों की रोगनी जैसे रात्रि की देह पर कोइ की दाग हो ।

टन्-टन्-टन् !

दम बार और कई कुनी ऊपर उठे । वित्तासपुर के आदिवासी । औरतों की देह पर रुपये और जस्ते के गहने । गले में हँसुनी, पेरो में शीश, नाक में बेसर, एक हाथ में काँसे की खुटियाँ ।

घोडा सा विराम । इजिन रका हुआ है । 'बेज' स्तब्ध सा झूम रहा है । मेवल यॉन्वर स्टीम की शक्ति के कारण काँप रहा है—उमी बग्न

का आघात हवा की पतों को आन्दोलित करता हुआ शेड के छपरैलों से छाये घरों को भी कंपा रहा है। छपरैल कंपते हैं, उस पर की छोटी छिडकी कंपती है। फुरमत्त पा कर 'केजमैन' और टालवान कौटियों को गिन कर मजदूरी का हिसाब करते हैं।

जहाँ सोहे की बोरसी में कोयले दहक रहे थे, वहाँ दो-चार कुली आ कर जमा होने लगे। ये इस बार नीचे जायेंगे कुएँ में। किरासिन की छिबरी जला कर एक तरुणी ने बीड़ी सुलगा ली और शट से छिबरी बुझा दी। वह बोली—बाबू, कितनी देर तक बैठी रहूँगी, नीचे उतार दो अब।

अतुल सोचता है—यह उन का नशा है या भूख की प्रेरणा?

धिनू ने कहा—नीचे खान में जा कर सोयेंगी। फिर रात को जा कर कहीं काम पर लगेगी। घर पर ही सो तो सकती है।

तरुणी हँस कर बोली—अच्छा, तू एक गाना सुना दे न बाबू।

ओवरमैन बोला—तू नाचेगी तो, बोल ?

वह खिलखिला कर हँस पड़ी और हँसते-हँसते बोली—मेरा भरतार मारेगा जो धमाधम, मार-मार कर हड्डी तोड़ देगा, नहीं तो...

फिर यकायक एक बुढ़िया को पकड़ कर बोली—एह नाचेगी, इस का भरतार मर चुका है।

आस-पास की सभी जवान औरतें हँसी से पट पड़ी। उस तरफ़ अठारह-उन्नीस साल का एक लड़का अकारण ही दहकती हुई आग में देला फेंक रहा था। इसी इमारत की साइडिंग-साइन के ऊपर लोकोमोटिव की घाँसुरी तीव्र होती जा रही थी। अतुल ने पीछे धूम कर देखा। दक्षिण की ओर बहुत दूर पर रेलवे जंक्शन के गार्ड में अनगिनत विजली के बल्ब कतार के कतार जुगनुओं की तरह जगमगा रहे थे। इस तरफ़ बॉयलर की चिमनी में से ऊर्ध्वमुखी अग्नि-शिखा रुप-जिह्वा-सी लपलपा रही थी। उस अग्नि-शिखा के मस्तक पर अन्धकार से भी प्रगाढ़तर धुआँ जैसे फूल-फूल कर परसता जा रहा था। बीच-बीच में आग की लपटों के साथ

आती हुई ध्वनि क्षीणतर हो उठी। इजिन का शब्द अब नहीं सुनाई दे रहा था। पिट के दोनों ओर से पानी बह रहा था। नीचे के पानी बहने का शब्द और साफ सुनाई पड़ने लगा।

केज की गति धीमी होती ही इस बार केज आवाज करता हुआ पम गया।

विनोद चुपचाप स्तम्भ सा बैठा था। उसकेज के ऊपर आठें ही विनोद ने कहा—तो तू ऊपर आ हो गयी?

केज से बाहर निकली वही युवती। युवती का नाम था चुड़की। चुड़की बोली—

जो धुआँ और गर्मी है गहड़े में—भाग अइली—इस के बाद क्राक़ से हंग कर बोली—तोर गाना सुनै छातिर।

विनोद ने नाराजी से कहा—जा भाग यहाँ से।

शेट के कोपने की धूल पर ही आँचल बिछा कर चुड़की मो रही। बोली—तोर यड़ा भुमान हो गएस ह म रे बाबू जी!

विनोद चुप रहा।

चुड़की अपने ही मन बोली—तोर से नीक गाना हम जानी ला। मुन बा तू? और उस की सम्मति की अपेक्षा किये बिना ही उस ने अपनी भाषा में गाना शुरू कर दिया। गाने के बाद वह चुप हो गयी। थोड़ी देर बाद वह फिर बोली—आवाश में ऊ जीन तरई चमकत बा उ भूत्ता (भूयतारा) तारा ॥ न बाबू?

विनोद ने सब भी कोई जवाब नहीं दिया। चुड़की इस बार उठ कर उस के पास आ बैठी। फिर बोली—एक टो गाना तू काहे नहीं सुनावा बाबू? गभी तो तुम्हारा गाना मुन चुके—हम को छो मेरी माँ नहीं मुनने देती—जानत हो बाबू—का कहती है वह—तू बाबू को 'पियार' करने सगेगी!

विनोद को जैसे धीरे-धीरे नशा चढ़ रहा था। उस का नवजायन् यौवन अहंकार से भर उठा। उस ने हँस कर कहा—गाना तो घर में तुझे सुना दूँगा; तू क्या देगी बदन में मुझे?

चुड़की जैसे चिन्तित हो उठी। उस के बाद बोली—एक बड़ल का साल फूल मैं तुझे रोज दूंगी।

विनोद बोला—घट् ! बड़ल का फूल ले कर क्या करूंगा मैं ?

—काहे, कान पर रख सकत हवे, नाही तो जुलफी में खोस लिहे। तू हमका रोज गाना सुनैवे तो।

एक बहुत बड़ी टनेल के बीच से अतुल चल रहा था। गैस की रोशनी में कोयले के तीक्ष्ण-मूकम कण धिन्धवत् उद्भासित हो रहे थे। हाथ की वह गैस-डिवरी मुंह के पास ले जा कर एक बीड़ी सुलगाने की कोशिश की अतुल ने, पर श्वास के कारण वह बुझ गयी। घुप्प अँधेरा। कहीं कोई शब्द नहीं। घुएँ के मारे साँस लेने में तकलीफ हो रही थी। पॉकेट से दियासलाई निकाल कर अतुल ने फिर से रोशनी जलायी। टनेल अब तिरछी हो गयी थी। थोड़ी दूर चलने के बाद अतुल ने घुएँ के बीच कुछ अंगार जैसी रोशनी देखी। आदमियों की बातचीत की भनक भी सुनी उस ने। कोई चाँसुरी बजा रहा था। टनेल के बगल में ही कुलियों ने बिछौने लगा रोगे थे। दो कुली युवक चाँसुरी बजा रहे थे अपने में ही डूबे-से। कितनी तदणियाँ गा रही थी। अतुल पश्चिमी गैसरी की ओर मुड़ा। इधर ही आग है। गर्मी और धुआँ क्रमशः बढ़ते जा रहे थे। अतुल घड़ा हो गया। उस के जीवन का काफ़ी भूत है। वह सौट कर मजदूरों से बोला—तुम सब लोग पिट के मुहाने पर चले जाओ, मैनेजर के आने पर काम करना।

यह हालत देख कर मालिक बिचारा तो माथे पर हाथ रख कर बैठ गया। मैनेजर परेशान हो उठे।

अतुल ने कहा—मैं कर सकता हूँ। हाँ, ज़िम जगह आग लगी है, वह अवश्य सदैव के लिए खरम हो जायेगी। और दूसरी जगहें सुरक्षित रहेंगी।

मालिक उस का हाथ पकड़ कर बोले—यही करिए, जो भी छर्च हो, कोई फ़िक्र की बात नहीं।

अतुल ने बिना साग-सपेट के स्पष्टतः कहा—लेकिन मैं किस स्वार्थ से अपनी जिन्दगी को दाँव पर लगा कर आप की भसाई करूँगा ? मेरी मजदूरी दोगे तो ?

मालिक तो अवाक् ! उन्हें याद आया, कई वर्षों पहले का पट्टेहान-भूषा-प्यासा-थका-हारा एक लडका । उस दिन दया के कारण उसे नौकरी दी थी उन्होंने । एक दीर्घ निःश्वास लेकर मालिक बोले—यह बात आप से सुनने की उम्मीद नहीं थी अतुल बाबू !

अतुल ने हँस कर कहा—सगता है आप सोच रहे हैं कि मुझे शरण और नौकरी दी थी आप ने । लेकिन मैं जो इतने दिनों तक आप के पाम रहा, क्या मैं ने बिना मेहनत के कोई वनछ्वाह सी है ? मैं जो मेहनत करता था, उन्ही की मजदूरी आप देते थे । खालिस अदसा-थदसी है यह, दान नहीं, आज तक मैं ने अपनी जिम्मेदारी में खरा भी कोताही नहीं की ।

मालिक बोले—आज चाहते क्या हैं ?

अतुल ने कहा—एक बड़ा भाईनिग इजीनियर जो लेता, वही लूंगा मैं । हाँ, पचास रुपये मेरी तनख्वाह उस में से काट लेंगे आप ।

मालिक राखी हो गये । बोले—वही पायेंगे ।

अतुल बोला—कन्ट्रैक्ट कानूनी दृष्टि से ठीक-ठाक होना जरूरी है । कागज पर लिख कर दे दीजिए ।

वह भी हो गया । अतुल बोला—फायर-ब्रिक्स और फायर-बने चाहिए । जिन गैसरेयों में भाग लगी है, उन्हें बन्द कर देना चाहता हूँ मैं ।

मालिक ने प्रश्न किया—उन से क्या होगा ?

अतुल ने हँस कर कहा—उम्मी में भाग बुझेगी, सर ! नहीं तो पानी भर देने से भी भाग नहीं बुझेगी । जिन दिन पानी निकाल कर काम शुरू करेंगे, उसी दिन फिर गैस शुरू हो जायेगी ।

इजिन आज बिसकुस बन्द है । कोयले की छानें भी बन्द हैं । वैमल स्टीम के साप-भाप पॉम्पिंग की आवाज आ रही थी ।

सारी की आवाज से कोयलरी मुग़रिन हो उठी । सारी में शाल-भतवाह आ रहे थे । जोर-जोर से काम शुरू हुआ । पहली बारी चम्म हो गयी । लेकिन बुनी नोचे उतरने को राखी नहीं हो रहे थे । कुमी-रिट्टर क्रतियो में सब का प्यारा था । वह दरवाजे-दरवाजे धूम कर भाग आ

कर बोला—कोई भी नीचे नहीं उतरना चाहता। वे सब कह रहे हैं कि बिना साँस लिये हम सब भर जायेंगे, बाबू ! वह हम लोग नहीं कर सकेंगे। कितने कुली तो भय के भारे कल भाग गये।

हाफपैट के पॉकेट में दोनों हाथ डाल कर अतुल ने कहा—दो रुपये रोज दूंगा। चार घण्टे का काम है। आप फिर जा कर कहिए।

रिक्शूटर चला गया। अतुल स्वयं एक फायर-ब्रिक्स से भरी टब-गाड़ी को ठेलते-ठेलते बोला—इडियट कहीं के ! रुपये से दुनिया खरीदी जा सकती है—आदमी क्या दुनिया से बाहर है ?

इस के बाद छूट हो घण्टा बजा कर आवाज दी उस ने—हं-हो-हइया !

इंजिन चलने लगा।

मेस के कमरे में बाबूओं की व्यस्तता की सीमा नहीं रही। पता नहीं कब किस की पुकार पड़ जाये ! कालीपद सॉटरी के टिकिट का नम्बर भूल गया है। सर्वेयर बाबू प्लान-पेपर्स ले कर बैठे हैं। गैस कहाँ तक बढ़ आयी—इसे आँकने में लगे हुए हैं। निशान पर निशान लगाये जा रहे हैं। विनय की हारमोनियम बन्द है। सीतापति बलक की चित्रों की काँपी बक्स में बन्द हो चुकी है। रंग की कटोरियाँ सूख चली हैं। स्टोर बाबू माल-असबाय जमा करते-करते और खर्चा लिखते-लिखते हाँफ चले हैं। विनोद नीचे उतरने की पोशाक पहिन रहा था। घर के उत्तर की तरफ एक खुला मैदान। उसी ओर के जंगल से कोई बोला—एक ठो गाना सुना न रे बाबू !

विनोद ने धूम कर देखा कि धुड़की है। सिर्फ धुड़की ही नहीं और भी दो-तीन लड़कियाँ। इन कासी-कसूटी उबड़-अबड़ सड़कियों के भारे तो उस की नाक में दम रहता है। जितने मुँह उतनी बातें सुनाई पड़ती हैं उसे से कर। छुट भी घुणा होती है।

उस ने कहा—आ, जा, परेशान मत कर।

एक दूसरी लड़की बोली—काहे गोस्सा करत हो बाबू ? एक ठो गाना सुनाय दे, हम सब चल जायें।

एक ने कहा—चुड़की तोर खातिर अड़ल फूल लियाइल बा। देन रे चुड़की—बाबू के देन रे फूल !

चुड़की ने अड़ल फूल फेंक दिया विनोद के बिछीने पर। फिर यह बोली—ले बाबू, ओके कान पे धर ले। बहुत नीक सागी रे लोके।

विनोद की इच्छा हुई कि फूल को नोच कर वह फेंक दे। लेकिन यह भी नहीं कर सका वह। यह उस की एक कमजोरी है। खुद भाव से यह किसी को आपात नहीं कर सकता। परेशान हो कर विनोद ने प्रार्थना करते हुए कहा—भाग जाओ तुम लोग अभी। अभी मत सिर घाओ। देखती नहीं कि मैं नीचे घान में उतरने जा रहा हूँ।

आश्चर्यान्वित हो कर चुड़की ने कहा—घान तो जल के घाक हो गइल तोर रे।

—तेरा सिर हुआ है। तुम सब काम भी नहीं करोगी—अब तुम्हारा काम हम लोगों को करना पड़ रहा है।

चुड़की बोली—मच्चे कहत हउवे त ? नीचे घान में गइले पर मर त न जाये ?

अपने आप हँस कर विनोद ने कहा—अच्छे मूरख से पाला पड़ा—क्यों मरेगी भाई ? यह देख, मैं तो जा रहा हूँ। तुम लोगों को दो रुपये—तीन रुपये हाजिरी दूँगा। आजोगी तुम लोग ?

एक तरणी बोली—हाँ रे बाबू, मच्चे त ? तीन रुपये क हिसाब से देवे त ? अउर मरद नाही जावै न ?

—अरे, नहीं, नहीं, नहीं। जितनी बार बहूँगा तुम सब को ?

चुड़की बोली—तू रहवे त तो बाबू नीचे घान में ? हमने क नीचे पहुँचा के छूद भाग त ना अइवै न ?

—अच्छी आप्रत है रे बाबा। अरे भाग कर आने की हिम्मत कहाँ है ? नोकरी बनी जायेगी जो।

अपनी भापा में आपस में बक-बक कर के चुड़की ने कहा—अच्छा, मरद-मजूर सब के बोला लियाई रे बाबू ! लेकिन तोहे एक ठा गाना गुनावे के होई !

इस के बाद अपनी सहेलियों को पुकार कर कहा—‘देता दो’ !
बर्खास्त चलो, चलो ।

जगली, काली-कलुटी तरुणियाँ नाचते-नाचते चली गयी ।

थोड़ी देर बाद कुछ मजदूरिनें आयी और उन्होंने पूछा—सचमुच
सीत रुपया क हिसाब देवे ?

अतुल ने कहा—वही पाओगी ।

—हाँ रे बाबू, तोहनीक त सगे रहवे न ?

हँस कर अतुल ने कहा—तुम लोगों की बगल में मैं खड़ा रहूँगा ।
इस के अलावा राजमिस्तरी रहेगा और बाबू लोग भी रहेंगे । तुम लोग
अकेले नहीं रहोगी ।

—तब त ठीक ह बाबू ! सड़कियन सब के नीचे उतरे देवे त ?

अतुल जानता था कि इन औरतों को छोड़ कर ये कही नहीं जा
सकते । राजगद्दी पाने पर भी नहीं । हँस कर अतुल ने कहा—ठीक है, वे
भी नीचे उतरेंगी ।

प्रिन्सेस ने धीमे स्वर में कहा—यह तो पैर-कानूनी होगा अतुल
बाबू !

केज-केज खोलते-खोलने अतुल बोला—नेसेसिटी हैज भो ला !
कानून मानने पर तो ये छानें जल ही जायेंगी ।

इस के बाद उस ने आवाज दी—हे-हो-हइया ! ईंटों की गाड़ी लाओ !

भेंधेरी छान में आदमियों के काम-धाम का कोलाहल अविराम गति
से चल रहा था । ऊपर भी वही हाल था । छान के मुहाने पर पंजांची
बक्म ले कर बैठा था । साथ ही साथ कुलियों की मजदूरी चुकता कर दी
जा रही थी । शोध के बीच बैठा था बूढ़ा डॉक्टर । गियरहेड के दोनो चक्के
अनवरत घूम रहे थे—घड़-घड़-घड़ ।

नीचे में सकेत आ रहा था कि लोग ऊपर आ रहे हैं ।

टालवान ने इजिन ड्राइवर को संकेत दिया—हे-हो-हे । दो मिनट
बाद हड़हड़ाता हुआ केज ऊपर आ रका । एक बलकं, एक कुली और एक
कुली पुबती उतरी । पुबती की छाती में दर्द हो रहा था । ऑक्सीजन-

सिलिण्डर की आधी खोल कर उसका दृश्य युवती की नाक के पास ले आ कर डॉक्टर ने कहा—डर नहीं है ।

नीचे से फिर सकेत आया—घड़-घड़ । एक आदमी ऊपर आ कर बोला—माटी, माटी की गाड़ी जल्दी भेजो ।

खजाची हिसाब कर रहा था—तीन दूने छह—यह ले बेंचट, छह रुपये मजदूरी तुम सब की । नीचे की छान में बिछी हुई पटरियों पर गाड़ी धीरे-धीरे चल रही थी, एक आदमी ने उसे ठेल कर उस की स्पीड जग लेज करने का प्रयत्न किया । और भी भीतर की ओर जहाँ आग लगी हुई थी वहाँ गैलरी के मुहाने-मुहाने पर इँटें आँधी जा रही थी । बीस-पच्चीस मिनट के अन्तर पर दूसरा आदमी आता था । कोयले की गैस के कारण श्वास बन्द होती जा रही थी—विवर्ण पांशु कुली सूंमते-सूंमते, गिरते-पड़ते ऑक्सीजन-सिलिण्डर के फनेल के पास आ कर पड़े हो रहे थे । अतुल की पीठ पर गोताघोरे की तरह एक छोटा-सा ऑक्सीजन सिलिण्डर बँधा हुआ था, उस के दोनो नल नाक के पास लगे थे जो श्वास-प्रश्वास में सहायता दे रहे थे । अतुल लगातार घूम-घूम कर गलरी की निकासी की ओर आ-जा रहा था ।

उस ने कहा—जल्दी-जल्दी—अब सिर्फ तीन गैसरियाँ बचती हैं, चलो भाई, चलो, शाबास ! देरी हुई कि सब स्वाहा । तब गैस सभी गैसरियों से निकलना शुरू करेगी ।

विनोद एक गैसरी के मुहाने के पास घड़ा था । चुड़की गारा बी रहा थी । उस का बेंचट इँटें बँटा रहा था । गारे का बरतन फेंक कर चुड़की बोली—अब नहीं कर सबब !—बहु हाँफ रही थी ।

विनोद बोला—जा जा, बहूँ चली जा, हवा ले ले ।

—हट जाओ—हट जाओ—ईंटा की गाड़ी है ।

विनोद सरक कर घड़ा हो गया । हडबडानी हुई गाड़ी चली गयी ।

—मिट्टी-मिट्टी-फावर-बने—अनुन चींघ रहा था । उधर से बोर्ड चिल्लाया—आदमी गिर पड़ा है वहाँ, जल्दी ले जाओ ।

अतुल तेजी से विनोद की बगल से होता हुआ कहता जा रहा था—
और दो गैलरी—बस दो गैलरी !

धुआँ तेजी से बढ़ रहा था। विनोद को कष्ट हो रहा था। वह जरा सरक कर पचीस नम्बर की गैलरी के मुहाने के पास खड़ा हुआ। जगह जरा एकान्त थी और उधर अट्ठाईस नम्बर में काम हो रहा था। बस सत्ताईस नम्बर की गैलरी बन्द होते ही लड़ाई खत्म। पृथ्वी के गम की अग्नि श्वासरुद्ध हो कर मृत हो उठेगी। इसी बीच पता नहीं किस ने उस की आँखें मूंद ली। एक झटके में विनोद ने उमे घकेल कर अपने को छुड़ा लिया। उस के क्रोध की सीमा नहीं रही। चुड़की गिर कर भी खिल-खिल कर हँसनी रही। जूते की एक ठोकर चुड़की के मुँह पर मारते हुए विनोद ने कहा—मारे डंडों के मैं तेरी छोपड़ी चूर कर दूँगा।

चुड़की कफक कर रो पड़ी। वहाँ से विनोद भाग आया। जाते-जाते पीछे घूम कर ताका उसने।

धुएँ में कुछ भी साफ नहीं दीख पडा। लेकिन एक दबी हुई क्लार्क का स्वर वह अथ भी सुन रहा था। विनोद पीछे घूमा। पुकारा उस ने—
चुड़की ! अरी ओ चु-उ-इ-अ-की-ई ! जा काम पर जा, जा, जा।

—नाही, मो जावो ना। तू हमरा के काहे जूता से मारली रे ?

उधर से हड़-हड़ करती हुई टब-गाड़ी आ रही थी। जो उमे ठेल कर सा रहा, था—उसी ने आवाज दी—हे-हो-हइया, हट जाओ। खबरदार ! हे-हे-हो, हट जाओ।

विनोद वहाँ नहीं रुक पाया। सिलिण्डर के पास ऑक्सीजन लेने के बहाने बह चला रहा। औजार आदि टब-गाड़ी से लौटाये जा रहे थे। शायद काम खत्म हो गया था। कई आदमी किसी को धर-पकड़ कर उठा लाये।

—धंटी मारो टालवान, धटी मारो जल्दी, पाँच आदमी गिर गये हैं। पीछे से एक आदमी और आया। विनोद ने पूछा—क्या मामला है जो ?

—और क्या होगा ? एक ओर में गैम जोर मार रही है। पीछे लौट आना पड़ा।

—कितने नम्बर तक पीछे हटना पड़ा ? सन्-सन् करता हुआ बेज ऊपर उठ चला । उत्तर नहीं मुनाई पड़ा । विनोद तेजी से घान की ओर बढ़ चला ।

पन्द्रह नम्बर गैलरी का मुँह बन्द हो रहा था ।
अतुल किसी को कह रहा था—कोई उपाय नहीं है, बारह गैलरियाँ

छोड़ देनी पड़ी ।

विनोद चिल्ला पड़ा—जुड़ाई रोक दो—भीतर आदमी है ।
उस का मुँह दबा कर अतुल ने कहा—गेट आउट ।

विनोद सकरुण दृष्टि से ताक कर बोला—चुड़की ।
अतुल ने बीच में ही रोक कर कहा—ऊपर चले जाओ तुम—फिर

अँगरेजी में एक स्लिप लिख कर उस के हाथ में देता हुआ बोला—
कैशियर को देना ।

कागज पड़ कर बीस रुपये विनोद की हथेली पर रखते हुए कैशियर बोला—तुम्हारी तनदशाह है । एक घण्टे के भीतर कोयलरी छोड़ कर चले जाओ तुम ।—छोटू सिंह !

—हुजूर !—छोटू सिंह बही था ।
—एक घण्टे के भीतर बाबू को अपनी चौदही से बाहर कर दोगे ।

नीचे का काम समाप्त हो चला था । अतुल ने रुमास से अपना माप पोंछते-पोंछते मन ही मन कहा—ही लम्ब हर ! तब से कह देता । फूल ! जानता नहीं कि जो सम्पत्ति बच गयी है, उस से उस लड़की की तरह के हजारों औरनों-मर्दों की रोटी-रोखी हो गयी है ।—वीकिंग दो । पावर-बैने की वीकिंग दो । एक बूँद भी गैस न आने पाये ।

आग धम गयी है । कोयलरी बँस ही पहुँचे की तरह चल रही है । बेज भीचे-ऊपर आता-जाता है । रात को कामगर कुत्ती औरत-मर्दों की भीड़ आती है—बाबू सांग नाम लिखते हैं । टालवन चिल्लाता है—हँ-हो-हो—इशिन बसना है—क्रेम नीचे उतरता है ।

सन्ध्यामणि

हिन्दू शासनकाल का अक्षय-पुण्य महिमा मय एक स्नान-घाट । गंगा यहाँ दक्षिण की ओर बहती है । राठ प्रदेश की विरुपाक्ष यादशाही सड़क संगतार पूर्व की ओर आती हुई इसी घाट पर ख़त्म हुई है ।

सड़क के दोनों तरफ़ घाट के ठीक ऊपर ही एक छोटा सा बाज़ार है । बाज़ार माने बीस-बाईस दुकानें, कई मिठाइयों की, दो बनियों की, छह-सात कुम्हारों की, मनिहारी और पान-बीड़ी की तो हैं ही । घाट के बिलकुल ऊपर दो आदमी गंगाफल अर्घान् केले और ढाय बेचते हैं ।

दोपहर तक पुण्यकामी तीर्थयात्रियों के समागम से इस छोटे से बाज़ार में तिल धरने को भी स्थान नहीं रहता । चीत्कार और कोलाहल से सारा बाज़ार गूँजता रहता है, जैसे एक मेला हो । अस्तायमान भूम के संग सभी यात्री अपने-अपने घरों की ओर चने जाते हैं । अग्निकारपूर्ण, जनहीन बाज़ार तब साय-साय करता है । तब दम-पाँच व्यक्ति जो आते हैं वे पके-भाँड़े मुरदे जला कर सौटने वाले सोम । किराये के घर में आ कर ये भाग्यहीन लोग देह ढोसी कर के पड़ रहते—कोई शोक और क्लान्ति के कारण सो जाता, कोई धुरचाप लम्बी साँस से कर करवट बदलता रहता, कुछ की आँखों से आँसू धूँते रहते । दो-चार बातें मृतक अथवा मृत्यु के सम्बन्ध में

भी परस्पर बातचीत में उठ जाती। ठीक जैसे बुलबुलियों की तरह ये बार्ने होतीं, फिर चुप्पी छा जाती।

बाजार का कोलाहल इन भाग्यहीन जनो से और नहीं बढ़ पाता। उस समय जो आवाज होती—वह कुछ दुकानों की होती। दुकानदार अपनी-अपनी दुकानों में बैठ कर दिन भर का नफा-नुकसान मिलाते। हंसी-टट्टा चलता, और काम भी होता रहता।

कातिक के उत्तरार्ध की एक शीतकातरा सन्ध्या। बीड़ी का दुकान-दार छपकू अपनी बीड़ियाँ सेंक रहा था। किसी मेले से लौट कर आया हुआ कालीचरण अपनी दुकान सजाने में व्यस्त था। पास का बूढ़ा कुम्हार कुछ गढ़ रहा था। उन के हाथ में मँदे की तरह सनी हुई मिट्टी का सौदा। सौदे से बन गया डमरू। निपुण उँगलियों के दबाव से देखते-देखते उम डमरू के दोनों ओर दो कान गढ़ जाता उस ने। बीच में लम्बा चिपटा मुँह, पीछे ऐंठी हुई पूँछ, नीचे चार पैर। सब कुछ मिला कर बन गया एक घोड़ा। पास के सब लम्बे पीढ़े के ऊपर एक के बाद एक कर के पक्षिराज गहड़ की बाहिनी सजा कर रखी जा रही थी।

बूढ़े कुम्हार के घर के सामने ही रास्ते पर शाहूण की लडकी कुमुम का घर। अपने छप्पर के घर के बरामदे में बँठी सासुटेन के प्रकाश में चटाई बुनते-बुनते बूढ़े कुम्हार के साथ गप्प मार रही थी। लडकी कम उम्र की थी, सावण्यमयी भी, लेकिन अभागिन। आगे-पीछे कोई नहीं, बस आवारा पति। चटाई बुनना ही उस की जीविका थी। रोज ही ऐसी बातचीत होती रहती—सुघ-दुघ की बात, दो-चार हंसी की भी बार्ने। एकाध दिन बूढ़ा कुम्हार दूसरी कहानियाँ भी सुनाता, बाम करने-बरने कुमुम हँ-हाँ करती जाती। बूढ़े कुम्हार के रक जाने पर वह बहनी—उस के बाद?

पास कहता—इस के बाद अक-अक कर के बूढ़े का गला सूख उठता, सम्याकू पीने की दृष्टा होती उलकी—लेकिन नातिन यह सब नहीं मढ़ पाती।

नातिन कौतुक में हँस उठती।

उस तरफ बनिये की दुकान पर एक रुपये को ठोक-बजा कर देखा जा रहा था। खरीदारों की भीड़ में पता नहीं कब किसने ठगा था बनिये को। पास के दुकानदारों में से कोई कहता था चलेगा, कोई कहता था नहीं चलेगा। बनिया बार-बार रुपये को पटक कर आवाज बढ़ाना चाह रहा था, लेकिन उस से ठन् की आवाज नहीं आ पा रही थी।

पास के दुकानदार धीड़ीवाले छक्के के बाप द्विजदास ने कहा—पटकने पर चीख पैदा होती है भाई, स्वर नहीं निकलता। तुम उस रुपये को गंगा जी के नाम में खर्च खाते दिखा कर हाथ धो लो।

द्विजदास की बात बनिये को अच्छी नहीं लगी। वह अपने ही आप उस ठगने वाले को गाली दे उठा—किस साले ने गंगा के तीर पर ऐसा पाप किया पुण्य करने आ कर भी।

द्विजदास ने चटखारा ले कर कहा—फल तो उसे हाथों हाथ मिल गया। इस रुपये का सोलहो आने ही उस का लाभ है।

उधर कान देने से दुख का बोल भारी हो उठता। बनिया शाप देता हुआ सा कह रहा था—जा, जा, गंगा के तीर पर जैसे तू ठगा है, वैसे ही नरक में जायेगा तू। मेरा तो खैर मोलह आना गया। फिर एक क्षण बाद उस ने कहा—बारह आने में तो चल ही जायेगा, रानी मार्का है। क्यों बाम, क्या राय है तुम्हारी?

दास हँसा चुप में। उस के साथ भी उस दिन ठीक ऐसा ही हुआ था।

यदरोपें आसमान की छाती से ले कर भाटी की मोद तक एक घना जमा हुआ अँधेरा। मृदुस्वरा गंगा खाँसी के पत्तर भी चमचमा रही थी। घाट के ऊपर पीपल के प्राचीन वृक्ष के किसी कोटर में बैठा हुआ एक उल्लू भीख रहा था। उस की नीरुण बोली से मयौंग मिहर उठना।

गंगा की मृदु ध्वनि के ऊपर कभी-कभी पतवारें छूँ-छप् करती कोई नौका कटवा बाजार की ओर फली जाती। नौका के भीतर की क्षीण प्रकाश-रेखा में गंगा के वधस्थल पर तरंग खचित प्रतिच्छवि दीख पड़ती। दूर अमगान घाट से आवाज मुनाई पड़ती—बोनो हरि, हरि बोल, बोनो!

बनिया बोला—दास, एक दूसरा नम्बर आया!

गम्भीर हो कर दास ने कहा—हिसाब की वही कहाँ है रे छक्कू !

छक्कू ने अपने बाप के हाथ में हिसाब-वही दे दी। हिसाब-वही ले कर दास श्मशान की ओर चला गया।

श्मशान घाट इस बार द्विजदास ने ठेके पर लिया है। उमींगर को वार्षिक चन्दा देना पड़ता है ग्यारह सौ रुपये। प्रति मुरदे पीछे कच्चे रुपया एक आना सेता है।

बनिये ने कहा—तुम लोगों का भाग्य अच्छा है छक्कू ! इस बार छूब आ रहे हैं मुरदे।

सह बात छक्कू को उतनी भली नहीं लगी। उस ने बिना जवाब दिये ही बीड़ी के बण्डल उधर-उधर सरकाना शुरू कर दिया। उधर बूझा कुम्हार घोड़े की पूँछ टेढ़ी करता कह रहा था—आजकल सब कुछ उसटा हो चला है, जाननी हो—

जिन के पास नहीं है धन वह चीन से सोता,
जो धनवान, चिन्ता उस को रात सदा जगता।

कहानी चल रही थी टर्कती की। घागे के बीषोबीष बढ़ाई की पतिमाँ बुनते-बुनते कुमुम ने हँस कर कहा—तब तो रात को तुम्हें नींद नहीं होती पास ?

पास के जवाब देने के पूर्व ही सँते-कुर्बाने बीषड़े लपेटे हुए अगधार में से केनाराम चटर्जी टपक पड़ा दुकान के सामने—क्यों री, कितने नींद नहीं आती ?

पास कह उठा—नतिशामाद अरे ! आओ, आओ ! कब आये बेटा ?

कुमुम ने चौंष्ट ग्रीष्म लिया। केनाराम ही कुमुम का पति है। एक ही गाँव में ही विवाह हुआ है। लेकिन केनाराम किसी से एक कौड़ी उधार नहीं लेता। बन्धन-बिहीन मुक्त, स्वच्छन्द मस्तमौला है वह। प्यो नहीं, बात नहीं। बन्धन में है बिचारी कुमुम—वह बन्धन भी तोड़ फेंका है केनाराम ने। पहले तो वह घर में रहता भी था, तब तो सचमुच ही एक बन्धन था—तीन-चार साम की सड़की भी सन्ध्याभंगि। तीन महीने हुए वह सड़की चल बारी, तब से सब कुछ छोड़ दिया है। इस मुहूर्त्त में वह छूब आना-

जाता भी नहीं, एक भी बात कुसुम को नहीं कहता। कुसुम भी उसे कुछ नहीं कहती। कहाँ जाता है—दस दिन-बीस दिन कहाँ रहता है, फिर एक दिन आता है।

पाल की उस आवभगत पर चटर्जी ने जरा भी कान नहीं दिया। किसे नींद नहीं आती—इसे से कर उस ने सिर भी नहीं खराया। उधर काली की दुकान पर उस की नजर पड़ी, काली को देख कर उस ने कहा—अरे काली, तू ! तू कब सौटा मेले से ? ऐं ?

दो डग आगे बढ़, काली के दुकान पर बैठ कर, उस ने फिर पूछा—इस के बाद कह—हाँ, मेला कैसा लगा ? अरे, बीड़ी तो जरा दे, भाई !

खुद ही उस ने बीड़ी-माधिस उठा ली।

काली ने सल्लेप में कहा—खूब मजेदार है मेला, भीड़ भी है काफ़ी, खरीद-बेच भी खूब है।

साहूण ने तबः बीड़ी सुलमायी थी, उस के मुँह में काफ़ी घुआ भरा हुआ था। काठ की आलमारी में सिगरेट के खाली डिब्बे सजाते-सजाते काली ने कहा—इस बार वहाँ मेले में पतुरियों को नहीं बैठने दिया, सभी को भगा दिया।

चटर्जी के मुँह का घुआ हठात् हुश शब्द के साथ बाहर ही उठा, वह बोला—यह कैसे रे ? किस ने भगा दिया ?

—सरकार की ओर से साहब आये थे। चौकीमो घण्टे दारोगा और पुलिस तैनात थे। उन्होंने ही भगा दिया। ओह, दारोगा कितना मोटा था, ठीक जैंगे गंगा का सोईस, समझा रे छक्कू।

केनाराम बुपचाप पता नहीं क्या सोच रहा था, हठात् उस ने कहा—भगा दिया ? क्या हुआ उन का, रे काली ?

उस सरक पाल की आवाज सुनाई पड़ी—अरे नतनी, कहाँ चली इतने सवरे ?

कुसुम की ओर से कोई उत्तर नहीं। ठीक इसी समय मारा बाजार कुछ क्षणों के लिए निस्तब्ध सा हो उठा। ऐसा भी कभी-कभी होता है—

बहुत-से लोगों और शोर-शराब के बीच भी यकायक एक निस्तब्ध राज आ जाता है ।

चाटुग्जे ने सर्वप्रथम गीरवता भंग करने हुए प्रश्न किया—वे बहुत गरीब हैं न ? काली ?

काली ने नीचे मुँह किये कहा—बहुत ।

उम ओर से छक्कू ने आवाज दी—यात्रा करना होगा चाटुग्जे मोहाम—हम लोगों ने यात्रा-दल मगठिन किया है ।

चाटुग्जे घुम रहा ।

छक्कू ने फिर कहा—सुन रहे हैं ब्राह्मण देवता ?

नाराज हो कर चाटुग्जे गया घाट की ओर चला गया भँप्रे में ।

काली ने हँस कर कहा—उन स्त्रियों के बारे में सोच रहा होगा ।

एक गलत करने हुए छक्कू ने कहा—अपनी बीबी की बात बौन सोचता है ।

धीरे से काली ने कहा—बयों, पास दादा तो हैं !

दोनों जन हँस पड़े ।

चाटुग्जे उसी समय फिर । गाल पर हाथ रख कर किताबुल स्वर में उस ने कहा—उन औरतों का अन्त में फिर क्या हुआ रे, काली ?

—अरे भाई, उसी जगह बेपारी सब बिना धाये-पिये मूछ कर***

छक्कू ने बीब ने ही बात काट कर कहा—नहीं ब्राह्मण देवता, बेकार की बातें क्यों सुनते हैं ? उन सब को भाड़ा दे कर उन के घर पहुँचवा दिया है ।

चाटुग्जे गद्गद हो उठा । उम ने कहा—बहुत अच्छा हुआ है । शाहब का दिमाग है न भाई !—इस के बाद रुक कर कहा—हाँ, पूरा जाने क्या कह रहा था छक्कू ?

हम लोगों ने यात्रा-दल मगठिन किया है । हरिश्चन्द्र का समान में

१. बौनवान में बटखी का चाटुग्जे (बट्टीशाह्याय, गङ्गा) बट्टी है बँटना ।
—अनुवादक

शैव्या से मिलन का पाटं होगा—लेकिन तुम्हे हरिश्चन्द्र का पाटं करना होगा ।

ऐसे ही अपनी देह पर का कपड़ा कमर में लपेट कर चाटुज्जे ने कहा—हरिश्चन्द्र तो मैं यूँ ही हूँ रे, देखेगा ?—शैव्या, शैव्या ! रोहिताश्व ! रोहिताश्व !! लेकिन नगे बदन जाड़ा लगता है रे !

—अरे, बाभन को जाड़ा, अरे जिस के मुँह की फूँक से आग जलती है वह ! लेकिन बाभनदेवता ! इस बोली से तो नहीं चलेगा, किताब की बोली का अभ्यास करना होगा । यह देखो, पुस्तक खरीदी है ।

शक्ति दृष्टि से एक बार चाटुज्जे ने छक्कू की ओर ताका । इस के बाद तनिक हँस कर कहा—सच कह रहा है रे छक्कू ?

—कब तुम से झूठ कहा है, जरा बताओ तो ?

—दे, जरा किताब दे तो अपनी । क्या बोलना होगा जरा देखूँ ।

छक्कू ने उसे किताब थमा दी । किताब लेते ही चाटुज्जे ने भाषण आरम्भ कर दिया—रानी, रानी, तुम तो कोमल शैव्या के अतिरिक्त कहीं नहीं सो सकी, उफ़ ! आह ! बेटे रोहिताश्व ! ओ मेरे लाल (रोहित का गला अपनी बांहों में जकड़ कर)—

उस तरफ काली ने मुँह बना कर चिढ़ाते हुए कहा—बाप रे बाप धुंधिल ! हनुमान् केला खाने लगे !!

इस मजाक को चाटुज्जे गमम गया । किताब को छक्कू की दुकान पर फेंक कर शोध से उस ने कहा—देख रे कलिया ! तेरे पास मान लिया कि पैरो हो गये है, इस का मतलब यह तो नहीं कि छोटे-बड़े का विचार नहीं करेगा !

काली इस से भी नहीं दबा, अग-भंगी करते हुए उस ने कहा—वन मॉन आइ मेट्ट ए नेम मैन इन ए लेन कसोट्ट टु मार्ट फार्म !

अंगरेजी की बात आते ही चाटुज्जे दम्भ सहित इस के आगे-पीछे की पंक्तिर्षा सर-शर सुना गया ।

चाटुज्जे ने शोध में झुलसते हुए कहा—मैं यदि ब्राह्मण हूँ तो तेरा—क्या होगा, जानते हो ?

—क्या होगा जरा बताओ तो ?

फई धण सोचने के बाद चाटुग्जे ने कहा—नहीं जानता, जा, जा, चला जा । फिर चाटुग्जे वहाँ नहीं रहा । दनदनाता गगा घाट की ओर चला गया । कासी का मजाक उस के कलेजे को बेध गया था । जाते-जाते एक लम्बी साँस ले कर अपने मन में ही कहा उस ने—जा, तू ने जो कहा सो कहा, मैं थाप नहीं दूँगा तुझे । बड़ी बुरी मौत मरता नहीं तो ।

बूढ़े पाल को बैठक में तब कहानी का दौर जम चुका था । कुमुम बग से आ कर वहाँ खड़ी थी, किमी ने नहीं देखा । कहानी सुनाते-सुनाते हटान् उसे देख कर पाल ने कहा—अरी नातिन, आओ, आओ । रात अधिक नहीं हुई है । बिना तुम्हारे तो बैठक ही नहीं जम रही है ।

कुछ भरी-सी आवाज में कुमुम बोली—नहीं, तबियत बहुत ठीक नहीं है मेरी । फिर अनावश्यक भाव से सफाई देते हुए कुमुम ने कहा—दीना फिर बुझ गया, तेल लेती आऊँ ।

बुझी हुई सातटेन ले कर वह घाट के पास वाली बनिये की दुकान पर चली गयी । दबे स्वर में छक्कू ने कासी से कहा—तबियत ठीक नहीं है ! चाटुग्जे आज हम मुहल्ले में आया है न, इसी से !

कासी ने गरदन हिला कर स्वीकृति दी । दुकान पर सातटेन रख कर कुमुम ने कहा—एक पैमे का तेल भर दो तो !

बनिये ने डण्डीदार कटोरीनुमा नपनी से तेल भरने-भरने कहा—तेल तो है इस में !

कुमुम गगा-घाट की ओर मुँह किये खड़ी रही, उस ने कोई भी जवाब नहीं दिया ।

सातटेन की टेंगी बन्द करते-करते बनिये ने कहा—बत्ती जला दूँ वह जी ?

अवकामा बग कुमुम ने कहा—हँ ?

—बत्ती जला दूँ ?

—नहीं, रहने दो, घर पर मैं जला लूँगी । सातटेन ले कर कुमुम चली गयी ।

पाल की बैठक में तब घोड़ा आकाश में उड़ रहा था। चाटुज्जे घाट से लोट कर वहीं आ खड़ा हुआ।

छक्कू ने उसे बुला कर कहा—उठ कर बैठ जाइए चाटुज्जे मोशाय, क्रोध किया है क्या ?

चाटुज्जे ने कहा—नहीं, अब और नहीं बैठूंगा। उस मुहल्ले में जा रहा हूँ।

तब पाल कह रहा था—पक्षिराज की पीठ पर राजकुमार चढ़े और सन्-सन् करता हुआ पक्षिराज आकाश में उड़ चला।

चाटुज्जे का जाना ठप्प हो गया। उसी क्षण पाल की दुकान में घुस कर विरोध करते हुए उस ने कहा—इस बूढ़ी उमर में गंगा के किनारे बैठ कर इतनी झूठी बातें क्यों करते हो ? सन्-सन् करता हुआ आकाश में उड़ा ! घोड़ा आकाश में उड़ता है ?

घोड़े का कान गड़ते-गड़ते पाल ने हँस कर कहा—आओ—आओ भाई, नतजमाई आओ। दे रे दे, मोठा दे बैठने को। यह लो तम्बाकू-पिओ !

चाटुज्जे मोठे पर बैठा। ब्राह्मण के हुक्के में नलकी लगा कर चाटुज्जे को घमाने हुए पाल ने कहा—तब भला कहानी किसे कहते हैं ?

दुकान पीते-पीते चाटुज्जे ने कहा—इग का मतलब तो यह नहीं कि सब झूठी बातें बोलो।

घामे से बँधी कमानीदार चश्मे में चाटुज्जे की ओर ताक कर घूँटें ने कहा—जितने नाती-नातिन है, सभी आ कर मुझे पकड़ने हैं, क्या कहें, बताओ ?

—लेव तुम जितना चाहो—झूठ बोलो, पेट भर कर झूठ बोलो। हूँ, पोड़ा कही आसमान में उड़ता है !

कहानी आने लगी—प्रवासीद्वीप के ऊँचे महल का कँगूरा दिखाई पड़ रहा है, राजकुमारों के मुक्त केश धामु में लहर रहे हैं। कमल-कुनों में सुवामित जल में स्नान किया है उस ने, उस के केशों में कमल-वन की गन्ध महमदाती है, उसी मोरभ से आकृष्ट हो कर मधुमक्खियाँ उस के चारों

और भिनभनाती हुई उड़ रही है। वह सुगन्ध राजकुमार के हृदय को स्पर्श कर गयी। गौरम-मत्त राजकुमार कहते हैं—और तेज पति राज ! और तेज !

यकायक बूढ़ी हलवाईन की हँसी में बाधा पड़ी—अरी मेरी माँ, यह
कोन है रो ! ई-हि-हि-हि-हि-हि-हि-ही—कोन मुदमुदा रहा है वह !

जो गुदगुदा रहा था, उस की भी आहट आयी—कड़-कड़-कड़-कड़-
कड़-कड़-कड़...

एक कुत्ते का पिलना था । पता नहीं वहाँ से आ कर युद्धिया की पीठ चाटना शुरू कर दिया था ।

बुढ़िया तो जल-भून कर खाक ! बोली, अरे मुंहमौंवा कुबकुर ! मर
मर मुहफुंकना ! मैं भी सोचती थी कि कौन गुदगुदा रहा है ? मार साह,
से, साह, से मार ।

कहानी छोड़ कर हीरान-गरेजान-से पास ने कहा—भयाओ, भयाओ ! दुकान में अगर धुम गया तो मर्यानाथ कर देगा, मर कुछ तोड़-तोड़ देगा। अरे साठी कहाँ है, साठी है कहाँ ?

कुड़िया खोज रही थी माझू, पास खोज रहा था साठी । चादुग्जे ने जल्दी से हुक्का नीचे रख कर पिल्ले को अपनी गोद में उठा लिया । इस के बाद उजाले में उसे उलट-पुलट कर देखने पर कहा—अरे तू यहाँ से आ गया ? यह तो हमसान भैरवी का बच्चा है अरे मोटू ! यहाँ क्यों आ गया बेटा हमसान छोड़ कर ? चल अभाग, तुझे तेरी माँ ने यहाँ दे भाई ! सब गड़बड़-मड़बड़ करता है, हँ—चादुग्जे उठ पड़ा ।

पाव ने कहा—गुनों, गुनों, जाना मत । बुला रही है, बुझे मुला रही है ।

सामने ही कुमुम का घुंता हुआ दरवाजा । दीपक जसता हुआ ।
दरवाजे के फर्श पर कुमुम चर्खे थी । बाटूजी ने उधर फिर कर भी नहीं
साका । पिल्ले बड़े मोद में लें कर अन्धकार में एकाकार हो गया ।

पान ने कहा—तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है, दरवाजा बन्द कर के सो आओ नातिन !

कुसुम तब तक दीया लिये हुए बाहर ही आ गयी । बरामदे में चटाई बुनने का उपक्रम कर रही थी वह ।

—तुम्हारी तबियत खराब है, तुम ने कहा था न नातिन ?

कुसुम नीचे मुंह किये हुए बोली—इसे कल ही देना होगा जो दद्दु ! गरीब की तबियत खराब हो तो भला कैसे चलेगा ? बोलो । हाँ, तुम अपनी कहानी सुनाओ न, काम भी होगा और कहानी भी सुनूंगी ।

पता नहीं किस ने कहा—क्या कर गया बाभन यह ।

पाल के लड़के सिरिचरन ने कहा—जैसे सोने की सूरत !

किसी दूसरे ने कहा—चाटुजे तो भला-चंगा ठीक ही था । लड़की के मर जाने के बाद...

यह प्रसंग बदल कर पाल ने ऊँची आवाज में कहा—चुप, चुप, चुप रहो । हाँ, कहानी सुनो—घोड़ा उड़ते-उड़ते उस प्रवाल-द्वीप के महल के छत पर पहुँच गया । उस के पैर छत छूते ही...

—हरि बोल, बोलो हरि ।—इस शोर-शराबे के बीच पाल की कहानी दब गयी । श्मशान-घाट से यह ध्वनि आ रही थी ।

गंगा-किनारे के घने वन के पास से ही पश्चिमी तट की ओर पतली सी पगडंडी है । गंगा के ही साथ-साथ यह रास्ता भी समानान्तर चला गया है । नहान-घाट के उत्तर कुछ दूर पर एक आदमी के चलने भर का ही एक पतला रास्ता गंगा जी के भीतर की ओर चला गया है । इस के दोनों ही ओर घन जंगल । बड़े-बड़े पेड़ों की डालियाँ आकाश को छाने हुए हैं । एक उत्कट सी तीव्र गन्ध से यह वातावरण भरा हुआ है । यहाँ आते ही हृदय मरोड़ें या उठता है !

जले हुए मनुष्य-शरीर की गन्ध !

यही है श्मशान-घाट !!

चाटुजे ऊपर से उतर इसी रास्ते की ओर चला । घोड़ी दूर आने पर ही धीरे-धीरे जमीन है । एक ओर बाँसों का जंगल है, पास में ही ताड़ के पत्ते से बुनी पटाइयाँ और कुछ छटियाँ भी हैं । यहाँ-वहाँ दो-चार घोपड़ियाँ भी पड़ी हुई हैं, हड्डियों के टुकड़ों से तो जमीन भरी हुई है ।

जरा मा आगे बढ़ने पर चाटुग्गे एक टूटे-फूटे टिन के छप्पर में जा पड़ा। इस छप्पर के उत्तर तरफ मैले-कुचैले फटे बिछौनों का स्तूप था। बीच में एक बड़ी भी दहकती धूनी। धूनी के पास ही एक चारपाई पर बिछोना बिछा हुआ, छप्पर की कड़ी में से झूलते हुए तार पर एक सात-टेन भुक्-भुक् कर के जलती हुई। पश्चिम की ओर बांस की घटाई से तैयार किया हुआ एक घर।

नीचे गंगा की ढालू रेती पर कई अगार-मुज धक्-धक् करते हुए जन रहे थे—सपटें झान्त थीं—पर आग दह-दह दहक रही थी। मनुष्य-देह को खा कर भी जैसे यह अग्नि तृप्त नहीं हुई—अभी भी हो-हो कर के धींग रही थी। एक नयी चिता में अग्नि दी गयी है। आग की सपटें आस-आस उमक कर झांक रही थी—उस सपट के प्रकाश में राशीकृत धुआँ ऊपर-नीचे कुण्डली मारता हुआ दिखाई पड़ रहा था। चिता पर एक शिशु-देह—बस-ग्यारह वर्ष की बच्ची! छोटे-छोटे केश झूल गये थे—कुछ जल बुके थे—कुछ जलने को बाक़ी थे। एक काठ उस शव की छाती पर भी रखा था। शव के पैर की तरफ एक आदमी बांस की साठी के सहारे खड़ा हो गंगा जी की ओर ताकता हुआ। अस्हब जवान, कमौटी पापर सा रंग। घुंघराते लम्बे केश आग से दहकती वायु के कारण धीरे-धीरे हिल रहे थे।

यह था समझान-ग्रही चाण्डाल !

चाटुग्गे ने पुकारा—पैर !

धूम कर पैर में आदरमहित बहा—‘परनाम’—देवता महाराज !
आइए, आइए। क्या आने आप ?

—दमी दांपहर को ? और मय बता ? ठीक में है तो तू ?

—आप की ‘बिरपा’ है महाराज !

—सहने-बच्चे तेरे ?

—गभी मच्छी तरह हैं देवता !

बाइं में बैठे हुए गिल्ले की बाहर करते हुए चाटुग्गे ने कहा—अरे, मुंहारा वह मुट्ठला बिल्वा बाजार में बना गया था। कम जरा गी ढेर में तैयार उसे गड़ब कर जाता।—ऊँची आवाज में चाटुग्गे ने पुकारा—
भैरवी ! भैरवी ! बस्सू !! बस्सू !! महादेव !! माथ हो गाय पात के पर

से एक झुण्ड कुत्ते पूँछ हिलाते हुए चाटुज्जे को घेर कर खड़े हो गये। एक तो चित हो कर अपने पजे से चाटुज्जे के पैर खरोचने लगा।

अपनी गोद में पिल्ले को उतार दिया चाटुज्जे ने, वह भी पूँछ हिलाने लगा। उन कुत्तों में से भैरवी नामक कुतिया के कान मलते हुए चाटुज्जे ने कहा—माँ हो कर भी बेटे की खोज-खबर नहीं रखती हरामजादी!

भैरवी कातर भाव से कूँ-कूँ करने लगी। मानो अपनी गलती के लिए क्षमा चाह रही हो।

चाटुज्जे ने हाथ हिलाते हुए इशारा किया—जाओ, भाग जाओ सभी, बड़ा गुमान हो गया है न? जा, जा, भाग जा।

कुत्तों का झुण्ड तब भी नहीं हिला।

पैरू हैता। हठात् सारे कुत्ते भों-भों करते हुए जगल की ओर दौड़ पड़े। इस के बाद ही सियारों की कंकश ध्वनि सुनाई पड़ी—ठुम्राँ-ठुम्राँ। भीतर छाट पर कोई जैसे हिना-डुला। कम्बल के भीतर से एक बच्चे का मुँह दिखाई पड़ा, जो रोते-रोते पुकार रहा था—बाबू-ए बाबू, बाबू दे!

पैरू ने कहा—आया री बिटिया, आया, सो जा री बेटा!

बच्ची ने फिर मुँह छिपा लिया।

चाटुज्जे ने कहा—तेरी वही बेटा है न पैरू!

—हाँ, महाराज, आज मुझे किमी तरह भी नहीं छोड़ा इस ने।

चिता जल रही थी लपलपाती हुई चट्-चट् करती। हाथ-मुँह धो कर पैरू ऊपर आया, उस ने बच्ची को प्यार से कम्बल उड़ा दिया। उस के बाद बच्ची के केशों को सुलझा कर सहलाता हुआ कहने लगा—मेरी बेटा बहुत अच्छी है देवता, मुझे बड़ा प्यार करती है।

चाटुज्जे चिता की ओर ताक रहा था, उम ने कोई जवाब नहीं दिया। बीड़ी निकाल कर पैरू बोला—बीड़ी पियेंगे महाराज?

चिता की अग्नि की ओर देखते हुए ही चाटुज्जे ने कहा—दे।

धूनी की आग में बीड़ी सुलगा कर चाटुज्जे चिता की ही ओर ताकता रहा।

पैरू बोला—थोड़ा बैठेंगे महाराज?

—है!

—तब जरा बैठिए, मैं धा लूं ।

पैरु एक झाड़ू ले कर उन कुत्तों के घर में धुमा । चारों ओर गन्धरी ।
एक कोने में झाड़ू लगा कर, पानी छिड़क दिया उस ने । उसी जगह, बोटे
मुंह के बरतन में ढँके भोजन की ले कर, घाने बैठ गया वह ।

इस ओर लपलपाती चिता-ज्वाल शान्त होती जा रही थी ।

चाटुग्जे ने कहा—चिता तो बुझने की आयी पैरु, अंगारे झाड़ू देने
होगे न ।

पैरु ने घाते-घाते कहा—मैं जा रहा हूँ महाराज !

—तेरे घा कर उठने में कितनी देर है ?

—घोड़ी देर तो है पर मैं ही जाता हूँ ।

—रहने दे, लूँ घा, मैं ही झाड़ू देता हूँ ।

कपडा ठीक करते-करते चाटुग्जे नीचे उतर गया ।

पैरु भागता हुआ आया और कहने लगा—नहीं, नहीं देवता, तुम घर
जाओ । जाड़े की रात है । फिर 'अस्नान' करना होगा ।

अधजले मुरदे को हिलाते हुए चाटुग्जे ने कहा—तेरी इसी धूनी के
पास सोऊँगा आज ।

दुःखित हो कर पैरु ने कहा—नहीं, नहीं, देवता ! ई मब तो चाण्डाल
के काम है । हम के पाप मंडी हे देवता !

—अरे, घट् ! शिव स्वयं ही यह काम करते हैं, जानता भी है ? तुम
सोग शिव के वाहन नन्दी की समान हो ।

पैरु पर में चमा गया । बाहर के ऊपरी रास्ते से पठा नहीं जिस ने
आवाज दी उसे—पै-ए-म-ऊ !

जल्दी से बाहर आया पैरु, पुकारने वाले को देख कर अपराधी सा हो
कहा पैरु ने—माई जी !

रास्ते पर कुमुम खड़ी थी ।

कुमुम बोली—एक बार बुला दो पैरु !

पैरु ने जोर से आवाज दी—महाराज ! महाराज !! हे देवता !!!

महाराज तब चिताग्नि को प्रवर्धित करते-करते स्वगत-भाषण कर
रहे थे—मोय्या ! मोय्या !!

पैरु फिर चिल्लाया—अरे हे-ए देवता S !

चिता चट्-चट् कर के जल रही थी। उसी लेलिहामान शिखा की ओर देख कर चाटुज्जे ने परम आनन्द से कहा—देख ले बेटा, देख ले, इमे कहते हैं चिता ! जानता है रे पैरु, ऐसी चिता यदि दिन-रात लगातार जलती रहे तो आधी रात को श्मशान-कासी को आना पड़ेगा। यह एक यज्ञ है रे ! पैरु फिर पुकारने जा रहा था, लेकिन कुसुम ने उसे रोकते हुए कहा—रहने दे पैरु ! मैं भोजन दिये जाती हूँ, तुम खा लेना, यह मत बता देना कि मैं दे गयी हूँ।

एक हाथ से छप्पर का एक कोना पोछ दिया कुसुम ने। इस के बाद आंचल से ढँके भोजन और पानी भरे लोटे को वहीं रख कर वह बाहर आ गयी। पीछे से पैरु ने कहा—साथ में हमहूँ चली माई जी !

कुसुम तनिक हँसी, फिर बोली—नहीं भाई, तुम जाओ, किसी तरह से उठे गिला देना। मैं अकेली ही जा सकती हूँ।

धोर अन्धकार में कुसुम विलीन हो गयी।

एक लम्बी साँस ले कर पैरु लौटा।

चिता की आग को हिलाते-डुलाते चाटुज्जे ने कहा—बया ?

—हाथ-मुँह धोइए, खूब जल रही है चिता।

—तू ने पा लिया ?

—हाँ, आप जल्दी आइए। फेंकिए, बाँस फेंकिए ! पैरु की आवाज में एक दृढ़ता थी। चाटुज्जे उस के अनुरोध की अपेक्षा नहीं कर सका।

इशारे से भोजन दिया कर पैरु ने कहा—भोजन करिए। किमान के उस छोकरे को भेज कर मँगवाया है मैं ने।

पैरु के मुँह की ओर ताक कर चाटुज्जे ने कहा—कुसुम दे गयी न पैरु ?

—हाँ, एतनी रात में माई जी अइहें न इहाँ ?

एक ठण्डी साँस ले कर चाटुज्जे घाने बैठ गया।

घाते-घाते उस ने कहा—सचमुच ही बड़ी भूख लगी थी रे पैरु ! तुमने मैं इसी लिए इतना प्यार करता हूँ रे !

पैरु घुप रहा। वह माई जी की बात सोच रहा था। श्मशान का डीम

है वह, दुःख-वेदना का उच्छ्वास उस ने बहुत देखा है, कलेंजे की छू देने वाली रसाई उस ने सुनी है बहुत पर दुःख का इतना नीरव प्रकाश उस ने कहीं नहीं देखा ।

चाटुगजे मन ही मन जैसे अपने से ही बह रहा था—बोत रे पैरु—मुझे कोई प्यार करता है—तेरे अलावा ?

पैरु के मन में आया कि वह कहे कि जिस दिन माई जी चिता पर चढ़ेंगी, उस दिन शायद हृदय में सचित मेरे रदन से चिता भी नहीं जलेगी, चिता बुझ जायेगी । चाटुगजे ने कहा—कुमुम भी मुझे प्यार करती है पैरु, लेकिन...

उस ने अपनी बात पूरी नहीं की ।

पैरु ने व्यग्र सा हो कर पूछा—क्या कह रहे थे महाराज जी ?

चाटुगजे धुप रहा ।

पैरु ने आवाज दी—देवता !

चाटुगजे ने मुंह उठा कर ताका । चिता के प्रदीप्त आसोक में पैरु ने देखा कि चाटुगजे की आँखों से आँसू की धारा बह रही है । हृषक-बबका सा हो कर चाटुगजे ने कहा—सड़की की याद आ गयी पैरु ! कुमुम की बातचीत होने ही मुझे बच्चों की याद आ जाती है । जानता है रे पैरु, कुमुम की ओर ताकने पर मुझे रसाई आ जाती है । मेरी हीरे जैसी बिटिया सग्न्यामणि का मुग्धता उस के चेहरे में तैरता रहता है ।

पैरु की आँखों में भी आँसू उमड़ चले । चाटुगजे ने फिर कहा—लेकिन जानता है पैरु, बिटिया मणि के लिए उसे जरा भी दुःख नहीं हुआ, उस के लिए वह रोती भी नहीं ।

पैरु ने बीच में रोक कर कहा—ऐसा मत कहो, देवता, माई जी की रसाई में तो गया में बाढ़ आ गयी । तुम्हें आँख नहीं है क्या ?

मन्त्रित हो कर चाटुगजे ने पैरु के मुँह की ओर देखा—तब पैरु ?

दुःख स्वर में पैरु ने कहा—सामने यह गया जी जैसी मख है महाराज, वैसी ही गच्छी बात है यह । अगर मूठे हो तो मेरे तिर पर 'बग्गर' लिख देवता !

थोड़ी देर बाद चाटुगजे ने धीरे-धीरे कहा—सोम बितनी हो बाँ

करते हैं उस बूढ़े पाल को ले कर, लेकिन वह झूठ है, मैं जानता हूँ। लेकिन बिटिया के लिए कुसुम रोती है ? सारे दिन ही तो वह चटाई बुनती रहती है, दिन-रात बस पैसा-पैसा !

पैरू ने इस बात का जवाब नहीं दिया।

सहसा जैसे चुप्पी की तोड़ कर एक कोलाहल उभरा—बोलो हरि, हरि, दो-तो-। कोई नया महापय-यात्री जा गया।

उस कोलाहल की गूँज जगल में, गंगा के तीरवर्ती प्रदेश में घुल-मिल गयी। स्यारों का दल हुआ-हुआ कर उठा। पेड़ों पर गिद्धों के झुण्ड अपने डैने फड़फड़ाते हुए बैठ गये।

उस दिन की शोपडी में बैठे हुए दोनों ही जने उठ खड़े हुए। हाय-मुंह धो कर चाटुग्जे ने बीड़ी सुलगायी, पैरू मुरदे के लिए लकड़ी जुटाने नीचे चला गया। मुरदे के ऊपर-नीचे का बिछौना-कपडा तह कर के नीचे रख दिया पैरू ने, फिर मुरदे के पैरों की ओर खड़ा हुआ वह। एक बाँस पर भार दे कर गंगा जीकी ओर मुंह किये खड़ा हो गया पैरू।

—पैरू !—चाटुग्जे वापस आ बोला।

—महाराज !

चिता जल उठी धू-धू कर के। पैरू ऊपर चला आया।

चाटुग्जे ने धीरे से कहा—पैरू !

—महाराज !

—कुसुम रो रही है। मैं खुद जा कर सुन आया हूँ गुप-चुप।

चिता की प्रज्वलित अग्नि में पैरू का मुंह दिखाई पड़ रहा था—प्रसन्नता से वह मुप दीप्त था। पैरू ने कहा—गंगा मझ्या सच है देवता, झूठ तो नहीं !—धूनी के पास एक कम्बल बिछा कर चाटुग्जे वही लेट गया। चिता के बुझने की प्रतीक्षा में श्मशान की छाती पर चाण्डाल युवक पैरू जागता रहा।

सुबह होते ही स्नान-घाट का रूप एकदम पलट गया। बाजार में ओर घाट पर लोग जैसे अँट नहीं पाते अब। स्तुतियों और कीर्तनों की ध्वनि से पक्षियों का कलरव भी दब सा गया। गंगा जी के बल पर नौकाओं का मेला लग गया। बड़ी-बड़ी महाजनी नावें, बजन के कारण रस्ती से धींच कर सन्ध्यामणि

ने जायो जा रही थी किनारे-किनारे । मल्लाहों की नावें केले के फूल के ऊपरी छोल की तरह इधर-उधर हिल-डुल रही थी एक निश्चित सीमा में । उस पार वाले घाट पर यात्रियों की भीड़, माल-सदी बेलगाड़ियों की पंक्तें, गाय-भैंसों के झुण्ड । रास्ते के बगल में काने-तंगड़ों की पंक्ति ।

—अन्धे पर दया करो रानी बिटिया !

—तंगड़े को एक पैसा देते जाइए न !

एक बाऊलो की मण्डली दो बच्चों को राधा-कृष्ण के रूप में सजा कर घोष मोंग रही थी । कुसुम भी उन के बीच दिखाई पड़ रही है । उन मुहल्ले की विश्वास की बहू और कुसुम के दूर के रिश्ते की मौती—कुसुम को देखते ही बोली—बेटी कुसुम, कस हो सब कुछ सुना मैं ने । क्या करोगी बेटी, पेड़ पर सारे फूल तो नहीं रहते ! बस यही समझो कि तुम्हारी नहीं थी वह ।

कुसुम की आँखों से आँसू बहने लगे । आँसू पोंछ कर उसने कहा—वह मेरी ही थी, किसी दूसरे की नहीं हो सकती वह । देचना, वह फिर वापस आ जायेंगी । वही मुछड़ा, वही आँखें, वैसी ही तीनमी बातें में कर जमैगी ।

—वही हो बिटिया, आजीबाद करती हूँ मैं । तेरी वह रीतने गयी है, फिर तेरी गोद में आये ।

स्नान-घाट के ऊपर बैठे हुए चाटुग्जे ने देखा कि पिछरे साल में दूटे हुए बालू के कगार में नीचे एक रेती उठ आयी थी । उसे ही हल से जोन कर सहाराती हुई प्रगल के रूप में बदल दिया गया था । कहीं-वही पूल भी दिखाई पड़ रहे थे । चाटुग्जे उठा और घर की ओर चल पड़ा ।

द्विजदास की दुकान पर तब बहुत भीड़ थी, सेन-देन का टिगाब चल रहा था वहाँ । यनिए की दुकान पर उड़द या किमी और चोख का बज्र हो रहा था—रामे-राम-रामे-राम, राम दो-दो राम—पाम की दुकान पर राम-बिरंगे मिन्नों की कगारें । चाटुग्जे अपने दरवाजे के पास पहुँचा । वही वह ठमक कर खड़ा हो गया । दरवाजे के पास सन्ध्यामणि नामक फूल का छोटा पीठा फूलों में लदबदा गया था । कुसुम ने दूर ही से उसे देख लिया था । घर ही में ने बोली बहू—आओ ।

चाटुज्जे अपराधी की तरह खड़ा ही रहा ।

कुमुम ने फिर पुकारा—आओ !

सकोच से चाटुज्जे ने कहा—जरा तेल दो तो, पहले नहा लूँ, रात को
शमशान में...

—ठीक है, कोई बात नहीं ।—कुमुम बीच ही में बोली ।

चाटुज्जे ने कहा—मग्घ्यामणि फूनी है, बिटिया ने बोया था !

दुकान-दुकान पर आवाजें आ रही थी—

—तूफानी बीड़ी, मीठा पान !

—गंगाफल लेती जायें माँ !

—खिलौने ले माँ, खिलौने ।

कुमुम पनिपारी आँखों प्रत्याशा से हँस कर बोली—वह फिर
आयेगी ।



मेला

उत्तर-दक्षिण लम्बी एक बाबली के चारों ओर मेला लगा हुआ था। किसी पर्व के उपलक्ष्य में नहीं, किसी एक तिथि महापुराण के महाप्रमाण की तिथि के ही कारण यह मेला था।

दुकानदार कहने हैं कि ये बड़े सिद्ध महात्मा थे। जो कुछ दुकान पर जाता है बिक जाता है। किसी को कुछ भी बापस ले कर नहीं लौटना पड़ता।

बात सच है, किसी की कोई चीज नहीं सिरती और मेला देखने वालों के टेंट का पैसा भी बापस नहीं जाता। शिवड़ी का एक हसबाई तीन साल पहले मरारह सौ रुपये का गया था, नऊ के रूप में। शिवड़ी के दुकानदार के पास ही सामपुर की दो मिठाइयों की दुकान है। एक हरिहर की और दूसरी रामसिंह की। रामसिंह की दुकान के बाद ही पश्चिम ओर की दुकानें पूरब की क़तार की ओर मुड़ गयी हैं।

उत्तर की तरफ़ मनिहारी की दुकानों की पसिंदी है। पहली दुकान घनश्याम घोष की है। घन्नु अपनी दुकान पर बैठा हुआ घीड़ी पी रहा था। घाटक तब जुटे नहीं थे। रामसिंह की दुकान तब तक खूब जमक गयी थी। दुकान के ऊपर एक मुन्दर भी चाँदनी टंगी हुई थी। नीचे घोड़ी के ऊपर एक दी की बट्टी हुई थी, उसी के ऊपर मोड़ीनुमा आकर मे बड़ी-बड़ी मिठाइयाँ सजायी गयी थी। बरजियाँ ऐसे रखी हुई थी जैसे

पत्थरों की कटी जाली, रंग-विरंगी गाजा मिठाइयाँ जैसे चोटियों की तरह लग रही थी। बड़े-बड़े खाजे मफ़ेद पत्थरों की तरह दिखाई पड़ रहे थे, सामने ही चौड़े बरतनो में रसगुल्ले, खीरमोहन और मुलाबजामुनें तैर रही थी। इस के आगे ठीक रास्ते के सामने लार्ड और चूड़े में गुड़ मिला कर एक तरह की मिठाई बनायी गयी थी जिसे 'डूढा' कहते हैं।

बाज़ार के इस रास्ते पर दस-पाँच लोग आ-जा रहे थे। उन की उदासीनता से घनश्याम नाराज हो उठा। अघजसी बीड़ी को फेंक कर रामसिंह के साथ उस ने बात शुरू कर दी।

—जगता है कि बिक्री जो कुछ भी होगी वह कल से शुरू होगी, तुम्हारी क्या राय है रामसिंह ?

रामदास ने कहा—शाम होते ही आदमी जुटेंगे, देखना इस बार छूब जमघट होगी।

घनश्याम उत्साहित हो उठा, उसने कहा—मैं ने देखा है। इस बार एक सौ चौतीस दुकानें आयी हैं, चार तो झूमुर (पत्थरियों) के दल हैं। औरतें देखने-सुनने में अच्छी है, घटक-मटकदार हैं।

सिंह ने भी हँकारी भरी—हाँ, बीस-पचीस के भीतर ही इन की उमर होगी। चार-पाँच तो बहुत छूबसूरत हैं।

घनश्याम ने गरदन हिला कर कहा—कमली और पटली नाम की जो दो हैं, उन्हें क्या देखा है तुम ने, बाप-दे-बाप क्या क़ैशन है ? छोकरी की भीड़ लग गयी है उन के पास। '...क्या चाहिए जी तुम्हें ?

एक मेला देखने वाला इसी बीच आ कर खड़ा हो गया था। उस ने चलना शुरू कर दिया।

सिंह ने कहा—किनने रुपये पर जुए का बोन हुआ है, जानते हो ?

उदास हो कर घनश्याम ने कहा—एँ जुए की बोल ? पन्द्रह सौ रुपये।

—किस ने बोन लगाया ?

घनश्याम ने उत्तर नहीं दिया।

दस-ग्यारह गाल का एक सड़का दुकान के पास से हो कर जा रहा था। उस के पीछे एक छह-मात साल की चंचल सड़की भी थी। सड़की ने सड़के का हाथ पकड़ कर पीछे खींचा। सड़के ने कहा—क्या ?

घनश्याम की दुकान पर रस्सी में झूलती हुई गुद्दे-गुद्दियाँ सजी हुई थी। यह एक मेम-घिसौना था, इस में चाभी दे दी गयी थी और वह घूम रही थी। लड़की ने अँगुली से इशारा कर के उसे दिखाया। सड़के अपने पॉकट में हाथ दे कर कहा—चली आ, चली आ, वह कुछ भी नहीं है।

घनश्याम ने उन्हें देख कर ही कहा—आ री लड़की, आ, घिसौना लेती जा।

साथ ही साथ उस ने चाभी दिया हुआ हवाई जहाज वाला घिसौना हिला दिया। चाभी के कारण टिन का प्रोपेलर फरफराने लगा। हवाई जहाज हिलता था इसलिए ऐसा लगा जैसे वह उड़ ही रहा हो। लड़की ने कहा—भइया?

घनश्याम ने लड़के को पुकार कर कहा—आइए छोका बाबू, जहाज लेते आइए। देखिए न, कैसा उड़ रहा है।

घनश्याम के बातचीत में लड़का खुश हो उठा, उस ने पूछा—क्या दाम है?

—किस का? घिसौने का या जहाज का?

इस का उत्तर देने में लड़के ने पहले अपनी बहन की ओर ताका, बहन भी भाई के मुँह की ओर ताक रही थी।

घनश्याम ने फिर पूछा—कौन सा सेंगे, बोलिए?

—दोनों ही सेंगे।

—दोनों का दाम डेढ़ रुपये होगा।

लड़के ने एक बार अपने पॉकट में हाथ दे कर पता नहीं क्या सोचा। दूसरे ही क्षण बहन का हाथ पकड़ कर उसे खींचने हुए उस ने कहा—औरी मणि!

घनश्याम ने माथ ही माथ कहा—हवाई जहाज लेते आइए न गोरा बाबू। दोनों आदमी आप लोग घेमेंगे, उस का दाम एक रुपये है।

उस ने घुटनों के बल खड़े हो कर घिसौनों की डोरी पर हाथ लगाया।

लड़के ने कोई उत्तर नहीं दिया। लेकिन लड़की ने पक्की गूँहिंगी की तरह मीठी बाणी में कहा—नही मणि, हम लोगों के पाग पैगा नहीं है।

एक झुण्ड बाजल, इकतारा और 'भावगुवागुब'^१ तथा खजड़ी बजाते हुए गाते-गाते चले जा रहे थे—

कीचड़ में डूब रहा—

नहीं पा सका कमल, रे मन !

पीछे-पीछे कीर्तन वालों का एक दल चला आ रहा था और उस के पीछे एक बड़ा ही सुन्दर स्वस्य सन्यासी ।

हलवाईयों ने बताये बिखेर दिये, दोनों ओर से लोग उठ कर प्रणाम कर रहे थे, घनश्याम भी उठ कर खड़ा हो गया । बताये की लालच में कीर्तन के पीछे-पीछे लडकों का एक दल कोलाहल करते चला आ रहा था । उन के पीछे-पीछे फटे-चीयड़ों में कुछ अच्छत औरत भी थी ।

कीर्तन दल चला गया ।

लड़की तब भी कह रही थी—नहीं भाई, हमारे पास तो केवल दो आने पैसे हैं । घनश्याम ने कहा—यह देखो, कड़ाही देखो । बड़ी-बड़ी कड़ाहियाँ हैं । ओ छोकरे, सामने क्यों खड़ा है ?

पीछे कई लोग खड़े हो कर कुछ देख रहे थे ।

लड़की का नाम मणि था । मणि ने अपने भाई से कहा—आजो भइया, आजो, चलें । इन सबों को बकने दो ।

सिंह की दुकान पर खड़ा हो कर मुसलमानों का एक दल मुरब्बों का दर कर रहा था ।

सिंह कह रहा था—पहले आँख से देख लीजिए, अगर अच्छा न हो तो दाम न दीजिए !

दुकान पर बैठे हुए छोकरे ने आवाज लगायी—या कर दाम दीजिएगा, इग में केसड़े का जल दिया हुआ है !

मणि ने अपने भाई से कहा—मुरब्बा नहीं याओने भइया ?

भाई ने बहन को अपने पास खींच कर बसना शुरू कर दिया और एक दुकान की दूसरी पटरी पर चला गया ।

१. एक प्रकार की लम्बी की होलक के आकार का बाजा जिसे बाँध में रखा कर बजाते हैं । इसे बीरभूमि और बर्दवान में देखा जा सकता है ।—यन्तुवाङ्मय ।

सिंह तब कह रहा था—क्या कहते हैं ? बासी है ? फल भी क्या कभी बासी होता है ?

छोकरे ने कहा—अरे भाई, जो मिठाई आप चप कर खा गये हैं उस का दाम देते जाइए । आप के कहने से क्या छराब हो जायेगी ?

मणि ने चलते-चलते हँस कर अपने भाई से कहा—सभी तुम्हें योका बाबू कहते हैं । तुम्हारा नाम कोई नहीं जानता, अमर कृष्ण कहने से ही तो होता ।

—घुप रहो मणि ! किसी को अपना नाम, अपना घर कभी नहीं बताना । हम लोग चोरी कर के भाग आये हैं, जानती हो न, ग़ररदार !

—दीजिए न बाबू, दीजिए आप के जूते की एही कंसी धिन गयी है, लगाई ?

जूता की दुकानों के पास मोचियों की कतार पर बतार बँटी हुई थी । अमर के जूतों की हालत देख कर एक मोची ने यह बात कही ।

अमर ने बात नहीं की । टूटे हुए जूते के कारण उसे सचमुच ही तकलीफ हो रही थी, लेकिन यह करता भी क्या ? मणि का हाथ पकड़ कर यह आगे-आगे चल रहा था । लेकिन मोची भी हार मानने वाले नहीं थे । अमर जितना ही आगे बढ़ता दोनों ओर से आवाजें आतीं—आइए न बाबू, आइए ! दीजिए न बाबू, दीजिए ! एकदाम नया बना दूँगा ।

मणि ने कहा—क्यों भाई, तुम सोच क्यों कह रहे हो ? हमारे पास पैसा नहीं है...हम लोग अपने घर से...

धीरे से ही मणि घुप हो गयी । भाई की बात उसे याद हो उठी । मोची ने हँस कर कहा—आइए योका बाबू, जूते की एही मैं ठोक कर ठीक कर देता हूँ, पैसा नहीं लगेगा आप का ।

अमर का सिर जैसे धुम रहा था । उस ने तपाक से एक तमाशा मणि के गाल पर जमा दिया । मणि रोने लगी । मोची जल्दी से उठ कर पकड़ने के लिए सीढ़ा । लेकिन मणि तुल्य घुप हो कर भाग उठी—नहीं, नहीं, भाई, मुझे मग धूना—इस बुजेगा मे मुझे रवाना करना होगा ।

एकएक करत धार कर अमर जैसे सज्जन हो गया था । लेकिन

उस ने गम्भीरता बनाये रखी। उसी तरह उस ने गम्भीर हो कर कहा—
आ-रे मणि, आ।

मणि ने क्रोध में कहा—मैं जाऊँगी ? किसी भी तरह न जाऊँगी।
सभी को तुम्हारी बातें बता दूँगी।

अमर इस बार आगे आ कर मणि का हाथ पकड़ते हुए कहने लगा—
तुम बिल्कुल सहमी हो। आओ, अब घर जाना होगा।

—तुम ने मारा क्यों मुझे ?

उम तरफ डम-डम करता हुआ कुछ बज रहा था। अमर ने जल्दी
से मणि को खींचते हुए कहा—आ-आ चल उधर से देखें।

चलते-चलते मणि सहसा रुक गयी, और बोली—दादा, मखमल की
चिट्ठी कैसी है ?

अमर ने कहा—आ-आ। उस से बढ़िया चिट्ठी मैं खरीद दूँगा तुम्हें।

मणि बोली—अगली साल तो तुम कलकत्ते चले जाओगे पढ़ने के
लिए। मुझे सचमुच ला दोगे, भइया ?

—हाँ-हाँ, ला दूँगा।

अमर छठवें दरजे में पड़ता है।

भीड़ जैसे क्रमशः बढ़ती जा रही थी।

बड़ी-बड़ी दुकानों के सामने वाले रास्ते पर छोटी-छोटी दुकानें भी
बैठी थी। वे बिल्ला रहे थे—

—गण्डालू, पालक साग !

—एक पैसा का एक बण्डल बीड़ी बाबू !

—हल के लिए काठ लेते जाओ भइया !

—हल के काठ का क्या दाम है भाई ?

—इस आना, बारह आना, चाँटी बयून है !

हलों की दुकान के पास ही घोड़े की आलमारी में नक़्सी गहनों की
दुकान थी, वह गरीब ग्राहकों को बुला कर कह रहा था—सीन नगीनों
वाली अँगूठी लेते जाओ, लेते जाओ भइया ! चार पैसे, घाती चार पैसे में।

कुछ सोग चले गये। लेकिन कुछ सोग रुक गये, दुकानदार कह रहा
था—बस भाई, बस !

लाठी में कीलें ठोक कर क्रीते लटकाये हुए एक आदमी रास्ते में आवाज देता हुआ जा रहा था—चार हाथ क्रीते ले लो—दो पैसा। बड़े-बड़े क्रीते ले लो, दो पैसा। किस्म-किस्म के क्रीते ले लो, दो पैसा। क्रीते में दामांध को बांध लो, दो पैसा। घीचने पर टूटने नहीं, केशों में बांधने पर घुलेगा नहीं, नहीं लेने पर मन में उतरेगा नहीं...ले लो भाई, दो पैसा। रंग-बिरंगे क्रीते, दो पैसा।

पटरी के मोड़ से उतरते ही भीड़ का कोनाहुल बढ़ता जा रहा था। अमर और मणि उसी भीड़ के भीतर जैसे डूबते गये। भीड़ दोनों ओर से बढ़ती जा रही थी। एक ओर बाजे बज रहे थे। क्रतारों पर क्रतार बाने तम्बू लगे हुए थे। अमर मणि का हाथ पकड़ कर तम्बू की ओर ले जा रहा था। उधर देख...उधर देख—वह देख, वहाँ जादू हो रहा है।

उस ने कहा—कहाँ भाई ?

और भी पीछे भीड़ जैसे बढ़ती जा रही थी। सभा-बाती अभी ही हुई थी। इसी भीड़ के कारण चारों कोनों पर बड़े-बड़े शोगनों हगड़े जल रहे थे। उसी प्रकाश में छोटे-छोटे छप्परनुमा घर भी दिखाई दे रहे थे। मृग के झुण्ड लोग चबल हो कर दधर-उधर जा रहे थे। उस तरफ जाने ही पता नहीं एक गन्ध आती थी और मनुष्य का हृदय जैसे भीतर से कपोर सा उठता था। शराब, गाँजा, धोड़ी, सिगरेट, सस्ते सैण्ट की तीव्र गन्ध से जैसे वातावरण भारी सा हो उठता था।

धीघोबीध जनता की भीड़ बढ़ती जा रही थी और सारी-की सारी भीड़ बस एक ही तरफ़। लडके, बूढ़े, जवान, बगाली, बिहारी, उड़िया, मारवाड़ी, अफ़ग़ानी, हिन्दू, मुसलमान, सवाल सभी कुछ इस भीतर थे। जाति, धर्म, वर्ण सब कुछ यहाँ एकाकार हो उठे थे।

इसी का नाम था 'आनन्द बाजार' अर्थात् बेइश्वर्य का मुहत्ता।

प्रत्येक घर के सामने छोटी-छोटी चारनाइयो पर औरतें बैठी हुई थीं। और जैसे उनके शरीर को चाटती हुई भी धुंधी पॉप सो जोड़ी जायें। सली, मामूली रसिकता के कारण एक प्रकार का अदृष्टांग चारों ओर से मुनाई पड़ रहा था।

इस तरफ़ इस के बाद उस दरवाजे पर, फिर दूसरे दरवाजे पर...

मतलब यह कि हमेशा इधर-उधर लोग आ-जा रहे थे। पियक्कड़ों का हल्ला-गुल्ला, और यहाँ तक कि जैसे आकाश के निस्तब्ध अन्धकार को भी वे मात कर दे रहे थे।

इस सारे शोर के बीच-बीच में जुआड़ियों के अड्डे से चीख-पुकार आ रही थी। आँगन के बीचोबीच जुआ हो रहा था। किसी-किसी घर में औरतें अश्लील गाने गा रही थी। बाहर भीड़ उन अश्लील गानों को सुन कर हो-हो कर रही थी। मनुष्य के भीतर कितना कीचड़ है, कितनी पशुता है, इस का उदाहरण यहाँ दिखाई पड़ रहा था। जैसे गन्दा पानी बार-बार पछाड़ भारता हुआ वह रहा हो।

उधर से कहीं आवाज आ रही थी—बक्-वा बक्-वा बक्-वा बक्-वा ! एक सड़की को उबकाई आ रही थी। और उसी दुर्गन्ध में सने हुए लोग उसे देख भी रहे थे क्योंकि उस औरत की देह पर कपड़े नहीं थे। उसी उबकाई पर बैठ कर वह सड़की गा रही थी—

सधी, मल्लूमी, जरूर मल्लूमी !

भीड़ भी हँस पड़ी—हाहा-होहो, हाहा-होहो।

एक पनवाड़ी चिल्ला रहा था—मनमोहिनी बीड़ा बावू, मनमोहिनी बीड़ा बावू। जो जिस उमर का होगा, इस पान को छाने पर उसी तरह रह जायेगा।

तितली की तरह सजी-बजी एक सुन्दरी सयणी ने गाना शुरू कर दिया—पान खा कर जाओ हे बावू...

एक दर्शक ने अपने दोस्त से कहा—देख रहे हो ?

दूसरे ने कहा—इस से भी अच्छी है। उस का नाम कमली है। मुझे फत्ते ने बताया।

सड़की मुस्करा रही थी।

पहले ने पूछा—क्या नाम है तुम्हारा ?

सड़की बोली—बेहरा देखकर नाम मगझ लो—कमलिनो, फूल-रानी। और यह कहते-कहते शरीर में अँगड़ाई भर कर अपने घर की ओर पसी गयी वह।

—अरे मुनो-मुनो, तुम्हारी दक्षिणा ?

—चमन्नी और अठन्नी में कमल की माला गले में नहीं पहनी जाती बाबू ! पूरा दाम देना पड़ेगा !

एक आदमी ने कहा—शराब पीयेगी तों ?

—कोन पिताता है ? बक-बक करने मुँह तीता हो गया । अरे एक बीड़ा पान तो छिन्नाओ !

एक घर के सामने हल्ला-गुल्ला हो रहा था ।

किमी दोस्त के लुके-छिपे प्रणय को दूसरे दोस्तों ने पकड़ लिया था । कुत्तित छन्द में जैसे बित्तकुस मग्न नृत्य हो रहा था, पैरों में पुंघरु बज रहे थे ।

कमली कह रही थी—रुपया देने पर ही नाचूंगी । पैसा दे कर तब हुकूम करो, तब मैं तुम्हारे पैर की दासी हो जाऊँगी ।

एक घर से श्रावः नय-घडग आदमी एक औरत को धीबता-धीबता बाहर आ घड़ा हुआ । औरत भी पी कर बदहोश हो गयी थी । मदं कह रहा था—तू मुझे प्यार नहीं करती । मैं तेरे नाम पर मुकदमा करूँगा, कोश करूँगा ।

लडकी ने कहा—जा, जा, मैं हाईकोर्ट में बकील साजुँगी ।

एक-एक पत्ता नहीं उग पियकड़ को क्या मूला कि उग ने लड़की को छोड़ कर कहा कि मैं तो अब दुनिया छोड़ कर मग्यामी हो जाऊँगा ।

मरके हुए बपड़े को ठीक कर के वह पला गया, लडकी नये में धुन बैठी-बैठी तब भी बक-बक कर रही थी—मैं तुम्हें जेल भेज दूँगी । मैं बैरिस्टर साजुँगी । जा गो पढ़ने तू, देखती हूँ वेदा मग्यामी कैंग होगा है ।

—वह देव भइया वह देव !—मनि धीरकार कर उठी ।

वह तामी बजा कर नाच सी उठी । भीड़ में वह वहीं दृढ़ नहीं जाने इगमिग अमर का हाथ उस ने पकड़ लिया ।

घात और बुद्ध नहीं थी । एक भेसा दिशाने बाले के नामने एष आदमी नमसी बेहरा लगाये हुए नाच रहा था । उस की पोशाक भी उता अद्भुत थी । हाथ में उस के एक जोड़ा बटुन बड़ी तास थी ।

मनि ने अपने भाई का बुराया खींचने हुए कहा—अरे भइया, धून है धून । वह देखो धून । अमर ने ऊपर देखा—नयमुष श्री माइन-बोर्ड के

ऊपर बड़े-बड़े चमगादड़ों की तरह भूत जैसे नाच रहे हों। तसवीरों के नीचे बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा हुआ था—'जादू और नजरबन्दी'।

अमर ने धीरे से मणि से कहा—'यह भूत का खेल देखोगी ?

मणि गरदन हिलाती ही रह गयी।

लेकिन अमर का मन चंचल हो उठा। मग से कम पैसे में यह खेल देखा जा सकता है।

इसी के बाद गेहआ रंग का एक तम्बू है, उस के बाद कुछ नहीं लिखा है। लेकिन तम्बू के भीतर टन-टन करता हुआ एक घण्टा बज रहा है। दरवाजे पर खड़ा हो कर एक आदमी चिन्ता रहा था—घतम हो गया, घतम हो गया। चले आओ भाई, एक पैसा।

उस के बाद अंगरेजी में कुछ लिखा हुआ था इडियन। इस के बाद क्या था अमर ने उस की स्पेलिंग तो पढ़ ली लेकिन उच्चारण नहीं कर सका—यू. पी. डबल जेड. एन. ई.। मणि प्रसन्नता में नाच उठी।

—ओ भइया, ओ देयो नारद के वेश में नाच रहा है। अमर ने घूम कर देखा। मणि ने झूठ नहीं कहा था, सचमुच ही वह बूढ़ा नारद की ही तरह देखने में था। बंसी ही दाढ़ी, बंसी ही मूँछें और बंसे ही बंठा हुआ मुँह और दो बड़े-बड़े दाँत। नारद मुनि सादी पोशाक पहन कर बाजे के ताल पर अपनी गरदन हिला रहे थे और साय-साय मूँछें भी। मणि बोली—चलो भाई, यही देखें।

अमर तब पास के तम्बू के माइनवोर्ड को पढ़ रहा था। 'बम्बई का कटा हुआ सर !' एक तरफ एक घड था और दूसरी ओर उस के दो गर। दो सर वाला एक आदमी, बीच में रुधिर सना एक मुण्ड।

अमर की इच्छा हुई कि बम्बई का कटा हुआ सर वह देखे। लेकिन दूसरी तरफ बँड बाजा भी बज रहा था। मणि अमर का हाथ पकड़ कर उस बँड बाजे की तरफ ले चली—भइया, उधर देयो, अंगरेजी बाजा बज रहा है। आओ, चले आओ। उस तरफ अच्छे जादू का खेल हो रहा है।

पीछे से जैसे भीड़ ठेनती आ रही थी। जनता के बीच में दोनों बन्दे ऐसे सग रहे थे जैसे नदी की धारा में बहते हुए डूबल। जादू वाले तम्बू के सामने पड़े हो कर किसी प्रकार उन्होंने अपनी रक्षा की।

बहुत बड़े तम्बू के सामने शकशकाता हुआ प्रकाश हो रहा था। एर माचे के ऊपर दो जोकर जैसे आदमी रिंग का खेल दिखा रहे थे। एक आदमी लगातार बिल्लाये जा रहा था—'बली, बली। आ जाओ भाई, दो-दो पैसा, दो-दो पैसा।

हठात् वाजा रुक गया। बड़ा जोकर भाषण की शैली में धोतने लगा—बायू नोंगो...

—हो-हो—छोटे जोकर ने साथ ही उत्तर दिया। अमर और मनि उस के मुँह की ओर भौंचक्के हो कर देख रहे थे।

—घड़े-घड़े क्या सोच रहे हैं ?

—क्या सोच रहे हैं भाई ?—सामने वाले आदमी ने छोटे जोकर की ठीक नाक के सामने जैंगली हिता कर कहा।

वह आदमी भौंचक्का हो गया। छोटे जोकर ने कहा—जाइए, भीतर जाइए। वह देखिए, मेला शुरू हो गया।

तम्बू के सामने का परदा खुल गया। भीतर पिपेटर के डग जैना एक स्टेज दिखाई पड़ा। समाशयीन धबका हो उठे। अमर अपने पंखों के बल घड़ा हो कर कुछ देखने का प्रयत्न करने लगा।

स्टेज के ऊपर नाचने वाली दो छोरियाँ दिखाई पड़ी।

जोकर बिल्लाया—'रकम-रकम' की चीख देखाई भाई ! भीतर जाइए, भीतर जाइए।

कई लोग तब तक भीतर जा चुके थे। साथ ही साथ परदा भी बन्द हो गया। दोनों लड़कियाँ तब तक गाना आरम्भ कर चुकी थी।

एक आदमी फिर बुला।

हठान् पोछे में भीड़ में गोरगुल गुनाई पड़ा—हट जाओ, हाथी-हाथी।

उन-उन शब्द करता हुआ जमीनार का हाथी बाजार के बीच बना जा रहा था। पारो और लोग पायलों की तरह भागे जा रहे थे।

मनि का बगड़ा खोखो हुए अमर बटून दूर तक भाड़ के रेंगे-रेंगे में पला जाता। जरा-सा गुनो जगह में आने ही बिगी में बड़ा—अरे बगड़ा तो छोड़ दे वो छोकरे !

अमर ने विस्मय के साथ देखा—एक किसी अपरिचित आदमी का कपड़ा वह पकड़े हुए है। कपड़ा छोड़ कर वह व्याकुल भाव से इधर-उधर देखने लगा—मणि कहाँ चली गयी ?

केवल मणि ही नहीं गयी, दिन भी ढल चुका था। सर के ऊपर आकाश में तारे टिमटिमाने लगे थे। चारों ओर दुकानों पर मशालें जल चुकी थीं।

अमर को रत्नाई आ गयी। वह सामने की ओर बढ़ने लगा। मेले में जब तक भीड़ बहुत जम चुकी थी। अपने को देखने के अलावा अमर जैसे कुछ नहीं देख पा रहा था। भीड़ के बीच घबका खाने-खाते पता नहीं वह कहाँ आ पड़ा, उसे कुछ होश ही नहीं रहा। 'आनन्द वाखार' के अँगने के बीच उच्छृंखल भावनाएँ धनीभूत हो रही थीं। भीड़ के बीच एक जगह नाच और गाने हो रहे थे। अमर ने बहुत कष्ट के साथ किसी तरह भीतर प्रवेश किया। वहाँ जा कर उसे काठ सा मार गया।

एक आदमी का गला पकड़ कर एक सुन्दरी सड़की पगली की तरह नाच रही थी। घूमते-घूमते नाच के बीच वह आदमी उस तरणी को छोड़ कर नीचे गिर पड़ा। भीड़ हो-हो कर के हँस पड़ी।

दूमरी भीड़ के बीच अमर ने घुस कर देखा वहाँ जुआ हो रहा था। रुपया-पैसा पानी की तरह झमा-झम बरस रहा था। धिलाड़ी बिल्ला रहे थे—एक लगाइए दो पाइए, दो लगाइए चार पाइए।

अमर एक क्षण के लिए सब कुछ भूल गया। अपने पाकेट में हाथ दे कर उस ने कुछ सोचा। किसी एक आदमी ने उस के कंधे पर हाथ रख कर पूछा—जोका, तुम जुआ खेलन आये हो ? अमर ने देखा, एक अट्टारह-उन्नीस साल का सड़का घट्टर का कुरता पहने हुए, माथे पर घट्टर की टोपी।

जुआ खेलने वाला नाराज हो कर बोला—क्यों भाई, आप ऐसा क्यों कर रहे हैं ? मैं ने डेढ़ हजार जमींदार को मारे हैं तब जा कर मैं यहाँ वह खेल दिया रहा हूँ। चलो बच्चे। एक पैसे में दो पैसा, दो पैसे में चार पैसा और तीन पैसा में छह पैसे पाओगे। लगाओ-लगाओ।

अमर उस सड़के की ओर देख रोने लगा। उस लड़के ने उस का हाथ मेलता

पकड़ कर कहा—आओ, हमारे साथ चलो। क्या हुआ तुम्हें ? पीछे जुआ छिलाने वाला बिल्ला रहा था—चोरी नहीं है, डकैती नहीं है। नमोव का सेला है, भाई। मालिक देने वाला है, लगाओ भाई, लगाओ।

भीड़ से बाहर आ कर उस लड़के ने अमर से पूछा—किस के साथ तुम आये हो ? कहाँ घर है तुम्हारा ?

अमर पफ़क कर रो पड़ा। बोला—मेरी बहन खो गयी है

चकित हो कर लड़के ने प्रश्न किया। बहन ! कितनी बड़ी है वह ? तुम से बड़ी है या छोटी ?

—तुम से छोटी है। छह साल की होंगी।

—उम के देह पर कुछ गहना-बोहना है क्या ?

—हाँ, उस के हाथ में दो कगन हैं।

—क्या नाम है उस का ?

—उस का नाम मणि है। घूब खासाफ़ है वह।

आनन्द पगे हुए तमाशबीन चारों ओर घोंर-गुन कर रहे थे। अमर उसी बीच छाती फाड़ कर पल रहा था।

इतनी भीड़ के बीच छोटी सी लड़की धीरे-धीरे उस जादू दिवाने बाने तथ्य में घुम गयी थी। वहाँ इधर-उधर देख कर मणि ने देखा कि उस का भाई नहीं है। मणि को यहाँ मज्रा आया। बसो, उस ने अपने भाई को घूब छकाया। वह बेचारा घुम नहीं सका। रहने दो उगे बाहर ही। लेकिन दूसरे ही क्षण उसका मन उदास हो गया। तो भैया मेरा तमागा नहीं देख पायेगा !

मणि अपने भाई को खोजने लगी, साथ-ही-साथ आबाद भी देगी फिरी। पीछे उगने घूम कर देखा कि टन-टन शब्द करता हुआ एक मोरा दो पैरों के बल छटा हुआ साथ रहा है। मणि हचका-बचका हो उठी। पुता बूढ़ रहा है, बन्दर फोड़े पर चढ़ रहा है, पंखी जड़क गमा रहा है और एक आदमी अपना रंग बदल कर बिजली तरह से लोगों को हँसा गया, हँसते-हँसते मणि का पेट फूट गया।

टन-टन कर के चट्टा बजा। गेट के ऊपर का परदा गिर गया। मेघ घाम। भीड़ के साथ-साथ मणि बाहर भाई, उस ने देखा कि उस का

भाई तो कही नहीं है। थोड़ी देर बाद मणि जैसे सुन्न हो गयी। इस के बाद वह भी भीड़ के साथ ही बाहर चली आयी।

उस का भाई बहुत ही दुष्ट है।

कुछ दूरी पर झूले दिखाई पड़ रहे थे। मणि उम तरफ बड़ी, उस का भैया वहीं जरूर होगा। मणि से छिपा कर शायद वह झूला झूल रहा हो। बगल के एक रास्ते में एक दुकानदार चिल्ला रहा था। चले आओ भाई, चले आओ—कच्चाव-रोटी मोस्त का परौठा। चिगडी ! यह नो भाई, यह लो, थो भोड हट जाओ। लेकिन कोई नहीं हटा। भोड बढ़ती गयी। हठातू वह आदमी चिल्लाया। यह देखो, बहुत बड़ा शेर। मणि जैसे डर सी गयी, उस चिल्ला कर कहा—भइया !

पीछे से फिर हल्ला हुआ—ये हट जाओ, हट जाओ।

किसी ने कहा—अरे भाई, जरा हटो। गाड़ी आ रही है।

जनता दो भागों में बँट गयी। भोड के बीच वह कैसे चल रही थी वह उसे पता ही नहीं लगा। जब उसे साँस लेने का अवकाश मिला तो उस ने पाया कि वह अन्धकार के बीच घुने मैदान में खड़ी है।

परदे से ठकी हुई दुकानों और झकझकाते हुए प्रकाश में मेले की भीड़ सब भी जैसे बढ़ती जा रही थी। ऊपर आकाश में तारे झिलमिला रहे थे। उसी अन्धकार के बीच चारों ओर पता नहीं कौन लोग चले जा रहे थे। पता नहीं कौन उसी के भाई की तरह मिटी वाली बाँसुरी बजा रहा था। मणि बिल्ला उठी—भइया !

दूर मैदान में पता नहीं किस ने उत्तर दिया। क्या भइया-भइया रट लगाती है, भइया तेरा घर में नहीं है। तेरा भाई तो दुतहन लेने के लिए उम पार चला गया है।

मणि ने शीघ्र में उसे गाली दी—मर जा—मर जा, मर जा। लेकिन इस अन्धकार के बीच खड़ी हो कर वह डर रही थी। सामने ही पूग की बनी हुई कुछ शॉपड्रिया थी। उन के पीछे थोडा प्रकाश भी था। मणि आगे बढ़ कर रास्ता खोजने लगी, रास्ता नहीं था। लेकिन उन घरों के पीछे की ओर एक-एक दरवाजे थे। मणि ने एक घर में झाँक कर देखा। साय-ही-साय पता नहीं कौन बोल उठा—कौन ? कौन ?

मणि जल्दी से खिमक आयी। घर के ही भीतर से कोई बोना—
चोर-चोर, चोर है क्या ?

मणि इस बार रोने लगी। इस के बाद घर के भीतर की एक सड़की
बाहर आ कर मणि का हाथ पकड़ कर बोली—कौन है रो, कौन है रो ?
मणि इस बार फटक कर रो उठी। एक दियासलाई जला कर उम ने मणि
के मुँह को देखा। इतनी सुन्दर सलोनी सड़की देघ कर भीतर वाली
सड़की का मुछड़ा कोमल हो उठा। मणि का भी डर जैसे उड़ गया। जिस
सड़की ने पकड़ा था, वह भी सुन्दर थी।

सड़की ने मणि से पूछा—क्यों रो रही हो, क्यों रो रही हो, घुमी ?

उम की देह से सट कर मणि रोते-रोते बोली—मैं अपने भाई को नहीं
पोज पा रही हूँ।

स्नेह से उसे पकड़ कर उस सड़की ने कहा—डर की क्या बात है।
शुम रोओ मत। प्रातः होते ही तुम्हें तुम्हारे भाई के पास पहुँचा दूँगी।

—रात जो हो गयी है।

—होने दो न, तुम तो मेरे साथ आज रहोगी।

मणि को अपनी छाती से बिपकाये हुए वह सड़की अपने घर में घुमी।
उधर भीतर दरवाजे से बाहर आ कर पता नहीं कौन पुकार रहा था—
कमल मणि, कमल मणि।

एक आदमी ने कहा—इस घर में कोई आदमी नहीं है क्या ?

—जरा बैठो तो—मणि को बिछीने पर बैठ कर सड़की ने कहा।

इस के बाद दरवाजा खोल कर वह बाहर आयी और उम ने कहा—
कौन बिन्ना रहा है ?

किमी ने कहा—तुम्हारी पूजा कर्हगा।

भीड़ हो-हो हँस पड़ी। सड़की ने अपना दरवाजा बन्द कर सिधा।

बाहर से फिर किसी ने पुकारा—मुनली हो ! कमल !!

कमल ने कहा—बहुत-जे मरक के दरवाजे तो खुले हुए हैं, जाओ न ?
मेरे द्वारा नहीं होगा।

—बरे, एक बार मुनो तो नहीं।

कमली बोली—श्यादा हल्का करने पर मैं पुनिस को बुलाऊँगी।

भय के कारण मणि भीतर ही भीतर रो रही थी ।

कमली उस के शरीर पर हाथ फेरती हुई स्नेह से बोली—मत रोओ बच्ची, मत रोओ ।

मणि ने अपनी हलाई के बीच ही कहा—मेरा नाम बच्ची तो नहीं है । मेरा नाम है मणि...

—मणि ! तो हाँ मणि, तुम को भूख लगी है ?

—हाँ ।

घर के एक कोने में एक बरतन में कचौड़ियाँ और मिठाइयाँ पड़ी हुई थी, मणि के हाथ में उम ने दिया ।

उस के मुँह की ओर देख कर मणि ने कहा—तुम्हें मैं क्या कह कर पुकारूँगी ।

कमली ने एकाएक कहा—माँ !

मणि ने कहा—नहीं, माँ तो मेरी घर पर हैं ?

एक लम्बी गहरी साँस ले कर वह लड़की रोने लगी । मणि ने कहा—मैं तुम्हें मौसी कहूँगी ? कैसा रहेगा ?

लड़की ने मणि को अपनी छाती से जकड़ कर कहा—हाँ, हाँ, मौसी, मौसी, मौसी ।

मणि ने गरदन हिला कर कहा—अच्छा !—थोड़ी देर बाद मौँगी के माप उस का खूब परिचय हो गया । माँ की बात, पिता की बात, भाई की बात, अरने बूढ़े दादा की बात, छोटी बहन की बात—सब कुछ कह दिया उम ने । यहाँ तक कि उस बदमाश दुकानदार की बात भी वह नहीं भूली । उम ने यह भी बताया कि उसे हवाई जहाज, वह झूला और वह पिलौने कितने अच्छे लग रहे थे ।

हठान् उम ने कहा—तुम जरा चुपचाप सो तो जाओ मणि ! मैं उरा बाहर से घूम आऊँ । पर रोना नहीं । ठीक है न ?

वह लड़की पत्नी गयी ।

निस्तब्ध शान्त उस कमरे के बाहर का प्रचण्ड कोलाहल बच्ची के कान में आ कर बार-बार टकरा रहा था । भय के मारे एक कम्यल छींच कर वह लड़की सो गयी । पीछे से दरवाजा टेल कर कमली ने मीठी

आवाज में पुकारा—मणि !

अपने मुँह से कमल हटा कर मणि ने करवट बदली। और उस ने कहा—ऊँ, ऊँ।

अपने आँचल से बहुत सी चीज कमली ने बाहर की। मणि ने बड़े प्यार से मारी चीजों को अपने पास खींच लिया। ठीक वही हवाई जहाज, शायद वही। और वह घिलौना, लेकिन यह तो उस में भी अच्छा है। और मखमल का चप्पल, अरे यह तो नयी डिजाइन का है।

कमली ने पूछा—तुम्हें पसन्द आया मणि ?

मणि ने स्वीकृति में सरदन हिलाया। कमली ने प्यार से कहा—उरा एक धुम्मा दो तो ?

मणि ने अपना गाल आगे कर लिया। कमली ने उसे अपनी छाती से लगा कर कहा—तुम्हारी माँ अच्छी है या मैं ?

घोड़ा सोचा कर मणि ने कहा—माँ भी अच्छी है, तुम भी अच्छी हो !

कमली उरा हँसी।

मणि ने कहा—तुम बीड़ी क्यों पीती हो। माँसी, मेरी माँ तो बीड़ी नहीं पीती हैं। उम लड़की का चेहरा पता नहीं कँमा हो गया। एक सम्झी साँस में कर उम ने मणि की पीठ ठोकते हुए कहा—तो जाओ, तो जाओ दुष्ट बही की !

—तुम मो जाओ।—मणि ने कहा।

हँग कर कमली ने मणि को अपनी छाती से बिपका लिया और सो पड़ी।

मणि की आँखें धीरे-धीरे बन्द हो गयीं। कमली एक टक उम के मुँह की ओर देख रही थी। हटात् उस की आँखों में आँसू बहने लगे।

पीछे दरवाज़े में पता नहीं किस ने पुकारा—कमली !

उठो-उठो कमली ने बाहर वाली को देखा और पूछा—मौनी !

दाने वाली सरस्वी ने कहा—हाँ, घर में क्यों मोयी पड़ी है री ? क्या हुआ तुम ? दंग, दम के बाद मैं कुछ राखा नहीं दे सरस्वी। जमीनार को मुझे राखा देना होगा।

कमली का कोई उत्तर सुने बिना ही उस ने कहा—वह कौन है रे ?
किस की लड़की है ?

कमली का मुँह साल हो उठा । वह बोली—नहीं जानती ।

—शायद किसी की छो गयी लड़की है ! कहाँ मिली तुझे ?

—घर के पीछे ।

—कोई जानता है ?

उदास हो कर कमली ने गरदन हिला कर कहा—नहीं ।

—तो ठीक है, मुबह ही इसे हटा देना होगा । सरकार को मैं खरा कह
कर आज्ञे ।

बूढ़ी बाहर चली गयी । कमली ने झोंडा दे दिया । मौसी के इशारे में
जो कुछ छिपा हुआ था उसे समझ कर जैसे वह सिहर उठी । बाहर का
कोलाहल धीरे-धीरे कम होता जा रहा था । जादूगर वाला तम्बू और
सरकस के तम्बू जैसे शान्त हो गये थे ।

कमली पीछे की कुण्डी खोल कर एक बार बाहर आ कर पड़ी हो
गयी । अंधेरा बड़ता ही जा रहा था । बटोहियों का आना-जाना बन्द सा
हो गया था । कमली फिर घर में घुमी, इस के बाद उस ने एक क्षण भी
देरी नहीं की । मणि को अपनी छाती से बिपकाये, अपने आँचल में उन्हीं
घिसीनों को लिए हुए पिछले दरवाजे से निकल गयी और अग्रकार में
बिसीन हो गयी ।

—

काला पहाड़

दुनिया के गहब-गहबाले को समझाने में जितना दिमाग लगा है उसे समझाना बड़ा ही नीरस सा है। ना-ममस यूँ छोटें बच्चे की तुलना में और भी अधिक विपत्तिजनक है। बच्चा अगर चाँद चाहता है, तो उसे चाँद के बदन में मिठाई दे कर शांत किया जा सकता है, अगर उस पर भी वह नहीं मानता तो एक क्षापट देने पर वह रोते-रोने लगे भी सकता है। लेकिन ना-ममस बूढ़े को किसी भी तरह नहीं समझाया जा सकता।

यशोदानन्दन बहुत तर्क-वितर्क के बाद भी अपने बाप को यह नहीं समझा सके कि वे दो बैल बयो खरीद कर ला रहे हैं। उन के बूढ़े बाप ने तित्त भाष से कहा था—नब तुम दो हाथी बयो नहीं खरीद कर लाते ?

बल्पना में ही जैसे दो हाथियों ने अपना मूँह बड़ा कर रगसास की देह पर अपने मूँह में पानी फेंक दिया। रगसान शोध से जल-भुन गया। वह हुबरा पी रहा था। यह बात सुन कर अपने बेटे की ओर देख कर अकस्मात् अपने हाथ के हाथों की ओर से माटी के ऊपर फेंक कर कहा—यह मे।

यशोदा अवाहू हो कर अपने दिमा के मूँह की ओर देखने लगा। रगसान ने कहा—हाथी, हाथी। अरे मैं क्या हूँ हठामशारे, जब मैं ने हाथी खरीदने की...

यशोदा ने भी इस बात का कोई जवाब नहीं दिया, शोध के कारण वह भी भीतर-ही-भीतर जल-भुन रहा था।

शायद रंगलाल ने इतनी देर के भीतर 'हाथी खरीदने' वाली बात का जवाब खोज लिया था। उस ने भी एक ध्यंग्य-श्लेषपूर्ण उत्तर दिया— हाथी क्यों ? अरे, दो बकरी खरीदूंगा, उन मे खेती भी होगी और दूध भी पीऊंगा। चाँस की तरह ऊँचे-ऊँचे धान होंगे, तीन-तीन हाथ उन की वालियाँ होंगी। किसान का बेटा है, इसी लिए पढ़-लिख कर मूर्ख हो गया है। अरे बेटा, मैं कहता हूँ, अच्छा बैल लेगा तो खेती होगी। हल मिट्टी में एक हाथ पुसेगा। मँदे की तरह मुलायम भुर-भुरी मिट्टी हों जायेगी, तब तो होगा बेटा, धान, तब तो होगी बेटा, फसल। रंगलाल ने जिद्द पकड़ ली। ऊँरु धरीदेगा वह बैल। इसी बैल खरीदने वाली बात को ले कर बाप-बेटे के बीच इतना तर्क-वितर्क हुआ है। रंगलाल बहुत बड़ा किसान है, बहुत बड़ी जमीन उस की सीर है। खेती पर उस का बड़ा मोह है। जैसी लम्बी-चौड़ी उस की देह है, वैसी ही मेहनत भी वह करता है, राधस की तरह मेहनत करता है वह। मेहनत मजूरी में कभी भी आलस नहीं दिखाता। बैलों के ऊपर भी बड़ा मोह है उस को, और बैल रखने का भी वैसा ही शौक। बैल भी साधारण नहीं, बिलकुल कच्ची उस के बछड़े, रंग ऐसा कि देख पड़ोसी झक मारे, सुन्दर सींग, साँप की तरह लपलपाती हुई पूँछ, और भी ऐसे ही कितने गुण न होने पर उसे बैल पसन्द नहीं होते। और भी एक बात उस पूरे जवार में किसी के भी बैल उस के जैसा नहीं होना चाहिए। बैलों के गले में वह घुंफरु और पीतल की घण्टियाँ बाँध देता है। सुबह साफ पटे हुए टाट-से वह उन की देह को झाड़-पोंछ देता है, दोनों बैलों की सींगों में तैल लगा देता है, और तो और कभी-कभी उन बैलों के पैर भी दबा देता है। पैर दबाते-दबाते वह कहता है—आह ! बेचारे बिना जीग के जीव हैं !

पिछले कई साल से अपने बेटे यशोदा को स्कूल में पढ़ाने के कारण रंगलाल का पुर्ण थोड़ा बड़ गया है। यशोदा ने इस साल मैट्रिक पास कर लिया, और पिछली साल धान की फसल भी धराब नहीं हुई थी। इसलिए रंगलाल को यह जिद्द हुई कि उसे एक जोड़ी बैल चाहिए हों। दोनों बैल छोटे भी नहीं थे। और वैसे बैल बहुत लोगों के पास थे भी।

यशोदा कहता—इस साल तुम बाट लो, एकाध मौकरी-चाकरी करें। इस बार यदि थोड़ा धान बढ़िया हो तो अगली साल बैल बढ़िया खरीदना।

अभी खरीदोगे तो दो सौ रुपये से कम नहीं लगेंगे और रुपये तुम पाओगे कहाँ से ?

रुपया कहाँ से आयेगा, रंगनाल जी से मतलब नहीं, बस उसे केच बेल चाहिए। अन्त में रंगनाल की ही जिद्द रही। यशोदा ने क्रोध के कारण ही कोई विरोध नहीं किया, और रुपये भी जुट गये। उस के पास बैलों की जो जोड़ी थी उसे बेच कर सौ रुपया जुटा और सौ रुपये यशोदा की माँ ने दिया। रंगनाल को उस ने आड़ में बताया कि उस के साथ झगडा करने में क्या होगा ? तुम बेल खरीद कर लाओ न ? खरीद कर लाओगे तो यह कुछ नहीं बोलेंगे। रंगनाल ने खुश हो कर कहा—ठीक कह रही हो। इस के बाद वह अपना भाषा भले ही पीटेगा।

यशोदा की माँ ने कहा—ये लो, मैं अपने गहने दे रही हूँ, इसे बचक रख कर छुब बढ़िया बेल खरीद लो, अगर अच्छे बेल नहीं रहे तो ग्वाने का घर फँसा ?

रुपया-पैसा ले कर बैलों और भैलों के बाजार में वह पाचुन्दी गाँव के मेले की ओर चल पड़ा। रंगनाल ने मन ही मन सोचा कि छूब गुन्दरने दो बेल धरीदूँगा। दूध की तरह सफ़ेद सैकल पाचुन्दी बाजार में जा कर वह तो अयाच् हो गया। बाप रे बाप ! यहाँ तो हज़ार से कम की बात ही नहीं। भैय और बेल मिला कर याकई एक हज़ार रहे होंगे और आदमियों की भीड़ भी घेरी ही थी। जैसों और बँसों की पों-पों, बाँ-बाँ, और आदमियों का बैगा काँगाहल। दोरहरी का मूरज सर के ऊपर। जहाँ पर जानवर खरीदे और बेचे जा रहे थे वहाँ जरा भी छाया नहीं थी। लेकिन आदमी उग तरफ मोप भी नहीं रहे थे। रंगनाल भी उमी भीड़ के भीतर पता नहीं कहाँ ग्यो गया। सारे पशु सट कर धके हुए थे। ब्यातारी बिल्मा रहे थे—उट गला, ये देखो पला गया, सेर का बच्चा है, सेर का बच्चा है, पैस नहीं जैंग अरबी घोडा है !

रंगनाल तीव्र दृष्टि में अपने मन के मुताबिक बेल ढूँढ़ रहा था। उग तरफ कुछ मोर-गुम हो रहा था। जान पड़े जा रहे थे, ऐसा लग रहा था, मानुष होता था कि दगा हो गया। रंगनाल उमी तरफ चला। इस ओर भैनों का बाजार था। बापे-बापे दुर्दान्त पशु इधर-उधर घूम रहे थे।

व्यापारियों के झुण्ड बड़ी-बड़ी बाँस की साठियाँ लिये हुए जानवरो को पीट रहे थे और जानवर बेतहाशा भागे जा रहे थे। कितने तो पोखरे में घुस गये थे। छोटे पड़वे से ले कर बूढ़े भैंसे तक आये थे। बहुत-से भैंसों के देह पर चमड़े भी छूट गये थे और लाल-लाल घाव दिखाई पड़ रहे थे। थोड़ी दूर पर आम के पेड़ों से घिरी हुई एक बावरी थी। वहाँ पर आदमियों की काफ़ी भीड़ थी, रंगलाल उसी तरफ़ चल पड़ा। एक व्यापारी एक भैंसे को पीट कर इधर ही ला रहा था। हठात् उस के हाथ की साठी छिन्नक कर रंगलाल के पास ही गिर पड़ी, रंगलाल को ज़रा मा क्रोध हुआ। उस ने साठी उठा ली।

व्यापारी को ज़रा भी अवसर नहीं था, उस ने व्यस्तता में कहा—
साओ, साओ, साठी आओ।

—अगर मुझे लग जाती तो ?

—तो क्या होता ? अरे थोड़ा-सा खून गिरता, और क्या ?

रंगलाल को तो काँठ मार गया—खून गिरता, और क्या होता !

—दे दो भाई, दे दो भाई, साठी दो। हाथ से छिन्नक कर गिर पड़ी।

रंगलाल को अच्छी तरह देख कर व्यापारी ने अन्न की दार विनम्रपूर्वक कहा।

साठी देते समय रंगलाल मिहर गया—यह क्या, साठी के अगले भाग में सोहे की कीलें ठुकी हुई थी। व्यापारी ने हँस कर कहा—उसे देखने की कोई ज़रूरत नहीं है, साओ भाई, दे दो।

रंगलाल ने ध्यान से देखा—एक नहीं, दो नहीं, तीन-तीन कीलें ठुकी हुई थी। रंगलाल के मन में वह बात याद हो उठी—उस ने सुना था कि व्यापारी अपनी साठियाँ में ऐसे ही सोहे की कीलें लगा कर रखते हैं, भैंसे इसने कारण पागलों की तरह इधर-उधर दौड़ने हैं।—ओफ़, एक लम्बी साँस ली रंगलाल ने।

व्यापारी ने कहा—क्या खरीदोगे मासिक ? अगर भैंसे खरीदने हों तो बसो, ख़ूब अच्छे भैंसों की जोड़ी दे दूँगा।—और ऐसा कह कर वह भैंसों को सुसाने लगा—आओ, आओ !

—बाप रे बाप ! बसिहारी है तुम्हारी !

—रंगलाल वहाँ से चला आया। चारों ओर भैंसों का ही मेला था। कुछ भैंसे चुपचाप बैठे थे, कुछ घड़े थे, कुछ आँखें मूँद कर जुगाती कर रहे थे।

बैल इस तरफ नहीं थे। रंगलाल वहाँ से लौट पड़ा। लेकिन बगीचे के आखिरी में आ कर वह ठमक कर पड़ा हो गया—यह क्या! ये भैंसे हैं या हाथी? इतने बड़े प्रचण्ड आकार के भैंसे जीवन में रंगलाल ने कभी नहीं देखे थे। कई आदमी वहाँ पड़े थे। एक आदमी कह रहा था—ये भैंसे कौन लेगा बाबा?

व्यापारी ने कहा—भाई, यह वही लेगा, जिस के पाम जमींदारी होगी और वह लेगा जिसे सदमी की जरूरत है। पाँच-सात बाजार तो बूँड़ चुका, देखूँ अब कहीं ओर जाना पड़े। एक-दूसरे आदमी ने कहा—ये भैंसे गृहस्थ ले कर क्या करेगा? इन के हल का मूँठ भला कौन धरेगा? और इस के लिए भला आदमी कहीं में मिलेगा?

व्यापारी ने कहा—ओ भाई, बुद्धि में आदमी शेर को बग में कर लेता है। ये तो भैंसे हैं। अरे जरा-सा हल बड़ा कर देने से ही इन सातों की नानी मर जायेगी। और इन का हल जमीन के भीतर डेढ़ हाथ घुसेगा।

रंगलाल अपनी तीक्ष्ण आँखों से प्रशंसा की दृष्टि से उन भैंसों की जोड़ी की ओर देख रहा था—वाह, वाह! जितनी बड़ी देह है वैसा ही चेहरा है। कम-से-कम बीस मन बज्जन तो वे खो सकते हैं, और क्या कामा रंग हैं, जैसे कसौटी परपर। और दोनों सींग देखने लायक हैं, और ये दोनों ही भैंसे जैसे जुड़वा हो।

लेकिन वह क्या काम दे पायेगा? अच्छा बसो, देखा ही जाये, बाजार घूम हो जाने पर लोग जब बने जायें तब कोशिश करेगा वह। व्यापारी ने भी तो कहा है, पाँच-गान बार-बह बाजार में आ चुका है और कोई धरोदार नहीं मिला, बात तो बेवस रपणों की नहीं है, सब से बरी बात दोनों बिगान भैंसों के पेट की भी तो है।

रंगलाल ने ये दोनों भैंसे धरोद मिये, बिभी भी तरह वह अपनी मानव को नहीं रोक गया। व्यापारी कई बाजार आ-जा कर हिरान हो गया था। उस ने बहुत-से रुपये बटवें हुए थे। जब उस ने देखा कि रंगलाल के पाम

और कोई चारा नहीं है तो उम ने एक सौ अठ्ठानवे रुपये में दोनों भैंसें रगलाल को सौंप दिये। रगलाल प्रसन्नता से भर उठा। अपने कल्पना के नेत्रों से वह अपने गाँव वालों की फँसी हुई आँखों को देखने लगा किन्तु जब वह अपने घर के नजदीक पहुँचा तो जैसे उस का उत्साह उदासी में बदलने लगा। अपने पड़े-लिखे सडके से बहुत डरता है वह, उस की बातों का जवाब देने में रगलाल हाँफने लगता है। इस के अलावा इतने बड़े दोनों जानवरों का पेट भरना भी तो सीधी बात नहीं है। एक-एक के ही पेट में एक बोझ से ज्यादा चारा ममा जायेगा। और उस की घर वाली— यशोदा की माँ क्या कहेगी? भैंसों का नाम सुनते ही उस के देह में आग लग जाती है। रगलाल मन-ही-मन चिन्ता करता हुआ बीच-बीच में विद्रोह कर उठता था। क्यों? किस का डर है? और किस का भय है और घर ही किस का है? और मकान मालिक कौन है? किम की बात सुनेगा वह? ऐसी-आरी कैसी होगी, यह बात कौन जानता है? रगलाल के मन में हुआ कि मिट्टी के नीचे सोयी हुई लक्ष्मी जाग उठी है। मिट्टी के नीचे बस हल के स्पर्श ही भाना पृथ्वी अपनी झोली में सब कुछ लेकर उस के सामने आ पड़ी होगी।

लेकिन यह भाव स्थायी नहीं रहता उस के मन में, फिर वह अपनी पत्नी और अपने बेटे के मुख की याद करते जैसे उदाम हो जाता। मन ही मन फिर वह उस के खुशामद की बात सोचने लगता। घर आते ही उस ने यशोदा से हँस कर कहा—सचमुच एक जोड़ा हाथी ही खरीद कर लाया हूँ, तेरी ही बात रही। यशोदा ने सोचा कि शायद पिता जी पृथ्वी के सन्धे-चोड़े एक जोड़े बैल खरीद लाये हैं। उस ने कहा—बहुत बड़े बैल अच्छे नहीं होते। उन की गढ़न बड़ी मज्दत होती है, खर।

रगलाल ने हँस कर कहा—मैं ने बैल नहीं खरीदे, मैं भैंसों की जोड़ी खरीद लाया हूँ।

यशोदा ने आश्चर्य से कहा—भैंसे ?

—हाँ।

—तुम ने भैंसे खरीदे? यशोदा की माँ ने कहा।

—हाँ।

—और तुम फिर अभी हेस रहे हो, मेरी देह जरी जा रही है। यशोदा की माँ ने तित्त भाव में कहा।

—अहा, अरे भाई, एक बार अपनी आँख में देखो तो और देव बन कहो। लाओ-लाओ ताँटे का पानी इधर दो, उबरा हल्दी साओ, तल साओ, सिन्दूर साओ और राम-राम कर के भँसों की घर में बाँधो।

भँसों को देख-मुन कर यशोदा का मुँह और भी गिर गया उम ने कहा—चलो, इस बार जो कुछ भी पुआल और धारा है वह सब इन के पेट में भर दो। बाप की बाप इन का पेट ! ये तो बिलकुल कुम्भकरण हैं। भना कहाँ से इन के लिए धाराक जुटेगी ?

यशोदा की माँ भीचकड़ी-सी खड़ी दोनों भँसों को देख रही थी—भय ही भयकर हों ये लेकिन एक रूप हैं। बाह, आदमी इनकी ओर देखे तो देखता ही रह जाये। दोनों भँसे उबरा-सा सिर झुका कर निरछी नहरों से साँपी को देख रहे थे। क्या भीषण दृष्टि थी !

रंगलाल ने कहा—साओ-साओ, पैरों पर पानी डालो।

—बाबा-रे ! उन सवों के पास नहीं जा सकती।

—नही-नही ! आओ तुम, आओ, कोई डर नहीं, चली आओ। गुरु शीघ्रा है।

यशोदा की माँ धीरे-धीरे डर के साथ आगे बढ़ी। दोनों भय में फीनों करते हुए जैसे कुछ कहना चाह रहे थे। रंगलाल ने कहा—ओ गुरुद्वार, ये तुम लोगों की माँ है। तुम लोगों को भान दिखायेगी, घूमी देगी। ये घर की मालकिन है, इस को पहचान लो।

तब भी यशोदा की माँ गिबक कर आयी, बोली—नही भाई, लेप और गिरूर तथा हन्दी तुम छूद हो उम के मोह में लगा लो। मैं नहीं लगा सकती। मैं तो जैसे काँडा पहाड़ जैसा चेहरा है।

रंगलाल बोले उठा—बाह, क्या बात कही ! एक का नाम 'काँडा पहाड़' ही रहेगा।

—अच्छा, यह जो मोटा है, इस का नाम माँ काँडा पहाड़ रहेगा। और इस दूसरे का नाम क्या होना उबरा बोली माँ ?

उबरा माँ बोले कर उम ने कहा—एक का नाम कुम्भकरण रहे।

यशोदा ने कहा है। ठीक ही कहा है।

यशोदा की माँ भी प्रगन्न हो उठी—नेकिन यशोदा प्रसन्न नहीं हुआ।

नाराज हो कर रंगलाल ने कहा—यह भारी बेहरा देखने का मैं आदी नहीं हूँ। चाहे वह मेरा गुरु हो चाहे मेरा मालिक हो।

रंगलाल काला पहाड़ की पीठ पर चढ़ कर कुम्भकरण को हाँकता हुआ नदी के किनारे उन्हे चराने जाया करता था। फिर लौटता था सीन बजे शाम को। यह केवल चारे बचाने के लिए नहीं, बल्कि उसे जैसे एक नगा सा हो गया था। घर के सभी लोग उस से नाराज थे, यहाँ तक कि उस की घर वाली भी।

रंगलाल हँस कर कहता—इस बार देखो, मैं पूआल कितने में बेचता हूँ। और उसे ही बेच कर तुम्हारे लिए एक गहना खरीद दूँगा।

यशोदा की माँ कहती—यया गहने के लिए मुझे नींद नहीं आती, क्या मैं तुम्हे दिन-रात अँगारों से धागती रहती हूँ, जो तुम गहनों की बात कहते हो?

—कितनी दिन बेटा अजगर के या शेर के पेट में चला जायेगा। यशोदा कहता।

बात सच है। नदी के किनारे माँपो का बहुत डर था, बीच-बीच में एकाध शेर भी आ जाते थे। रंगलाल इन गव में डरता ही नहीं था। नदी के किनारे जा कर एक पेड़ के नीचे घमछा बिछा कर वह सो रहता। दोनों भैसे घुपघाप चरते रहते, वे जब दूर चले जाते तब वह मुँह में एक विचित्र आवाज करता—आँ-आँ, आद-आद। और फिर भैंसे चिल्लाने लगते। दूर में ही आवाज गुन कर काला पहाड़ और कुम्भकरण पाम छोड़ कर, मुँह उठाकर उम की ओर आँ-आँ करते हुए दीड़े चने आते। रंगलाल के पाम आ कर उग के मुँह की ओर ताक कर वे जैसे प्रश्न करते—क्यों चिल्ला रहे हो?

रंगलाल दोनों के गालों पर थप्पड़ मार कर कहता—तुम लोगों के पेट में आम सभी है। पास चरते-चरने इनकी दूर चने जाओगे। यहाँ पाम में ही चरो।

दोनों भैंसे फिर वही न जाने, वे वही पर आँख मूँद कर मो रहते। कभी-कभी वे पगुरी करने लगते, कभी-कभी नदी में डूबे रहते। रंगलाल के

पुकारने पर नदी में से उठ कर चले आते ।

अपने सेतां में जब वह हल चलाता तो बहुत बड़ा एक हल उस की मुट्ठी में होता । काला पहाड़ और कुम्भकरण खेल-खेल में ही उस काली मिट्टी को चीरने हुए आगे बढ़ने रहते । एक हाथ से भी गहरा गड़ा मिट्टी के नीचे बनता चला जाता । एक बहुत बड़ी बेलगाड़ी से एक सत्ते मकान जितना ऊँचा घान का घोड़ा साद दिया जाता और वे दोनों उसे हँसी-हँसी में जैसे खींच ले जाते । लोग अवाक् हो कर ताकने रहते ।

धीच-धीच में 'काला पहाड़ और 'कुम्भकरण' को से कर बहुत बड़ी विपत्ति पड़ी हो जाती । एक-एक दिन बीच में वे दोनों राक्षस की तरह आमने-सामने खड़े हो कर कंधों में धौ-धौ किया करते । नीची गरदन बरके वे अपना सींग ऊँचा उठा कर, सामने जाने दोनों पैरों से मिट्टी कुँदने हुए आगे बढ़ जाते और उन की लड़ाई शुरू हो जाती और रगसात को छोड़ कर किसी की भी हिम्मत नहीं पड़नी कि उन के सामने जाये । रगसात एक बहुत बड़ी घाँस की साड़ी ले कर बिना किसी डर के उन दोनों के बीच पड़ा हो कर मारना शुरू करता । मार के आगे वो दोनों घुपघात ग्रस्तक जाते । रगसात उस दिन उन दोनों को ही मचा देता । दोनों की ही अलग-अलग बाँध बर रगसात, और उस दिन उन्हें दाना-पानी, धूँसी, चारा कुछ भी नहीं देता । इस के बाद उन दोनों की अलग-अलग महत्वाकांक्षा । फिर उन्हें पेट भर कर खिलाता, फिर दोनों को एक साथ मिला देता । साथ ही साथ उन दोनों को उपदेश दे देता—'छि', शगड़ा नहीं किया जाता । एक साथ मिल-जुग कर रहोगे ।

तीन मास बाद हठात् एक दिन एक दुयेंदना हुई । गरमी का समय था । रगसात नदी के किनारे एक झाड़ी पे निश्चिन्त हो कर सो रहा था । काला पहाड़ और कुम्भकरण दोनों सोड़ी दूर पर भाग कर रहे थे । हठात् एक दूसरे तरफ की आवाज सुन कर रगसात की आँखों में नींद उठ गयी, उस का गुरू जयने मगा । उस ने देखा कि जहाँ में झाड़ी शुरू होगी है उगी रातने में एक चीला हिरण भाग में उसी की ओर भाग रहा था । भयानक चीला था वह । धो-धो करने हुए जैसे वह आक्रमण की दृष्टि दे रहा था । रगसात डरपोक नहीं था । उस ने बर्द बार पत्ते भी चीलों के शिकार में भाग लिये थे । रगसात में टीक समझ लिया कि इस मोहरे रातने के ही

कारण चीता यहाँ घुसने में डर रहा था नहीं तो वह अब तक आक्रमण कर चुका होता। यह जल्दी से घिसटता हुआ उलटी तरफ चला गया और उस झाड़ी के पीछे बाने बहुत बड़े पेड़ की आड़ से आवाज लगायी—आँ-आँ-आँ !

एक क्षण के ही बाद उधर से भी आवाज आयी—आँ-आँ-आँ !

चकित हो कर चीते ने चारों ओर देखा। उसकी आँर काला पहाड़ और कुम्भकर्ण भले जा रहे थे। चीता भी अपने दाँतों को निकाल कर गरजने लगा। रंगनाल ने देखा कि काला पहाड़ और कुम्भकर्ण कितने भयंकर होते हैं। इसनी भीषण मूर्ति नहीं देखी थी उन की। धीरे-धीरे वे दोनों नजदीक आते हुए भी उलटी तरफ जा रहे थे। थोड़ी ही देर में वे दोनों चीते के दो तरफ खड़े हो गये। अब चीता बीच में था और उस के एक तरफ काला पहाड़ और दूसरी तरफ कुम्भकर्ण। चीते ने विपत्ति ताड़ लिया। चीता छोटा भले हो लेकिन फिर भी है तो वह चीता। हुआत, उछल कर यह कुम्भकर्ण के ऊपर कूद पड़ा। दूसरे ही क्षण काला पहाड़ अपनी सीढ़ी सींगों के साथ आगे बढ़ा। काला पहाड़ के सींग के चपेट से चीता कुम्भकर्ण की पीठ से दूर छिटक कर गिर पड़ा। आहत कुम्भकर्ण पागलों की तरह आगे बढ़ा और चीते के पेट में उस ने अपनी दोनों लम्बी सीढ़ी सींगें धुसेड़ दी। उस की सींगें चीते के पेट में कैसें हुई थी। मुमूषु चीते ने कुम्भकर्ण की गरदन अपने जबड़े में पकड़ लिया। दूसरी तरफ में काला पहाड़ आ कर चीते के ऊपर अपनी सींगों में बार करने लगा। रंगनाल भी उत्तेजना से उन्मत्त हो कर अपनी साठी द्वारा चीने को पीटे जा रहा था। थोड़ी ही देर बाद दोनों ही पशु मिट्टी पर गिर पड़े। चीता अभी जीवित था लेकिन केवल दो-एक अंग ही वह हिला पा रहा था। कुम्भकर्ण नीचे गिरा हुआ होफ रहा था, उस की दृष्टि रंगनाल की ओर थी और उस की आँखों से लगातार आँसू गिर रहे थे।

रंगनाल बालबो की तरह रोने लगा। सबसे बड़े विपत्ति हुई बाला पहाड़ को ले कर। वह लगातार आँ-आँ करता हुआ बिल्लाना और रोना रहता।

रंगनाल ने कहा—शापद इस का जोड़ बना गया है। इसलिए यह नहीं रह पा रहा है। इस का एक जोड़ बाजार में गरीबना हो होगा।

दूसरी बार के बाजार में बहुत देखने-सुनने के बाद काला पहाड़ का एक साथी वह खरीद लाया। काफी रुपये लगे। एक ही भैंस का दाम देना पड़ा डेढ़ सौ रुपये। फिर भी काला पहाड़ के योग्य वह साथी नहीं हुआ। इस नये भैंसे की उम्र अभी कच्ची थी, अभी वह बड़ेगा। अभी तो केवल आगे के दाँत निकले हैं। बड़ा होने पर वह भी काला पहाड़ की ही तरह होगा, ऐसा रंगलास को लगता है।

लेकिन काला पहाड़ उस नये भैंसे को देख कर ही क्रोध में भर उठा। अपनी सींगें टेढ़ी कर के वह पैरो से मिट्टी फोदने लगा। रंगलास जल्दी से काला पहाड़ को एक सोहे की ज़मीन में बाँध आया। और बोला—तुम्हें नहीं पसन्द आ रहा है? लेकिन यह सब नहीं होगा। मार कर तुम्हारी हड्डी-गुड्डी तोड़ दूँगा।

नये भैंसे को बाँध कर उस ने उसके मुँह में जाब लगा दी। अपनी पत्नी से उसने कहा—काला पहाड़ तो बिलकुल गुस्सा गया है इस को देख कर। देखो न इस का कितना गुस्सा है।

यशोदा की माँ ने कहा—मैं कहती हूँ भला यह कुम्भकर्ण को बँधे भूल सकेगा। कितने दिनों का प्रेम है। यह कह कर उस ने पति की ओर देखा और पितृक से हँस पड़ी।

रंगलास भी हँसा। इधर-उधर देख कर उस ने कुमकुमा कर कहा—जैसे हमारे और तुम्हारे बीच में प्यार है।

—थुप रहो, तुम्हें बोलने का सहर नहीं है। वे दोनों भीने दोगत हैं।

—हाँ, यह तो है ही है—रंगलास ने हार मानने हुए भी प्रसन्नता जाहिर की। इस के बाद कहा—अच्छा, उठो-उठो, जाओ घोड़ा पानी, बटुआ लेल, हन्दी और मिर्चूर में कर आओ।

ठीक इसी समय पर का गाला दोड़ा हुआ आया और उस ने कहा—अरे जल्दी आओ, बामा पहाड़ तो उस नये को बिलकुल मार डालेगा।

—यह क्या बान दूँ रे? देने तो उसे सोहे की ज़मीन में बाँध दिया था!

रंगलास दोड़ कर बाहर गया। गाला उस के पीछे-पीछे आया। उस ने कहा—दग ने तो मूँटा ही उगाड़ दिया है। और भीतर-ही-भीतर

जलमपर

फों-फों कर रहा है।

रंगलाल ने आ कर देखा, ग्वाले की बात विलकुल ठीक थी। सिकड़ीं सहित खूँटे को उपाड़ कर काला पहाड़ नये भैसे को प्रचण्ड क्रोध से मारे जा रहा है। नया भैसा काला पहाड़ की तुलना में कमजोर था, इस के अलावा वह बेचारा खूँटे से বেঁधा हुआ था। चुपचाप चिल्लाये जा रहा था। रंगलाल ने इसे साठी मारना आरम्भ किया, फिर भी काला पहाड़ बश में नहीं आया। निमंत्रण भाव से वह नये भैसे को मारे जा रहा था। किसी तरह जब उसे बश में किया गया तब तक नये भैसे की अवस्था मौत के करीब थी। रंगलाल भाये पर हाथ दे कर बैठ गया।

यशोदा ने कहा—इम को घर में मत रखो। इस को घेघ दो। इस का फिर जोड़ा खरीद कर लाओगे तो उस से मार-पीट करेगा।

रंगलाल ने बात का जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप सोच रहा था कि यशोदा की बात ठीक है। काला पहाड़ का दिमाग खराब हो गया था। भैसे का दिमाग अगर एक बार खराब हो जाये तो फिर शान्त नहीं होता। लेकिन फिर भी काला पहाड़ की आँखों से आँसू गिरता रहता है। एक दिन चरबाहे ने आ कर कहा—मैं आप का काम नहीं कर सकूँगा—हो सकता है किमी दिन काला पहाड़ मुझे ही जान से मार डाले। रंगलाल ने कहा—भैसे जरा गुस्सेल होते हैं। चल जरा मैं देखता हूँ।

रंगलाल काला पहाड़ के पास आ खड़ा हुआ। लाल आँखें किये हुए काला पहाड़ ने अपना मुँह रंगलाल की गोद में रख दिया। रंगलाल परम स्नेह से उस की गरदन पर हाथ फेरने लगा।

लेकिन रंगलाल लगातार काला पहाड़ के पास रहता नहीं कि उसे वह शान्त करेगा। बीच-बीच में वह अपना मुँह उठा कर चिल्लाना शुरू करता था—आँ-आँ-आँ!

अपना मुँह जैसा कर के जैसे वह कुम्भकर्ण को खोजता रहता। पगहां तुड़ा कर वह नदी की ओर चला जाता। रंगलाल के अलावा यदि कोई उसे सोटाने जाता तो वह अड कर खड़ा हो जाता।

एक दिन उस ने एक साथ के बछड़े को मार डाला, इम बछड़े के साथ इन दोनों का पहने अच्छा सम्बन्ध था। कुम्भकर्ण और काला पहाड़ जब

पेट भर जाने के बाद बैठ कर पगुरी करने तक वह आ कर उन की नाद से चारा खाता । बहुत दिनों तक वह उन के पेट के नीचे आ कर अपनी मामूमियत में माता के धन भी टटोलता रहता । लेकिन उस दिन बाना पहाड़ का मित्राज ठीक नहीं था, उस दिन आते ही उन ने बछड़े को प्रचण्ड थोप से अपनी सींगों द्वारा मार बिराया ।

अब यगोदा ने रगलाल की अपेक्षा नहीं की । एक व्यापारी को बुला कर काला पहाड़ को बेच दिया । और बहुत कम दामों में बेचा । व्यापारी ने कहा—हो सकता है मेरे माठ रुपये पानी में चने जायें । ऐसा बिगड़ल भंगा भी कोई लेता है !

यगोदा किसी तरह ठेस-ठाल कर दम पाँच रुपये और बढ़ा सया । रगलाल थुपचाप जमीन पर बैठ रहा । नीचे ताकता रहा वह ।
हाँ-हाँ-हाँ !

रगलाल थुपचाप बैठ हुआ था । हाँ-हाँ शब्द सुन कर वह चौंक उठा । तपमुच यह तो काला पहाड़ है । काला पहाड़ लौट आया । रगलाल उस के पास चला गया । काला पहाड़ ने उस की गोद में अपना सिर रख दिया ।

व्यापारी ने आ कर कहा—मेरा रुपया लौटा दो भाई, यह भंगा मैं नहीं ले सकता । बाग रे बाप ! यह मेरी जान ले लेगा ।

पता लगा कि घोड़ी देर तो काला पहाड़ ठीक था, लेकिन बाद में गूँदा उबार कर यहाँ दौड़ा चला आया ।

व्यापारी ने कहा—भाई, जब मैं लाठी उठाता था, बाग रे बाप ! तब कौन यह ताकता था ! और फिर मुझे दौड़ाया कि एक मीन तक दोरना रहे गया, तब किसी तरह जान बची । हम के बाद यह आप के दर्जी पट्टे साँग में दौड़ा चला आया । भाई, मेरा रुपया लौटा दोजिए ।

अपना रुपया मैं कर वह चला गया । यगोदा ने कहा—एक काम करो, मुझ मेरी दाग मानों तो दाकार चने जाओ ।

रगलाल ने कहा—मैं नहीं जा सकता ।

—भमा और बीन मैं जा सकता हूँ ?

लेकिन वह हँसते-हँसते लौट आया। काला पहाड़ को कोई नहीं खरीद सका। उस व्यापारी ने वहाँ ऐसी बदनामी कर दी थी कि कोई उस भैसे के पास आया तक नहीं।

यशोदा ने कहा—तब अगली बार के बाज़ार में जाना।

—यहाँ तो वह व्यापारी नहीं जायेगा।

रंगलाल को जाना ही पड़ा। पढ़ा-लिखा नौकरी करता हुआ लड़का। अब वह बड़ा हुआ है। भला उस की बात कैसे काटेगा रंगलाल? और काला पहाड़ को खपने की बात भी खोर दे कर नहीं कही जा सकती। भैसे का दाम डेढ़ सौ रुपये था। हम के बाद बछड़े के मरने का प्रायश्चित्त सात-आठ रुपये। इसी एक महीने के भीतर सैती बन्द हो गयी, भला इस नुकसान को कैसे पूरा किया जा सकता है।

बाज़ार में एक व्यापारी ने काला पहाड़ को देख कर बड़े प्रेम से उसे खरीद लिया। दाम भी उस ने अच्छा ही दिया—एक गौ पाँच रुपये।

रंगलाल ने कहा—देखो भाई, मेरा यह भैंसा ज़रा मुझ से ज्यादा प्यार करता है। अभी जैने बाँधा हुआ है वैसे ही रहने दो। मेरे जाने के बाद तुम लोग से कर जाना। नहीं तो फिर बदमाशी करेगा।

रंगलाल की आँखों से आँसू गिर रहे थे, व्यापारी ने हँस कर कहा—ठीक है।

रंगलाल जल्दी में पैर धुँवा कर स्टेशन आया और ट्रेन में बैठ गया। पैदल चल कर आने की शक्ति उस में नहीं रह गयी थी।

घोड़ी देर बाद व्यापारी ने 'काला पहाड़' को पगले गहिन धोखा। काला पहाड़ उस की ओर देख कर जैसे चकित हो गया और उस ने चिल्लाता गुरु किया—आँ-आँ-आँ!

वह रंगलाल की खोज रहा था। लेकिन कहाँ है रंगलाल? व्यापारी ने उसे साठी में धीरे में खोद कर कहा—चलो-चलो!

काला पहाड़ फिर चिल्लाया—आँ-आँ-आँ!

वह गूँटि पर ही खड़ा रहा, वहाँ में नहीं मरका।

व्यापारी ने फिर मारा उसे। काला पहाड़ पापलों की तरह चारों

और रगलान को बूँद रहा है।

कहाँ है वह ? नहीं, वह तो नहीं है वह।

काला पहाड़ बहुत ओर से पगहा तुड़ा कर व्यापारी के हाथ से छूट कर भाग चला।

वह मुंह उठा कर दौड़ता जा रहा था और चिल्लाता जा रहा था—
आई-आई-आई !!

व्यापारी कई आदमियों को जुटा कर काला पहाड़ के रास्ते में आ खड़ा हुआ। लेकिन साठियों की परवाह न कर के काला पहाड़ ने ज्यों ही अपनी सींगों को ऊपर उठाया, लोग प्राण में डर पागलों की तरह भाग चले।

लेकिन यह क्या ! यह सब तो उन का वित्तकुल अपरिचित है।

शहर के रास्ते में दोनों ओर दुकानें, इतनी भीड़। यह क्या है ?

एक घोड़ा-गाड़ी आ रही थी। काला पहाड़ डर के मारे बगल के रास्ते पर झड़ पड़ा। रास्ते के सारे आदमी चिल्ला उठे—किस का भैया है यह ? किस का भैया है ?

कितना विचट मरद कर रहा था वह।

एक मोटर आ रही थी। काला पहाड़ जानबूझ हो गया था। अने मन की आँखों में जैसे वह अपने घर को देख रहा था और रगलान को खोर में पुराना रहा था। वह धड़कने में एक पल की दुकान को बचना शुरू करता हुआ उलट रास्ते की ओर चल पड़ा।

लोग प्राण के डर के मारे इधर-उधर भागने लगे। काला पहाड़ भी प्राणों के भय में भाग रहा था। देखते ही देखते दो आदमी ज़मी हो गये। काला पहाड़ दौड़ रहा था और चिल्ला रहा था—आई-आई-आई ! लेकिन यह क्या दौड़-धुन कर वह जैसे कुछ भी नहीं सोच पाया। कहाँ है उन का घर ?

फिर वही विचट मरद ! एक अपरिचित जानवर ! इन बार प्रलय त्रोप में वह सड़ने के लिए तैयार हो गया।

मोटर भी जैसे हमी की खोज में आ रही थी। वह पुनिग इन्स्पेक्टर की मोटर थी। पहले भेंगे की ग़जर वहाँ पहुँच चुकी थी।

मोटर रुकी। काला पहाड़ क्रोध से आगे बढ़ा। लेकिन इस के पहले एक कठिन ऊँची आवाज़ हुई। काला पहाड़ कुछ भी नहीं समझ सका। मन्त्रणा से वह छटपटा उठा—दो-चार क्षणों के लिए। इस के बाद वह ज़मीन पर गिर पड़ा।

पुनिस इन्स्पेक्टर ने रिवॉल्वर को उम के केस में छोंसते हुए कास्टे-बिल को कहा—डोम लोगों को बुलाओ !

□

नारी

दवाघाने के सामने एक टैंकमी आ कर रकी। आवाज करना हुआ इजिन धुआं छोड़ कर बन्द हो गया।

डॉक्टर ने प्रेस्क्रिप्शन लिखते-लिखते मुंह उठाया। उस इजिन के बन्द होने के शब्द से डॉक्टर ने समझा कि कोई मोटर मे आया है। सड़वाई के इस वक्त्र पेट्रोल पर जो कंट्रोल था उसे देखते हुए मोटर का आना आदमी के मन मे उत्सुकता जगायेगा हो। पास कर के जहाँ बड़े-बड़े डॉक्टर—ब्रिज की फीम बस्तीम रुपये, चौगठ रुपये और सो रुपये हो उन के सामने मोटर खड़ी हो तो दूसरी बात है। लेकिन एक साधारण से मध्यम वर्गीय डॉक्टर के घर, ब्रिज की फीम बेचन भाठ खाने हो, उस के दरवाजे के सामने यदि कोई मोटर पर आने तो पना नहीं बँगा सगता है। डॉक्टर और भी आश्चर्यचकित हुआ। अचानक एक महिला आयी है। दूगरे ही क्षण डॉक्टर ने अपनी आँखें नीची कर के दवा की पुरखी लिखनी शुरू की। डॉक्टर के पास ब्रिजने सोपों की भीड़ रहती है। रोटियों के बारे में डॉक्टरों का मन एक प्रकार से मशगलाओं की तरह निविबार रहता है। उन्हें कोई उत्सुकता भी नहीं रहती और कोई विमर्श भी नहीं रहता। रोमी आता है, डॉक्टर देखता है। टेम्परेंचर, हाट, मन्म, जीभ, पेट, आदि कई प्रान कर के पुख्ती लिखता और फिर बसा देता है कि क्या खाना होता। फिर दूगरे आदमी को कहता है—आज को क्या हुआ है?

—बहुत जोर की तकलीफ है, किसी तरह मे अपना मुँह टेढ़ा कर के आदमी कहता है।

—हाँ, दर्द तो है, लेकिन है कहाँ ?

यह आदमी अपना मुँह ऊपर उठा कर अपने एक दाँत की ओर उँगली दिखा कर किसी तरह कहता है—डॉट !

पूरे तबर्ग का उच्चारण करने के लिए दाँत के साथ जीभ का स्पर्श जरूरी होता है इसी लिए जीभ को तालू तक ले जा कर जल्दी से वह द की जगह ड तथा त की जगह ट निकाल कर काम निकालता है। डॉक्टर कहता है—इन्टिस्ट के पाम जाइए।—फिर कहता है—जरा अँगुली से दाँत हिलाइए तो, जरा देखूँ।

अँगुली से दाँत हिलाते-हिलाते भला आदमी हूँ-हूँ करने लगता है।

डॉक्टर कहते हैं—प्रफुल्ल, जरा दाँत उपारने वाली मशीन लाओ तो।

भला आदमी काँप उठता है—नहीं, नहीं।

—तब मेरे पास क्यों आये ?

—जरा-सी कोफिन।

—दे रहा हूँ। मुँह बाइए तो। हाँ, जरा और मुँह बाइए। हाँ, हाँ, हाथ हटाइए तो, बस हो गया, पानी ले कर कुल्हा कर सीजिए और दाँत बाहर फेंक दीजिए।...

—तुम्हारा क्या है भाई ? ऐं ?

—पेट में बहुत दर्द है माहब, पायाना हा रहा है, ज्वर भी है।

—हूँ। देखूँ ? कपड़ा उतारो !—पेट पर हाथ रख कर डॉक्टर देखता है, फिर पूछता है—पायाने के साथ पेट में दर्द होता है क्या ? जीब होता है क्या ?

—हाँ बाबू।

—छून गिरता है ?

—हाँ बाबू, छाजा छून गिरता है।

—कैसे बार पायाना हुआ ?

—दग-बारह दगा।

—हूँ !—डॉक्टर पुरखी लिखता है।—छूब माबधानी से रहना।

बीमारी खराब है। बैमिलरी डिमेन्टरी। कोई कड़ी चीज मत खाना—
छेने का पानी, बाली और दाभ का पानी यही खाना-पीना।”

—आप को क्या हुआ है ?

—वही तो परमों मैं अपनी लड़की को साया या, वही कमला, —
मने आदमी कहते हैं।

—कौन-सी लड़की, बताइए तो ?

—मेरी लड़की।

—हाँ ! कौन लड़की ? क्या उम्र है ? कौन-सी बीमारी है ?

—कमला नाम है लड़की का। पन्द्रह-सोन्ह मास की उम्र है, छाती
में दर्द है, और साथ ही ज्वर भी।

—ओ ! हुगली से जो आयी है ?

—हाँ।

—क्या खबर ? कैसी है ?

—कुछ नहीं कम हुआ। ज्वर थोड़ा ज्यादा हुआ या।

—हँ ! कहाँ है वह ? साथ साथ है ?

—नहीं, कहिए तो दोपहर के बाद साजें ?

—सादा। आप की लड़की को प्लुरिमी हुई है। अच्छी दवा की
जरूरत है। कैनेगियम देना होगा इन्जेक्शन के रूप में, तभी तो आगे
बीमारी खराब हो जायेगी।

—खराब हो जायेगी ?

—जी हाँ। टी. पी. हो सकती है।

—बारह बजे के बाद आइएगा, ठिकाना दे जाइए बच्चाखाने के
पाग।”

—मुझे क्या हुआ जो ? तू ? तुझे तो साथ रोग है। दबा था रोग
हो ? आ दुधर आ।

—निर शराब या रहा है ?

—जी नहीं।

इसी मूर्ख का एक दरीब आदमी है। हाँडर उस की बीबी को
उतार कर देखता है। बीमार को दबा कर देखता है।—दरुं होगा है ?

—जी हाँ, पहले से कम ।—दर्द से कराहता हुआ आदमी बोला ।

—हूँ । दवा लेता जा । लेकिन शराब पीने पर तू और नहीं बचेगा ।

डॉक्टर पुरजी लिखते-लिखते बैठ गया । ठीक उसी समय टैक्सी पर वह महिला आयी । डॉक्टर ने एक बार आँखें उठा कर देखा । बकेले उतरी वह । प्रश्नवाचक चिह्न के रूप में डॉक्टर के सलाह पर कुछ रेखाएँ उभरी । इस के बाद फिर उस ने अपना मन प्रेम्निप्शन सिधने में लगा दिया ।

यह स्त्री परिवर्तित की भाँति औरतों वाले पार्टिशन किये गये घर में जा कर बैठी । कम उम्र की सम्बन्ध-पतनी सड़की थी वह । रोगियों की खचलता बढ़ गयी । उस में से थोड़े प्रसन्न भी हुए । हरे केले के पत्ते के रंग की साड़ी देख कर उन की आँखों में प्रसन्नता आ गयी ।

डॉक्टर ने एक से पूछा—आप को क्या हुआ है ?

—पहले उस सड़की को देख लें, उस की टैक्सी बाहर पड़ी है ।

डॉक्टर ने कहा—वही ठीक होगा ।

धैर्य में धुरा कर डॉक्टर ने पूछा—आप को क्या हुआ है ?

सड़की हँसी । डॉक्टर आश्चर्यचकित हो उठा । सड़की की हँसी के कारण ही उस का चेहरा जाना-मुना लग रहा था । सड़की के मुँदर चेहरे पर ठीक एक ही स्थान पर दोनों मालों पर प्रायः एक ही आकार के तिल थे । बहुत जाना-पहचाना चेहरा था यह ।

—पहले और रोगियों को देख लीजिए । मुझे थोड़ा समय लगेगा । सड़की ने कहा ।

डॉक्टर सड़की की ओर ही ताकता पड़ा रहा ।

—मुझे पहचान रहे हैं ?—सड़की ने कहा ।

—ठीक याद नहीं पड़ रहा है । आप...

—मैं आप नहीं हूँ । मैं तुम हूँ । जाइए, पहले और रोगियों को देखिए ।

डॉक्टर और आश्चर्यचकित हो उठे । कौन ? कौन ? कौन ?

—जरा मेरा हाथ देखिए, डॉक्टर साहब !

—क्या हुआ है तुम्हें ?—हाथ पकड़ लिया डॉक्टर ने !—कौन है

यह? उँह, यह भी भला क्या होता है!...

सड़की ने हँस कर कहा—मुझे पहचाना?

—आप—नहीं तुम, तुम कौन हो?

—जब देख कर ही नहीं पहचान पा रहे हैं, तब नाम बताने से क्या याद होगा?

—याद आ रहा है एक आदमी। लेकिन यह भला कैसे हो सकता है! यह तो...

सड़की ने उठ कर डॉक्टर को प्रणाम किया—ममता गयी मैं आप ने ठीक पहचाना। मैं ही हूँ यह।

—निर्मला? तुम?

निर्मला की बात सुँह से छीन कर डॉक्टर ने हँस कर कहा—तुम कैसे बची?

यह जोर से ठटा कर हँस पड़ी, इस के बाद उस ने फिर कहा—मैं बच गयी हूँ। निओमोयोरोसस के द्वारा मैं बची हूँ। मादवपुर में थोड़ा महीने में बेड पर पड़ी हुई थी। बिछीने से मुझे उठने नहीं दिया। बचने के लिए भी कितना दर्द भोगना पड़ता है!—यह फिर हँस उठी।

डॉक्टर का चेहरा प्रसन्नता से घिस उठा—याह, बहुत प्रसन्नता हुई तुम्हें देख कर, क्या सुन्दर चेहरा हो गया है तुम्हारा! और कोई तिरापन तो नहीं है?

—आप देखिये न!

डॉक्टर ने चारों ओर आला सगा कर देखा—नहीं, कुछ नहीं। फिर भी जरा एक बार एकदम से सेना।

भीषण के भीतर से एक बड़े तिरापने को निजात कर दिया तारकी ने।

—सादी है, देखिये न।—अपने गिर पर का भीषण जरा घीन कर थोड़ा हँसने लगी यह।

थोड़ी देग्ने-देग्ने डॉक्टर बोले—तो मादवपुर में ही तुम्हें बेड निप गया था?

—हाँ, निप गया था—थो बेड नहीं, देखन बेड।

जनगणपर

—येहंग चेह !—डॉक्टर आश्चर्यचकित हो उठा—वह तो—

“वह तो बहुत खर्चीला होता है।—डॉक्टर के मुँह की बात छिन कर उस ने कहा और हँस पड़ी।—आप देखते नहीं हैं, टैंकसी से आधी हूँ ? मेरे कपड़े देख कर क्या कुछ अन्दाज़ नहीं लगता ? अब आप देख नहीं रहे हैं क्या कि मेरे दिन बदल गये हैं ?

डॉक्टर चकित हो कर बोला —हाँ-हाँ ! बहुत खुश हुआ जान कर ! लेकिन—डॉक्टर थोड़ा रुका । इस के बाद फिर जैसे कुछ हुआ समझ कर कहा—रमेन्द्र तो अभी उसी फैक्टरी में नौकरी कर रहा है । उसे देख कर तो नहीं लगता कि वह इतना खपा-पखा खर्च कर सकता है ।

—डॉक्टर साहब, लोग कहते हैं कि स्त्री का चरित्र और पुष्प का भाग्य देवता भी नहीं समझ सकते ! लेकिन मैं तो स्त्रियों के चरित्र में कुछ भी ऐसा नहीं पाती, हाँ, स्त्रियों का भाग्य ही बताना ज़रा कठिन है । पुष्प काम कर के उस का फल पाता है, हम लोग उसी भाग्यफल के रूप में पुष्पों के हाथ में पड़ती हैं । दर असल पुष्प का ही चरित्र समझना कठिन है।—सड़की ने कहा ।

डॉक्टर थोड़ी देर तक धुप रहा । इस के बाद उस ने कहा—बहुत प्रसन्नता हुई तुम्हें देख कर, अण्डा तो फिर आओ । मुझे आज बाहर जाना है कई जगह ।

सड़की ने कहा—बाह, आप तो मज्ददार आदमी हैं । मेरे रोग के घाटे में कुछ नहीं बताया, और कह रहे हैं कि तुम आओ !

—तुम्हें कौन सा रोग है ?

सड़की ने एक कागज़ डॉक्टर के हाथ में दिया । एक क्लीनिक की रक्त-परीक्षा की रिपोर्ट थी।—रोगिणी निर्मला देवी । घुन में उपद्रव का विष । परिमाण—आठ-दस (८-१०) ।

निर्मला ने कहा—तो मैं अब—। फिर वह थोड़ा रुकी । इस के बाद थोड़ा सा हँस कर उस ने कहा—मैं अब—। फिर थोड़ी रुकी और कहा—मैं अब बेव्या हूँ डॉक्टर साहब !

डॉक्टर के लिए जैसे यह कल्पनाशील था । उसे जैसे घबराह लगाने । निर्मला ने अपने बायें हाथ को पँसा कर अपनी आँखों के सामने किया

घोर दाहिने हाथ में अपनी कुहनी में ऊपर की ओर मुड़ौल गोरो बांह की नीली नमों के ऊपर हाथ फेरते हुए कहा—इन्जेक्शन लेते-लेते जर्म मारी नसें बैठ गयी हैं।

प्रायः डॉक्टर इन्जेक्शन बायें हाथ में देते हैं। यह किमी उदासीनता के कारण नहीं बल्कि यही डॉक्टरों का अभ्यास होता है। मांग यह समझते हैं कि वे शाम्यद दाहिने हाथ उदासीन हो। इन्जेक्शन भी ऐसे सुन्दर ढंग से कि प्रायः पत्तक गिरते न गिरने का मसाम्त। डॉक्टर ने मिस्त्रि की मुई निकाली, एक टुकड़ा रई में उसे पोछा। हँस कर बोले—बस, घोरो देर खैठी रहो।

डॉक्टर बाहर चले आये।

भीतर में निर्मला ने पुकारा—डॉक्टर साहब !

—क्या है ? कुछ तकसीफ हो रही है ?

—नहीं।

—तब ?

—आप की प्रीम ?—सड़की ने दो नोट निकाल कर रख दिया।

डॉक्टर ने एक नोट सौटाते हुए हँस कर कहा—इनमें में ही होगा।

अब तुम जा सकती हो। तुम्हारी टेम्बी खरी है।

—गुडो रहने दोजिए।—सड़की गुडो हो गयी—हाँ, एक बात है !

—बोनों ?

—जरा मा ट्रिफ कर मर्जुगी ?

—ट्रिफ ?—डॉक्टर अवाब् हो गये। निर्मला की ओर देख कर।

थोड़ी देर बाद अपने को संभाम कर बोले—नहीं।

—जिबिग मेरी आदम हो गयी है। हम के अमावा...उम ने हँस कर कहा—तुम्हारा खरिब बरूमयम होगा है। अगर मैं ट्रिफ नहीं करूँ तो 'वे' नाराज हो जाते हैं।

डॉक्टर थोड़ा चुप रहा और फिर कहा—नहीं, उसे बन्द रखना होगा।

एक तमसवार कर के निर्मला चली गयी।

डॉक्टर के कमरे में एक खाली क्षीम अनखान में निवृत्त गयी।

निर्मला ने निःसंकोच भाव से कहा—मैं...मैं...अब । शराब पीना अब मेरी आदत बन गयी है ।—दूसरे ही क्षण डॉक्टर त्रैसे सब मोह छोड़ कर अपना पंर पटक कर चल पड़ा । टी. बी. के एक रोगी को कॅनेशियम देना होगा । प्रभा को । मॅलिंग्नेट मलेरिया की रोगी है वह । फिर तीन टाय-फायड के केम हैं । सिगरेट मुलगा कर डॉक्टर अपनी गाड़ी पर चढ़ गया ।

आदमी विविध होता है । डॉक्टर इस की बात की सोच रहा था । शाम का वक़्त था । शाम की डॉक्टर के यहाँ रोगी आते हैं पर सदृश में बहुत कम, शायद दो-चार । डॉक्टर शाम की कोट और पैंट नहीं पहनता । घोंती और कुरता पहन कर ही कुरसी पर बैठा रहता है । दो-एक सिगरेट पीता है और कभी कभी होने पर हँसता भी । रोगियों की विदा कर के किताबें पढ़ता है कभी-कभी । मनोविज्ञान की ओर डॉक्टर की विशेष रुचि है । इस से चिकित्सा में उसे सहायता मिलती है । एक दोस्त की बीबी को बीच-बीच में दर्द होता है छाती में, डॉक्टर उसे केवल इन्जेक्शन के रूप में पानी का इन्जेक्शन देता है । थोड़ी देर बाद वह महिला चगी हो उठती है । कहीं भी कोई दर्द नहीं रहता है, डॉक्टर की धारणा है कि जो लोग लगा-तार रोग में परेशान रहते हैं, उन में से साठ प्रतिशत लोगों का रोग मन का रोग होता है । एक बहुत बड़े घर का लड़का अभी-अभी डॉक्टर के यहाँ से उठ कर गया है । लड़का रोज ही शाम की डॉक्टर के यहाँ आता है, गप्प मारता है और पला जाता है । गप्पाह में वह एक बार अपने माम की परीक्षा करवाता है, उस की धारणा है कि उसे हाट की बीमारी है । किसी भी क्षण कोई विपत्ति आ सकती है । इसी लिए उस ने अपनी गाड़ी तक नहीं ली है । बहुत कुछ समझाने पर भी डॉक्टर उसे विश्राम नहीं दिला गये । डॉक्टर के पास बैठ कर गप्प मारना उस का उद्देश्य नहीं है, बल्कि अपनी बात यह है कि डॉक्टर के पास बैठने पर उसे कुछ भरोसा मिलता है । उस के जाने के बाद ही डॉक्टर अपने हाथ की किताब गोल लेता है । किसी बूढ़ा जोरदार मेचक की किताब है । गमरमेट माम का वह बहुत बड़ा फल है । माम की ही किताब है यह, 'रेजर्में एज' । कई क्षणों के बाद डॉक्टर ने मुँह उठा कर राम्ने की ओर देखा । राम्ने में लगातार सोम आ-जा रहे थे । इसी तरह गंगा घाट जाने का रास्ता है । सोम इतिहास मछली हाथ में

ले कर चले आ रहे हैं, घाट से। पुष्प-लोभी लड़कियाँ बहुत रात को ही गंगा-स्नान से लौटी आ रही हैं। लगता है आज कोई त्योहार है। सज-धज कर कई लड़कियाँ गंगा घाट से हवा खा कर भी लौट रही हैं। दो-चार चतुर रूपाजोवा स्त्रियाँ लपलपाती चलती हुई लपट की तरह अपने पीछे पतंगों को भी लिये आ रही थी, सामने एक गली है उसी गली में वे आ रही हैं। गली में जाते समय एक विशेष भगिमा से पीछे मूड कर वे टाक रही हैं। जैसे एकाएक मुड़ कर ताक रही हों वे। इसी बीच उन के पीछे आने वाले भी उन्हें देख लेते हैं और वे भी उन्हें निर्भय आँखों ही आँखों बुला लेती हैं।

निर्मला की याद आयी उसे। उस की बात उस के कानों में गूँजने लगी—अब मैं...बेश्या हूँ डॉक्टर साहब !

वही लड़की। सच्चे आठ महीने तक डॉक्टर ने उस की दवा की थी, केवल एक दिन उस से बातचीत की थी डॉक्टर ने, केवल एक दिन। एक-एक केस डॉक्टर के मन में भरा पड़ा है। विविध किस्म का रोग है। विविध रोगी भी हैं। विविध-विविध रोगियों के घर भी हैं। लेकिन इस लड़की के घरे में...। कुछ भी विचित्र नहीं था इस लड़की में। बस केवल रोगी थी वह। उस निर्मला के भीतर बड़ी सहनशीलता थी। मन-ही-मन डॉक्टर उन की प्रशंसा भी करता।

तीन साल पहले की बात होगी। मुँद अभी शुरू ही हुआ था। सन् १९४१। डॉक्टर की याद आ रहा है—तीन साल पहले। प्रातःकाल एक कम उम्र का युवक आया था। अच्छा चेहरा-मोहरा था। पच्चीस-छब्बीस साल का रहा होगा। रोगियों की भीड़ जमा हुई थी। टेबुल के उस पार वह खड़ा हुआ था। उस ने कहा था कि डॉक्टर साहब, आप को एक बार मेरे घर जाना होगा। डॉक्टर ने उस के मुँह की ओर देखा। उस युवक के चेहरे पर उस की आँखों पर कुछ परेशानी नजर आ रही थी।

—अभी चलना होगा आप को। मोस्ट अरजेंट ?

—क्या केम है ? 'अरजेंट' कह रहे हैं ?

—एक लड़की दर्द से छटपटा रही है। लड़की 'प्रेगनेंट' है। फ्रंट प्रेगनेन्सी।

—प्रेगनेट ! दंद कहाँ हो रहा है ?

—पेट में ।

—मैं पूछ रहा हूँ—दंद कैसा है, माने डेलिवरी का ?

—नहीं, नहीं । डॉक्टर साहब ! अभी तो उस का समय भी नहीं हुआ, इस के अलावा दंद भी वैसा नहीं...

—अच्छा, तो जरा बैठिए । इन लोगों को जरा देख लूँ फिर चल रहा हूँ ।

—नहीं । बहुत सकलौफ है, एक बार आप को अभी चलना होगा । हाथ जोड़ कर उस ने कहा । उस की आँखों में आँसू आ गये ।

डॉक्टर नहीं 'नहीं' कर सके । उठ पड़े । उम ने ही डॉक्टर का बक्म अपने हाथ में ले लिया ।

दखियों का टोला था यह । डॉक्टर बेचारे हूँसे । वहाँ के रहने वाले सभी भलेमानुष और गृहस्थ थे । हाँ, लेकिन गरीबों का मुहस्ता । कच्चे घर, कच्ची मिट्टी की दीवार । गिज-गिज करते हुए नावदान, मक्खी और मच्छर तथा बदबूदार खातावरण । एक घर के मामने बरामदे में एक पूरा परिवार । मैला-कुर्बला हाफ़पैण्ट पहने हुए लड़कों का झुण्ड, कोई घाँस रहा है, कोई रो रहा है, कोई साईं खा रहा है । सँकरी लम्बी गली के मोड़ पर काँव-काँव करते हुए कीड़े आ रहे हैं । एक शौसीन आदमी एक रोंये-दार कुत्ते के साथ आ रहा है और वह कुत्ता कौनों को देख कर भौं-भौं कर रहा है । उमी कोने पर एक जगह को घेर कर औरतों के स्नान करने और बरतन मँजने की जगह बनायी गयी है । उसी के बीच कासरा, टाय-पायड जैसे रोग फैलते रहते हैं । ये भीमते हैं भीर मरने हैं । फिर भी इन के जीने की शक्ति कितनी प्रचण्ड है ! विज्ञान के अनुसार तो इन्हें मर जाना चाहिए पर तब भी ये अपनी जीवनी शक्ति के कारण बचे हुए हैं । उमी मुहत्ते के बीच कुछ लोगों के बरामदे और फर्श मिमेष्टेड भी हैं । मिमेष्ट के साथ साथ रंग मिला कर अपने मौक़ का भी परिचय दिया है कुछ लोगों ने । हस्के काठ का दरवाजा लेकिन फिर भी उम पर हरा रंग पोता हुआ । गिटबियाँ मोड़ी बड़ी-बड़ी प्रायः डेढ़ फुट लम्बी । कुछ गिटबियों में मोहे के डण्डे लगे हुए और कुछ में काठ के डण्डे और बिन्ही-बिन्ही में परदा

लगा हुआ है। उस दरवाजे पर एक परदा लटक रहा था। उसी के सामने दो जवान आदमी बैठे हुए थे।

भीतर एक चौकी पर लड़की सोयी हुई थी। सफेद रंग के पेटिकोट और ब्लाउज के ऊपर एक धोती पहनी थी उस ने। देखते ही पता लगता था कि लड़की विधवा है। उस का चेहरा धूँघट से ढका हुआ था, फिर भी उस ने जैसे धूँघट को थोड़ा और खींच दिया। इस के बाद चुप-चाप पड़ी रही बिस्तर पर। यह स्तब्धता, यह सहनशीलता डॉक्टर को बहुत अच्छी लग रही थी। सफेद बिछौने पर सोयी हुई सफेद वस्त्रों में लिपटी हुई वह लड़की दर्द के बीच भी डॉक्टर को रात्रि में उमड़ती हुई एक नदी की तरह लगी। डॉक्टर कई दिन प्रायः रात को ग्यारह-बारह बजे के बीच गंगा के किनारे घूमता रहता है। नदी का जो अपना सुन्दर सरगाकुल गतिशील रूप होता है, क्या दिन और रात के बीच उस रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता? लेकिन मनुष्य की आँखों में रात्रि की अस्पष्टता के बीच जैसे उस का रूप परिवर्तन होता है... तब नदी के उम रूप को देखा नहीं जा सकता... ऐसा लगता है जैसे नदी की प्रशान्त, शुद्ध, सुदीर्घ अलधारा मो रही हो। बीच-बीच में कोमल जललहरियाँ ऊँधर-ऊँधर उठती हैं। उम दिन उस लड़की के अग भी यन्त्रणा के कारण कहीं-कहीं सकुचित हो उठते थे। बीच-बीच में लड़की जैसे दर्द के मारे सिकुड़ जाती थी। फिर अपने को जैसे वह संयमित कर लेती थी।

—कैसा दर्द है आप को? कहीं दर्द हो रहा है आप को?

डॉक्टर ने देखा कि लड़की अपने ठण्डे शान्त हाथ द्वारा अपने निबर को ओर इशारा कर रही थी। डॉक्टर ने देखा कि लड़की को ज्वर है। डॉक्टर को लगा कि उस का हाज्रमा खराब है। डॉक्टर ने पूछा—पेट तो आप का माफ है? लड़की ने गरदन हिलायी। इस का मतलब यह हुआ कि लड़की ने गरदन हिला कर ही नकारात्मक उत्तर दिया।

डॉक्टर ने पूछा—कितने दिन से हाज्रमा गड़बड़ है?

वह भला आदमी अपना कान लड़की के चेहरे के पास ले गया। लड़की ने हाँठ थोड़ा हिले। भले आदमी ने कहा—तीन-चार दिन से।

डॉक्टर ने कहा—इस शान्त में जुलाब देने से तो नहीं चलेगा। इस

देना होगा। डूस देने से दर्द कम हो जायेगा। मैं एक दवा दिये जा रहा हूँ।

लडके ने चिन्तित हो कर कहा—डूस देना तो मैं जानता नहीं डॉक्टर साहब !

डॉक्टर ने हँस कर कहा—वह कोई कठिन बात नहीं है। आप डूस लेते आइए, मैं आपको समझा दूंगा, आप पढ़े-लिखे आदमी है, दिखाने और समझाने से समझ जायेंगे।

—नहीं डॉक्टर साहब, मैं ऐसे ही नर्वस हो जाता हूँ। मैं...।—आगे कुछ नहीं कह सका।

—तब मेरे कम्पाउण्डर को बुलाइयेगा, वह आ कर दे जायेगा। वह एकसपट है। एक रुपया लेगा।—डॉक्टर ने कहा।

घोड़ी देर चुप रहने के बाद उस आदमी ने कहा—लडकी है, कम्पाउण्डर तो आप का मर्द है न।

जो लोग बाहर दरवाजे पर बैठे हुए थे, उन्होंने कहा—तब एक नर्स बुला लीजिए न।

—हाँ-हाँ, भला नजदीक कीन भी नर्स मिलेगी डॉक्टर साहब ?

—आइए, मैं आपको एक चिट्ठी लिख देता हूँ। उस बड़े चौरस्ते पर नर्सों की एक सत्था है।—डॉक्टर ने कहा।

आज डॉक्टर उस बात की याद कर के मन ही मन पूछा। लेकिन उस दिन नहीं हँस पा रहा था। उस का मन प्रसन्नता से भर उठा था। रोगी के पास जाने पर डॉक्टर की आँखों में सब से पहले रोगी के परिवार का मनोभाव स्पष्ट तिर उठता है। कहीं दिग्याई पड़ता है कि रोगी के प्रति उस के घर वाले उदासीन, रोगी बस पड़ा हुआ है, सिरहाने उन के बहीं एक गिमाग जरा है, और कहीं-कहीं तो वह भी नहीं रहता। कहीं-कहीं ऐसी उदासीनता भी डॉक्टर ने देखी थी कि वह उस के मन में घर कर गयी है। ग्राम कर के नीकरो के क्षेत्र में ऐसी ही उदासीनता दिग्याई पड़ती है। विधवाओं के क्षेत्र में भी परिवार के लोग ऐसे ही उदासीन रहते हैं। कहीं-कहीं वह भी दिग्याई पड़ता है कि मारा परिवार रोगी के लिए ध्यातृ है। जैसे वे सभी आदमी रोगी का रोग अपनी आँखों में पोंछ देना चाहते हैं।

ऐसी स्थिति में चिकित्सक का मन स्वाभाविक रूप से प्रसन्न हो उठता है। भले ही इन्होंने विज्ञान की शिक्षा न पायी हो लेकिन उन्हें अपने अभावबोध का ज्ञान था। लडके के नर्स लाने के प्रस्ताव पर डॉक्टर बहुत प्रसन्न हुआ। डॉक्टर के साथ आते-आते लडके ने कहा—कुछ गडबड़ तो नहीं है डॉक्टर साहब ?

—नहीं, नहीं, नहीं। ठूम देने पर ठीक हो जायेगा।—डॉक्टर ने कहा। लडके ने भरे गले से कहा—मेरे अलावा उस का कोई नहीं है डॉक्टर साहब। विधवा लडकी है। यदि एक बच्चे के बाद वह बच जाये तो शायद उस का जीवन सुखी हो। एक लडकी हुई थी निर्मला को। डॉक्टर के चेहरे पर विचित्र हँसी दिखाई पड़ी।

—डॉक्टर साहब !

डॉक्टर की चिन्ता-धारा टूट गयी। हाथ में माम की पुस्तक धुसी ही हुई है। किताब रख कर थोड़ा हिला-डुला वह। एक प्रौढ़ा तरणी एक पूँघट वाली को ले कर आयी है। शायद इसी मुहल्ले की हो। अपने जीवन में डॉक्टर भी जितने रोगी देखे, उन के भी इसी टोले-मुहल्ले के लोग थे। प्रायः सत्तर-पचहत्तर प्रतिशत रोगी इसी मुहल्ले से आते थे। इस तरह एक बहुत बड़ा टोला है। लडकियों को जो लोग लाते थे वे प्रायः रात को ही आते थे।

—क्या है ?

—जरा इस को एक बार देखिए न ! बड़ी भोग रही है ! इस के चार बच्चे-बच्चे हैं। यह देख रहे हैं, एक तो इस की गोद में है और इस के ऊपर रोग है।

बेम्बर में जा कर डॉक्टर ने अपना आला उतार लिया। रक्तहीन, पीला एक तरण चेहरा, आँखों की पलकों पर एक उदासी—जैसे बादल-भरी हुई दोपहरी। डॉक्टर ने अपनी व्यवसाय सुलभ उदासीनता से देपना प्रारम्भ किया। जैसे जानने की कोई जरूरत नहीं थी। केवल देखने से ही पता लग रहा था कि टी. बी. का मज्र है। दरिद्रता के बीच रहती है वह।

इस के लिए तो कोई भी रोग निष्ठुर हो सकता है। फिर भी सभी रोगों के बीच टी. बी. सब से निष्ठुर रोग है। तिल-तिल कर के आदमी को भार डालता है। एक सम्बो गहरी साँस ली डॉक्टर ने। डॉक्टर चौंक उठा—ठीक निमंला की तरह इस का रोग ड्राइ प्लूरिसी से टी. बी. में बदला है। इस का एक फेफड़ा जैसे चलनी हो उठा हो।

निमंला की बात सोचते-सोचते डॉक्टर थोड़ी देर तक जैसे भावनाओं से पीड़ित हो उठा था। उस की आँखों में आँसू आ गये थे।

साथ की प्रौढ़ा स्त्री ने कहा—डॉक्टर साहब !

डॉक्टर के मन का आवेग समाप्त हो गया।

दरिद्र गृहस्थ के घर की बहू, चार बच्चों की माँ अगर बच सकती है तो निओमोयोरोक्स से ही। निमंला भी बची है। आज से दो साल पहले जब उस ने निमंला को आखिरी बार देखा था तब उस की अवस्था ठीक यही थी। यह भी लड़की बच सकती है उसी दवा से।

आज मुबह निमंला के चेहरे की याद आयी—जैसे जीवित सौन्दर्य झलमला रहा हो। एकसरे की फोटो उस की आँखों के सामने तैर गयी।

डॉक्टर गाय ही साथ सिहर उठा।

उम के कान में जैसे कोई बोल उठा—मैं... मैं अब... फिर जैसे उस के कानों में सुनाई पड़ा—ड्रिक... थोड़ा सा... वह मेरी आदत सी पड़ गयी है।

उम प्रौढ़ा स्त्री ने कहा—डॉक्टर साहब !

डॉक्टर बाहर चले आये, बोले—यह अगाध्य रोग है भार्द, टी. बी. है।

लड़की ने थोड़ी देर घुप रहने के बाद कहा—वह तो मैं ममझ गयी हूँ डॉक्टर साहब ! लेकिन कोई उपाय है ?

डॉक्टर ने कहा—अस्पनास में... बहुत-बहुत खर्च लगेगा। धीरे धीरे उपाय मैं नहीं जानता !

ठीक निमंला की ही तरह रोगी है। विचित्र गा बेग है। पहले दिन डॉक्टर नहीं पकड़ सका। लड़की अपने दर्द की जगह ठीक से नहीं बना

सकी थी। रात को वह लडका फिर आया, उस के चेहरे पर बहुत परेशानी थी।

—डॉक्टर साहब !

—बया है ? ओह, आप के ही तो घर में गया था न आज ? इस दिलवा दिया तो ?

—जो ही। लेकिन दर्द तो नहीं कम हुआ डॉक्टर साहब ?

—कम नहीं हुआ ? यह कैसे ?—डॉक्टर जरा चिन्तित हुआ।

—एक बार आप चलिए। दर्द अब ऊपर की ओर बढ़ रहा है।

मिट्टी का तेल तब दुष्प्राप्य नहीं हुआ था। अकाशक प्रकाश हो रहा था। दिन की रोशनी में आदमी का रूप पकड़ में आ जाता है, रात की रोशनी चाहे जितनी तेज हो वह जैसे रूप और सौन्दर्य के ऊपर एक उज्ज्वल सूक्ष्म परदा डाल देती है, और भी सुन्दर बना देती है उसे। रात की नदी के ऊपर जैसे एक बतसी चाँदनी और कुहासे की परत पड़ जाये, ठीक वैसे ही। वैसे ही स्वच्छ बस्त्रों के बीच स्तब्ध पड़ी हुई थी वह। तब उस ने बताया कि दर्द उस के कोंख के पास है। ऊपर भी हुआ है।

डॉक्टर ने गम्भीर भाव से परीक्षा की। और काफ़ी देर तक परीक्षा की। प्लूरिसी पकड़ में आ गयी।

—डॉक्टर बाबू ?

डॉक्टर ने कहा—प्लूरिसी हुई है। अच्छी दवा की जरूरत है। कैल्शियम और इजेक्शन देना होगा। अच्छा भोजन देना जरूरी है।

—जो कुछ भी जरूरी हो। आप कहिए। बताइए, क्या भोजन देना होगा ? आज से ही इजेक्शन देना शुरू कर दीजिए।

बड़े जोरो से दवा शुरू हुई।

डॉक्टर आया करने के। मिर्हाने के पास टेबल पर बत्त सजाये हुए थे। महेंगी पेटेंट दवाएँ। लडकी चुपचाप मोबी रहती। बस जरा सा मुँह ही दिखाई पड़ता। उस के गाल पर एक तिल काले फूम की तरह दिखाई पड़ता। बहुत दिनों तक डॉक्टर यही सोचता रहा कि उस के गाल पर एक ही तिल है। चुपचाप वह अपना हाथ बढ़ा देती। डॉक्टर रबर की नली

उस की बांह पर बांधता, इजेक्शन देता। तनिक भी हिलती-डुलती नहीं थी वह।

साम भी हुआ। ऊपर दिनकुन कम हो गया। थोड़ा कम हो गया। एक दिन युवक ने कहा—और कितने दिन लगेंगे, डॉक्टर साहब ?

—दवा अभी करनी होगी—कम से कम प्रसव तक।

सड़के ने एक गहरी साँस ली।

डॉक्टर ने कहा—यह एक खतरनाक बीमारी है, ग्राम कर के...

—देखने में तो लगता है कि ठीक हो गयी।—सड़के ने कहा।

—हाँ, लेकिन कैल्शियम—इजेक्शन अभी भी जरूरी है।

हम के बाद... हम के बाद शायद दो बार दिया था इजेक्शन डॉक्टर ने। इस के बाद नहीं बुलाया था उसे ! आखिरी दिन कहा था सड़के ने—प्रसव का समय तो समीप आ गया है डॉक्टर साहब ! प्रसव अस्पताल में ही ठीक होगा न ? क्या राय है आप की ? घर में कोई स्त्री नहीं है। मैं काम पर चला जाता हूँ।

—अस्पताल ही सब से ठीक होगा। मैं बल्कि आप को अस्पताल के लिए चिट्ठी लिख दूँगा।—डॉक्टर ने कहा।

सड़के की आँखों में कृतज्ञता झलक उठी। उस ने कहा—आज ही दे दें। थोड़ा पहले ही ले जाना अच्छा है।

—आइए, दे देता हूँ।

चिट्ठी ले जाने के बाद फिर कभी नहीं आया वह। इस के बाद डॉक्टर को कुछ भी पता न लगा। इजेक्शन देने के निश्चिन दिन डॉक्टर प्रतीक्षा कर रहा था। प्लूरिसी की आड़ में राज्यधमा का जो बबालावशिष्ट तीक्ष्ण नजर हाथ सड़की की ओर बढ़ा आ रहा था उसे डॉक्टर ने रोक दिया था। उन्होंने अपनी स्लैट आँखों से देखा था कि राज्यधमा का हाथ रक्त गया था। जैसे किसी द्रुत मुड़ में उन्हें विजय मिली हो। वे जान पड़ती नहीं, जिग के लिए यह मुड़ होता है वह आदमी ऐसे समय में बहुत ही प्रिय लगता है। सभी डॉक्टरों को समझे लगता है। जो रोगी को बचाना है उसे ही वह रोगी अपना अभिन्न लगता है। डॉक्टर को वह सड़की और अच्छी लगती थी। सड़के बस्त्रों में लिपटी वह सहनशील सड़की जैसे चांदनी रात

में स्तब्ध नदी की तरह लगती थी। क्रूर क्षय रोग से डॉक्टर ने उस की रक्षा की थी। जैसे क्षय रोग की अँजुरी शिथिल हो गयी हो और वह गिर कर मिट्टी में लुप्त हो गया है।

थोड़े ही दिन के बाद उस की बात याद आयी। एक बार उन्होंने सोचा कि उस की खोज-खबर लेंगे। अभिशप्त पराश्रित देश के रोग जर्जरित मनुष्यों के बीच उन्हें अवकाश नहीं मिला पाया। बहुत ही कर्म-व्यस्त है उन का जीवन। डॉक्टर को जो बात याद आयी है उस से वे सज्जित हो उठें। जिस दिन उन्होंने निश्चय किया था कि उन्हें खोज करेंगे, उमी दिन इन्श्योरेंस कम्पनी का एजेंट चार केस ले कर आया था। रुपयो की सालच ठीक नहीं है लेकिन रुपयो की जरूरत तो पड़ती ही है। इन्श्योरेंस कम्पनी का डॉक्टर है वह। फिर उस की खोज नहीं ले सके। धीरे-धीरे वे उसे भूल ही गये। सभी का मुख-दुख देय कर ऐसा लगता है कि इस में अधिक दुःख किसी को नहीं होता। डॉक्टर एक प्रकार से अपने को आपत्तिहीन आवरण में ढके रहता है, अपने हृदय का प्रकाश वह नहीं करता।

दो महीने बाद हठात् एक तरुण आया। ठीक पहले दिन की तरह टेबिल पकड़ कर खड़ा हुआ। ऐसा लगा जैसे वह बहुत ही परेशान है। डॉक्टर उसे देख कर ही पहचान गया। साथ ही साथ मन के नेत्र-मटल पर स्वच्छ शुभ्र बिछौने पर नेटी हुई धान्त स्तब्ध उस लड़की की याद आयी। डॉक्टर ने पूछा—क्या खबर है भाई?

—एक बार चलना होगा डॉक्टर साहब!

—क्यों? लड़की कैसे है?

—अच्छी नहीं है। बीस दिन हुए डेलिवरी हुई है। अब फिर वही शिकायत है, अब ज्वर और भी ज्यादा है, दर्द भी है।

डॉक्टर ने एक लम्बी साँस ली, कारण, कार्य और परिणाम तीनों ही समझ लिया डॉक्टर ने। डॉक्टर ने कहा—बीस दिन हुआ है तो आप ने डेलिवरी के पहले हठात् चिकित्सा क्यों बन्द कर दी? सर नीचे कर के लड़का टेबिल के कोने की अपने नाखतों में घरोबने लगा। थोड़ी देर बाद कहा—घरी हो गयी थी। दो-तीन इन्जेक्शन के बाद मैं ने देखा वह ठीक

हो गयी है। मैंने सोचा शायद बिल्कुल ठीक हो गयी है***। उस का वाक्य बीच में ही कहीं अटक गया और वह चुप हो गया। अपराध स्वीकार करने की विशेष भगी है यह।

डॉक्टर ने कहा—आप ने बड़ा बुरा किया। मैंने तो कहा था कि आप दवा करेंगे। थोड़ी देर बाद फिर डॉक्टर ने कहा—आप का आग्रह देख कर मैंने समझा था कि सब ठीक हो जायेगा।

सड़के ने इस बार ऊपर मुँह उठाया।

डॉक्टर ने कहा—चलिए !

डॉक्टर ने देखा—वही सड़की थी और उसी तरह सोयी हुई थी। उस की गोद के पास एक सड़की थी। जैसे ककास मात्र हो वह सिंगु, मरणोन्मुख पीछे के फूल की तरह ! डॉक्टर ने इस बार देखा मारा वातावरण ही जैसे बदल गया। चारों ओर गन्दगी है। बिछोना भला है। सड़के के कपड़े पटे हैं। और घर में भी एक कैंसी तीव्र गन्ध है।

सड़की को ज्वर काफी था। हृदय भी उस का भीतर से काफी जीर्ण हो चुका था।

डॉक्टर ने एक लम्बी साँस ली। एक इन्जेक्शन दिया। इस के बाद कहा—चलिए। एक दवा आप को दूँगा, जिसे खिलार्येंगे। घर से निकलते समय डॉक्टर ने फिर एक बार देखा। मारा माहौल बदल गया था। सड़की भी जैसे बदल गयी थी। जैसे और भी शान्त हो गयी हो। रात्रिकालीन नदी के बीच जो दो-एक सड़कें दिखाई पड़ती थी वेमे ही एकाघ बार सड़की के देह में सहरियाँ उठा करती थी पहने लेकिन वह अब नहीं दिखाई पड़ती। जैसे वह भी समाप्त हो गया।

सड़के का नाम डॉक्टर उसी दिन जान सका। सड़के का नाम था—रमेन। जाति का कामस्य। सड़के ने हठात् रास्ते में डॉक्टर को कहा—डॉक्टर साहब, मैं बड़ी विपत्ति में पड़ गया।

—हाँ, विपत्ति तो है ही।

थोड़ी देर चुप रहने के बाद सड़के ने फिर कहा—दरअमल यह सड़की मेरी कोई नहीं है, डॉक्टर साहब !

डॉक्टर थोका उठे—कोई नहीं ?

—नहीं ।

इस टोले की पगडण्डी । उसी पगडण्डी पर चलते-चलते उस ने कहा—और डॉक्टर मुनता रहा । जरा सी भूल के कारण यह विपत्ति मेरे ऊपर आ गयी । दरअसल वह मेरी कोई नहीं है ।

सड़की की उम्र पन्द्रह-सोलह साल की होगी, वह विधवा होनी थी । सड़के के पिता उस विधवा को अपनी रुग्णा पत्नी की सहायता करने के लिए लाये थे । सड़के के पिता मध्यवर्गीय परिवार के थे । नौकरी-पेशे के आदमी । सड़का नौकरी करता था एक फैक्टरी में । नाम था रमेन । उस ने विवाह नहीं किया । घर में रोगिणी माँ को छोड़ और कोई नहीं थी । वह सड़की ही थी सब कुछ, और वह सड़की थी बहुत अच्छी । शान्त स्वभाव, बात करने वाली । बहुत अच्छी लगती थी वह रमेन को ।

इसके बाद—

रमेन चुप हो गया । डॉक्टर ने कोई प्रश्न नहीं किया ।

राम्ते में कोई नहीं था केवल दो ही आदमी थे । दो-एक आदमी जो जा भी रहे थे, वे गले पैर थे । डॉक्टर और रमेन के पैरों में जूते थे, उन के जूतों की आवाज बार-बार आ रही थी ।

थोड़ी देर बाद रमेन ने कहा—इस के बाद जो होना था वही हुआ । सड़की गर्भवती हो गयी । कोई दूसरा उपाय न देख कर उसे छिपा कर यहाँ रखा । मैं घर जाया करता था । अभी भी मैं घर पर ही हूँ । घर वाले यह जानते हैं कि वह कहीं खनी गयी । मैं रोज़ शाम को यहाँ आता था । इस-ग्यारह बजे घर चला जाता था । मेरी इच्छा थी कि जब मेरे ही कारण उस की यह अवस्था हुई है तो मैं आजीवन उस का पालन-पोषण करूँगा । मरता न होने पर उन का भी पालन-पोषण करूँगा । चाहे भले ही विवाह न करें ।

फिर वह चुप हो गया । वस केवल जूतों की आवाज आ रही थी ।

थोड़ी देर बाद रमेन ने फिर कहा—लेकिन मैं इतना नहीं समझ सका था ।—एक गहरी साँस ले कर उस ने कहा—ओवर-टाइम करने पर भी मैं काम नहीं चला पा रहा हूँ ।

डॉक्टर का दयाधाना आ गया था । उजाले में डॉक्टर ने देखा कि

रमेन के दोनों जबड़े ऊँचे हो गये थे। जैसे किसी आधार पर चढ़ाया हुआ कच्चा पीछा मुरसा जाये वैसे ही अवस्था रमेन की हो गयी।

इस के बाद जो होता है, वही हुआ।

रमेन की यकान जैसे बढ़ती ही चली गयी। डॉक्टर ने कहा—प्रोम नहीं लगेगी आप की। दो-एक मोल्ड इन्जेक्शन लगा कर देखता हूँ। कई बार इन से फायदा होता है।

लेकिन कुछ भी नहीं हुआ। रोग जैसे और बढ़ने लगा। लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि सड़की की सहनशीलता में कोई भी अन्तर नहीं आया। रमेन जैसे क्रमशः निराश होता गया। डॉक्टर की भी पीडा हुई। एक दिन आ कर उम ने कहा—डॉक्टर साहब, एक सर्टिफिकेट देना होगा!

डॉक्टर चौंक उठे।

रमेन ने कहा—सड़की तो मरेगी ही। हो सकता है आज ही रात को मर जाये। उस रात को भला मैं आप को कहीं पाऊँगा?

सड़की से मतलब निमंता नहीं बल्कि वह नवजात कन्या। क्रमशः वह बच्ची मूयती ही जा रही थी। इस के ऊपर उम ज्वर भी हो रहा था। वह नहीं बचेगी, ऐसा डॉक्टर ने कहा है। फिर भी डॉक्टर चौंक उठे। कुछ जैसे शकित हो गया डॉक्टर। रमेन की आँखों में जैसे एक मुमूर्षु मनुष्य की दृष्टि दीख पड़ी। उन्होंने हड़भाव से कहा—नहीं।

सड़की दो दिन बाद मर गयी। उस दिन नहीं मरी।

इस के बाद एक दिन आया रमेन। उसे छुद ही रोग हुआ है। यौन-रोग। स्वयं ही इन्जेक्शन ले कर चला गया—जाते-जाते कहा—मैं तो अपने काम पर चला जाऊँगा डाक्टर साहब! आप दया कर के एक बार उसे आ कर देख आते। दो दिन से जैसे रोग और बढ़ गया है। छटपटा रही है वह।

डॉक्टर गये।

सड़की ने आज धातें की। लेकिन त्रिम दिन बच्ची मरी थी उस दिन भी डॉक्टर गये थे। सड़की वैसे ही मोयी हुई थी। शान्त, गन्ध। उरलनी हुई गन्दी नदी की तरह उम की दशा हो गयी थी। उस का मर्वाग ममीन

था। जोर्ण-शोर्ण स्रोत जैसे सूखा जा रहा था।

हठात् सड़की उठ पड़ी। डॉक्टर शक्ति हो उठा—मत उठो! सड़की ने नहीं मुना। डॉक्टर के दोनो पैर पकड़ कर उस ने रो कर कहा—
डॉक्टर साहब, मुझे क्या बचाने की चेष्टा कर रहे हैं? मेरे बचने से क्या लाभ होगा? मेरा लाभ होगा या ससार का कोई लाभ होगा? आप क्या समझ पा रहे हैं कि वह आदमी कितना कष्ट भोग रहा है? इस से तो अच्छा यह है कि मुझे कोई ऐसा इन्जेक्शन दीजिए कि मैं दो-एक दिन में धीरे-धीरे मर जाऊँ।

डॉक्टर चिन्तित हो उठा। फिर भी समय उस ने कहा—यह बात तुम ने मुझ से गलत कही। मैं डॉक्टर हूँ। रोगी को बचाना मेरा धर्म है। मैं मार नहीं सकता। नहीं-नहीं-नहीं।

सड़की ने पैर नहीं छोड़ा तब भी।

डॉक्टर ने बहुत कष्ट से अपने को किसी तरह छुड़ाया। सड़की ने कहा—देखिए न, उस आदमी को क्या हो गया? वह बहुत अच्छा सड़का था, डॉक्टर साहब। मैं ही उस के लिए कास बन गयी। थोड़ा ठहर कर एक विचित्र तरह से हँसी वह। फिर उस ने कहा—मेरे लिए विवाह नहीं किया उस ने। और मेरी यह हातत है। बहुत बुरी बीमारी ने पकड़ा।...

डॉक्टर बाहर चने गये। उस बार उस ने निर्मला को देखा। मुँह से न कह भी मन ही मन डॉक्टर ने कहा था और ज्यादा दुख तुम्हें नहीं भोगना पड़ेगा। बहुत अधिक होगा तो दो-तीन महीने। हो सकता है उस से भी कम दिनों में तुम मर जाओ।

इस के बाद कोई नहीं आया। किसी ने कोई खबर भी नहीं दी। रमेन भी नहीं आया। डॉक्टर समझता था कि नदी सूख गयी है।

और वही सड़की फिर हठात् स्रोत आयी। आ कर उस ने कहा—
मैं...! डॉक्टर जैसे काँप उठा।

कई दिनों के बाद। इन्जेक्शन लेने के निश्चित दिन निर्मला नहीं आयी। डॉक्टर उस की प्रतीक्षा कर रहा था। नहीं आने पर नाराज हो हो गया। रात को किताब घोल कर, उसी सड़की के बारे में सोच रहा था

यह। दरवाजे के पाम आ कर कार रुकी। डॉक्टर ने टेबिल के ऊपर झुक कर देखा, निर्मला गाड़ी ने नीचे उतर रही है। आज यह गाड़ी जैसे घर की गाड़ी रही हो। टैक्मी नहीं थी।

कुशल हाथों-द्वारा मजा-धजा रूप, लावण्य के माथ जैसे और सलमला उठा है। आ कर यह उज्ज्वल प्रकाश के सामने खड़ी हो गयी। उम ने कहा—सुबह मैं नहीं आ सकी। वे आज शिलाग गये—मुझे जबर्दस्ती... तुम्हे भी जाना होगा।... डेड बजे तक। इस के बाद छुट्टी।

डॉक्टर ने कहा—लेकिन रात को क्यों आयी? खासी पेट के थलाया तो मैं इन्जेक्शन देता नहीं।

यह बंट गयी—उगी कमरे की एक कुर्सी पर।

—कल सुबह आओ। बिना कुछ खाये जाना। इस के बाद हँस कर डॉक्टर ने कहा—तुम तो सारी बानें जानती हो। उस दिन तुम्ही ने कहा था।

निर्मला ने कहा—उन से मैं ने सुना था। इस रोग मे तो यह इन्जेक्शन पहली बार है मेरा।

डॉक्टर हठात् एक शस्त सवाल कर बैठा। सवाल करने पर डॉक्टर के मन में भी लगा कि यह चलती कर रहा है। बोला—तुम तो इन्जेक्शन ले रही हो, लेकिन वे इन्जेक्शन ले रहे हैं तो? साथ ही साथ जैसे अपनी चलती पर पश्चात्ताप करता हुआ डॉक्टर बोल उठा—मेरा यह सवाल ठीक नहीं था। कुछ गुरा मत मानना।

निर्मला हँसी। बोली—मेरे साथ आप ने चलती नहीं की।

डॉक्टर थप रहा। सड़की की कृतज्ञता बोधक भावना ने जैसे उसे तृप्ति दी।

निर्मला ही थोड़ी देर बाद हँस कर बोली—उन्हें कई बार यह रोग हुआ। फिर भी इस बार वे अच्छे हो है!

इस बार डॉक्टर को ही जैसे कुछ लगा। बात-चीत का स्वर कियर जा रहा है? संजिन निर्मला इतनी नितंग्र कैसे हो गयी? यह क्या कह रही है, क्या समझ नहीं पाती है वह?

निर्मला बोली—बन्टूक्टर हैं वे, यह सड़ाई का समय है, देश-देश

धूमते रहते हैं। बीच-बीच में मुझे भी अपने लगेज में शामिल कर लेते हैं। आसाम गये थे। वहाँ... अपनी बात आधी ही कर के वह बोली—डॉक्टर साहब! आदमी पढ़ा-लिखा है, बहुत कुछ सिखाया है मुझे। बहुत कुछ जानता है वह। लेकिन बहुत बड़ा शराबी है वह। उम्र दिन मुझे उस ने शराब पीना सिखा दिया। यदि मैं न पिऊँ तो वह क्रोध करता है। शराब पीने पर उसे ज्ञान नहीं रहता। वहाँ... थोड़ा हँस कर उस ने कहा—वहाँ शराब पी कर अपने साथ में कर आये दो विदेशी। आ कर उन गवों ने शराब पी, मुझे भी पिलाया, इस के बाद शराब के नशे की उधारता के कारण मुझे उपहारस्वरूप उन ने रात भर के लिए उन दोनों को सोप दिया। थोड़े दिनों बाद यह रोग दिखाई पड़ा। मैं कहती हूँ—इसे सुन कर क्या तुम हँस रहे हो?

डॉक्टर ने कहा—नहीं, कोई बात नहीं! तुम इन्जेक्शन लेकर जाओ। डॉक्टर के ललाट पर कुछ रेखाएँ उभरी। थोड़ी देर बाद वह फिर अपने आप में सौट आया, सहज हो उठा वह। कहा उठाने—वाह, क्या आश्चर्यजनक है!

—आश्चर्यजनक। पहले दिन भी ऐसा ही लगा था...—निर्मला सिंह उठी। बोली—उस दिन रात को जब मैं आप का पैर पकड़ कर रोयी उसी दिन मैं धीरे-धीरे घर से बाहर निकल गयी। रमेश भी उस दिन नहीं आया। घर से यह सोच कर निकली थी कि मर जाऊँगी। पर जानती कहाँ? बहुत सोच-समझ कर दही ठोक किया था कि और रात होने पर गंगा में कूद पड़ूँगी। मर भी जाऊँगी और गंगा-लाम भी होगा। बहुत पाप किया है, मरते समय जो भी काट्ट हो लेकिन टण्डे पानी में शरीर की गरमी भी शांत होगी।—निर्मला इस के बाद थक गयी। उस की आँखों की दृष्टि में जो शुष्कता थी, ऐसा लग रहा था कि वह जैसे स्वप्न देख रही हो।

—उह, वह कौसी भयानक रात थी और गंगा के तीर की वह जगह जैसे मन-मन कर रही थी।

—कौसी भी नहीं थी। कभी बीच-बीच में गंगा का जल केवल कल कल करते हुए बहकर मार रहा था। मरने के लिए आ कर भी मेरे

मन में भय हुआ और वह भी कैसा विचित्र भय ! मेरा सारा शरीर काँप रहा था। वहीं मैं बैठ गयी, थोड़ी देर बाद मन में आया जैसे मेरी शायद देह मुझ ही गयी है और शायद मैं गंगा में कहीं गिर न पड़ूँ। इस के बाद मेरी इच्छा हुई कि मैं वापस लौट चलूँ। उठ कर छड़ी भी नहीं हो सकती थी। पटनों के बल सरक कर चलने की चेष्टा की मैं ने। पोंट रेलवे लाइन की पटरियों का आधार पा कर मैं उलट गयी। कई क्षण मैं बैसी ही पड़ी रही फिर मुझे याद आया कि रेलगाड़ी यदि अभी आ जाये तो मेरे टुकड़े-टुकड़े हो जायें, मेरा सारा शरीर काँप उठा। सारी चेष्टा से मैं ने किसी तरह रेल लाइन पार की और चितपुर के रास्ते में आ गयी। थोड़ी सी दूर कर मैं पोंट रेलवे लाइन की सीमा के बीच जो रेलिंग दी हुई है उग को पकड़ कर उठ पड़ी हुई। मैं ने सोचा कि अगर मरना ही है तो क्यों नहीं मैं तिल-तिल कर के मरूँ ? ऐसे नहीं मरूँगी। इस के बाद याद आया कि पर लौट चलूँ। रास्ते के बड़े-बड़े पर, इतने निर्जन गम्भीर रात में कितने गम्भीर लग रहे थे। मैं वहीं पर रेलिंग के सहारे बैठ गयी। आँखों से आँसू बहने लगा मेरे अज्ञान में ही।

एक कार चली गयी। थोड़ी देर बाद ही फिर वह कार रुक गयी। पीछे कार लौट कर आयी और मेरे पास आ कर रुकी। कार से एक व्यक्ति फुलपैण्ट और हागमार्ट पहने हुए निकला। टॉर्च का प्रकाश मेरे मुँह पर पड़ा। मेरी आँखें अपने आप बन्द हो गयी। गन्ध की गन्ध जैसे मिली साथ ही साथ मेरे कानों में एक आवाज आयी—हूँ, अच्छी है ! —और साथ ही साथ हाथ पकड़ कर उरा सा तबन्ध कर उग ने कहा कौन है रे ॥ ?—फिर उग ने कहा—बया बात है रे ! दोनों गालों पर दो निम, बही गुटना तो गहरे है ! और मैं ने अनुभव किया था कि मेरे गालों पर उँगलियों से धिग कर वह देख रहा था। उमी मुमुक्षु अवस्था में मैं ने अनुभव किया कि मेरे गालों पर वह उँगनी फिरा कर जैसे सम्पुष्ट हो गया हो। उग ने कहा था—नहीं, ये स्वाभाविक है !—कौन है रो मुम ? दन्ती रात को यहाँ—यहाँ रहती हो ?

बहुत तबसीऊ मे मैं ने कहा था—मैं मरूँगी—

वह आदमी हँग उठा। उम को बात पूरी की नहीं हो ली थी दिख

के बाद वह उसे खींच कर ले चला।—आओ !

जो कुछ भी शक्ति बाकी थी उसी शक्ति से मैंने बाधा दी था उसे । उस आदमी ने डाँट कर कहा—आओ । डाँट-धमका कर उसने अपनी बार मे मुझे ठेल दिया । कार मोड़ कर वह चस पड़ा । रास्ते के नाले को पार करने हुए गाड़ी सनसनाती हुई आगे बढ़ गयी । इस के बाद मुझे एक उद्यान के बंगले में लाया था वह । काफ़ी सजा हुआ घर था, एक सोफ़े के ऊपर मुझे ढकेल दिया । कमरे के भीतर की सारी बत्तियाँ जला दी उस ने । निर्मला ने जो धूँधट खींच ली थी उसे उस ने उछार दिया । थोड़ी देर तक देखा घर की आलमारी में जो शराब थी उसे निकाल सारी पी गया । निर्मला से पूछा था उस ने—पियेगी ?

निर्मला रो उठी थी । वह हँसा । इस के बाद—दिन के छुले प्रकाश की तरह जो रोज़ानी कमरे में थी उसी में हो—

निर्मला सिहर उठी । इस के बाद उस ने फिर डॉक्टर से कहा—शराब पीने के बाद वह पशु के अलावा कुछ नहीं रह जाता—पशु !

डॉक्टर स्तम्भित हो गया ? निर्मला ने कहा—वह उस के बगीचे का बँगला था । उस के पास बहुत रुपया है । उस दिन मुझे दस रुपये का एक नोट दे कर घर से बाहर निकाल दिया था । उस समय मेरी अवस्था बिलकुल ही अतहाय थी । मैं क्या करती ? कैसे लौटती ? और कौन सा चेहरा ले कर लौटती ? देह में बहुत सी ब्यथा हो रही थी । दर्द मैं सहन कर सकती थी लेकिन चलने की शक्ति तो रहनी चाहिए । बगीचे के माली को ही मैं ने दस रुपये दे दिये और कहा कि दो रुपये ले कर बाक़ी रुपये से तुम मेरे लिए थोड़ा चावल-दाल चाने को ला दो । मुझे शरण भी देनी होगी । बड़ी दया होगी तुम्हारी, मुझे ज़रूर है । ठीक होते ही मैं चली जाऊँगी ।

आ नहीं सकी मैं । उस रात को वह फिर आया ! मैं सोयी हुई थी माली के घर में, बरामदे में । हठात् टाँचे का प्रकाश पड़ा । वह आ कर खड़ा हो गया । शराब की गन्ध का अनुभव हुआ मुझे । इस के बाद— निर्मला हँसने लगी । फिर उस ने कहा—शराब पीने पर वह जानबर हो जाता है । मैं ने सुना है कि चीना अपने जिकार को धीरे-धीरे खाता है ।

पचा कर खाता है ।

घोड़ी देर रुकने के बाद उस ने कहा—लेकिन उम दिन वह मुझे भगाया नहीं । मुबह बैठ कर सारी बातें सुनी उम ने । इम के बाद एक डॉक्टर को बुलाया । मैं ने आप की बात कही । उम ने अपने होंठ तिकोड़ लिये । इम के बाद उस ने एक बहुत बड़े डॉक्टर को बुलाया जो टी. बी. स्पेसलिस्ट था । डॉक्टर ने कहा—अस्पताल में ले जा कर निआमो-पोरास करवा कर देख सकते हैं । ठीक हो सकती है । अभी एक सप्ताह ठीक है । चौदह महीने रही मैं अस्पताल में और बिना इन्तजाम था डॉक्टर साहब ! इम के बाद मेरे लिए उम ने एक मुन्दर सा पर्पेट भाड़े पर खरीद लिया । अभी भी बगीचे का कमरा है वह । वहाँ पर हो-हुल्ला करते हुए यह फमी-कमार जाता है और शराब पी कर हुल्लड मचाता है । मुझे अच्छा नहीं लगता । तब दरिद्र घरों की गन्दी सड़कियों को घोजता है ।

डॉक्टर गिहर उठा । बोला—बया कहनी हो ?

निर्मला ने हँस कर कहा—जरा मेरे सर की ओर देखिए । गर में तेल लगाने का भी हुकम नहीं है । तेल सगे हुए बाल उसे पसन्द नहीं हैं । जानते हैं क्या कहता है, वह उसे ? कहता है—अच्छा लगना और नशा होना दोनों चीजें असंग-अलग हैं । आज वह बाहर गया है, कल बालों में तेल लगाऊँगी । शराब पीने पर तेल लगाये हुए बालों को देख कर वह खकेल देता है पैरो से मुझे ।

डॉक्टर हँसा । यह हँसी कीमी थी, और वह बयों हँसा, स्वयं भी नहीं समझ सका ।

निर्मला ने कहा—आप को क्या आ रही है मुझ पर ?

—गुम्हारे प्रति थोड़ा स्नेह था । बरगा हो भी सकती है ।

—नहीं, डॉक्टर साहब ! उम का एक और पक्ष है । उम ने मुझे पढ़ने-लिखने में सहायता की । एक शिक्षक रथ दिन है मुझे, माने-बमाने की व्यवस्था कर दी है । और जब गुन रत्ना है तब मेरे मामों के दोनो बेटों को ले कर मज्जाद में रहता है—एक दिन के लिए कारमी

कवि ने बुखारा और समरकन्द बेच देना चाहता था ! मुझे तो दो तिल मिले हैं ।

डॉक्टर बोला—इस बार मैं प्रसन्न हुआ । तो तुमने उसे प्यार किया है ?

निर्मला चुप रही ।

—क्यों, उत्तर नहीं दे रही हो !

निर्मला ने कहा—अच्छा लगना और प्यार करना दो अलग-अलग चीजें हैं डॉक्टर साहब ! लेकिन मुझे अच्छा लगता है वह ! फिर थोड़ी देर चुप रह कर उस ने कहा—मैं ठीक नहीं कह सकती । फिर थोड़ी देर चुप रह ने के बाद उस ने कहा—कभी-कभी मन तोता भी हो जाता है । सब कुछ फीका लगने लगता है । फिर कभी-कभी लगता है कि बड़े मजे में हूँ । इस से अच्छे भला कितने लोग हैं । बहुत सी पत्नियों के पति तो शराम पीते हैं । चरित्रहीन भी होते हैं ।

मनोविज्ञान के झोक वाला डॉक्टर उत्सुक और चंचल हो उठा । उसे भी जैसे नशा हो गया । टेबुल के ऊपर झुक कर उस ने कहा—एक बात पूछू ?

—कहिए ! निर्मला ने हँस कर ही कहा ।

—रमेन की...क्या रमेन की बात तुम्हें याद नहीं आती ? उसे...

निर्मला ने डॉक्टर के मुँह की बात छीन कर ही कहा—उसे मैं ने प्यार नहीं किया, यही न पूछ रहे हैं ?—उस के होठों पर मुसकराहट फैल गयी । फिर बोली—यदि मैं 'हाँ' कहूँ तो शायद आप प्रसन्न होंगे ?

डॉक्टर ने हँस कर कहा—क्यों !

निर्मला ने जो जवाब दिया उसे सुन कर डॉक्टर को काठ मार गया । खिलखिलाती हुई हँस कर उस ने कहा—स्त्रियों की एकनिष्ठता से पुरुषों को सन्तोष मिलता है डॉक्टर साहब ! मुझे लगता है कि मुझे अगर तुम प्यार करोगे तो शायद ऐसे ही एकनिष्ठ हो कर करोगे ।

डॉक्टर ने उस के मुँह की ओर देख कर कहा—यह बात तुम्हें किस ने सिखायी ?

—इसी आदमी ने ।

काफ़ी देर तक वे दोनों चुप रहे। लड़की ने हठात् कहा—रमेन के ऊपर मेरा कोई भी आकर्षण सचमुच नहीं है।—थोड़ी देर रुक कर फिर कहा—उम के ऊपर कोई घृणा भी नहीं है। बल्कि... उस ने मेरे लिए बहुत कुछ किया है और सहा भी है। शायद रमेन के पाग रुपया रहा होता तो अस्पताल में ले जा कर उस ने ऐसी ही चिकित्सा भी करायी होती।

निर्मला अचानक ही उठ कर खसी गयी।

डॉक्टर चुपचाप बँठ रहा। थोड़े समय बाद डॉक्टर के मन में आया कि मनुष्य का जीवन ही जैसे सरल पदार्थ है।

कई दिन बाद फिर निर्मला आयी। इन्जेक्शन भी लिया उस ने। फिर नहीं आयी। डॉक्टर ने समझा था कि निर्मला इस के बाद अपने रोग के लिए उसे ही धुलायेगी। उस आदमी को देखने की एक प्रबल इच्छा थी उस के मन में, लेकिन इस के बाद कोई खबर नहीं मिली।

डॉक्टर अपने पेजे में रमा रहा। टायफाइड, कालरा, टी. बी., इन्फ्लुएन्जा... इस के अलावा और भी विचित्र-विचित्र रोग ! रोगियों के बाद रोगी आते। कितने याद रहने और कितने भूल भी जाते ! जो कुछ याद भी रहते वे थोड़े दिन बाद भूल भी जाते। फिर कुछ नये रोगी याद हो उठते। लेकिन कुछ ऐसे भी पुराने रोगी थे जिन की याद मन से नहीं उतरती।

मस्लाहों की उम लड़की को जिस का नाम प्रभा था जिसे टी. बी. से बचाया है डॉक्टर ने। नरेन यादू को कालरा से बचाया है, डॉक्टर ने और यह बचना भी कितना आवश्यक है। उसे यह सब याद है। काली माँ के पुजारी को भी उस ने बचाया था। टायफाइड से बचा था वह पुजारी। बीच-बीच में निर्मला की भी याद आती है।

दो साल के बाद आज हठात् डॉक्टर को एक टेलिफोन मिला। एक बहुत बड़े अस्पताल में टेलिफोन आया था।—आप को एक बार आना होगा।

—मुझे ! क्यों ?

—एक मुन्दरी तरफ़ी, हमारे यहाँ ही वह नर्स थी... उन ने रह रह कर कहा है, बनेगी नहीं। आप को, आप के साथ बात करना चाहती है।

डॉक्टर आश्चर्यचकित हो गया। कौन? नर्सों में से तो बहुतों को जानता है वह लेकिन यह कौन? किस ने विष खा लिया और विष खाने पर कौन नर्स उम के साथ साक्षात्कार करना चाहती है? फिर भी वह गया।

डॉक्टर अवाक हो उठा!

स्वच्छ भुज्र वस्त्रों में लिपटी हुई एक तरणी पत्नी हुई है। रात्रि-कालीन नदी की तरह। बीच-बीच में दृढ़ से उस की देह ऐंठ रही है। मानो रात्रि की उस नदी में लहरें उठ रहों हों। निर्मला थोड़ी हुई है।

अस्पताल के डॉक्टर ने कहा—कुछ महीने पहले दस ने नौकरी शुरू की थी। फिर बीजे—बहुत ही हैममुख लड़की थी वह। पता नहीं क्यों... नहीं जानता। मित्रियों का चरित्र बड़ा विचित्र होता है। कई डॉक्टर तो उस के पीछे पन्ध्रवत् सगे रहते थे। लड़की को जैसे दस दात में मज्जा आता था, चिड़ाने में। क्या आप उसे पहचानते हैं?

—जी हाँ, पहचानता हूँ। लेकिन वह आप के यहाँ नर्स हुई थी इसे नहीं जानता था। बहुत पहले वह मेरी पेरेगेंट थी। टी. बी. हो गयी थी उसे।

—अच्छा, ऐसा था!

—जी हाँ।

—जा कर देखिये, क्या कहना चाहती है आप से। यह निश्चय है कि... डॉक्टर हँसा। यह डॉक्टर भी जानता था कि अब उसे ज्ञान नहीं होगा। वह होश में नहीं आयेगी।

उम की घेतना नहीं मीटी फिर। तेज वैज्ञानिक की दृष्टि छोया नहीं गयी। डॉक्टर को एक चिट्ठी मिली। निर्मला ने उसे ही लिखा था। काफी समझी चिट्ठी थी। चिट्ठी में बहुत सी बातें थी। चिट्ठी में बहुत ही घटनाओं का जिक्र था। निर्मला ने लिखा था—हटातू मेरा मन जैसे तीता हो उठा। मैं समाधान खोज रही थी। टीक इसी समय उम कन्वेंटर को गवर्नमेण्ट ने बंद कर लिया, कई लाख रुपये उस ने ठग थे। मैं बच गयी। फिर मैं ने सोचा।

लिखा है—आप को उस दिन की बात याद पड़ रही है डॉक्टर साहब? मैं ने गोब-जमन कर देखा कि रमेन को मैं प्यार करती हूँ कि

नहीं। मेरे पास उस समय बहुत रुपये थे। उस कण्ट्रिबटर ने मुझे गहने और रुपये बहुत दिये थे। मैं रमेन के साथ बड़ी सरसता से अपना जीवन गुप्तपूर्वक बिता सकती थी...लेकिन मैं ने ठीक समझा था कि उस के साथ मेरा जीवन मुझी नहीं होगा। मैं ने एक बार सोचा कि तीर्य कर आऊँ। लेकिन यह भी अच्छा न लगा। फिर सोचा कि मिनेमा में चली जाऊँ। लेकिन उमे भी छोड़ दिया। हात्ता कि मैं ने सब ठीक-ठाक कर लिया था। हम के बाद नर्सिंग भीखने की इच्छा हुई। बहुत अच्छा लगा। लगा कि जैसे मैं यही चाह रही हूँ। मनुष्य कुछ भी तो चाहता है जीवन में, मुझे लगा कि रमेन के साथ जो कुछ मुझे पहले नहीं मिला था, उमे मैं ने उस कण्ट्रिबटर के साथ पाया, लेकिन जो कुछ रुपये-गहने, पढ़ने-लिखने और गाने-बजाने में नहीं मिल सका उसे मैं ने इस नर्सिंग में पाया। मधुमुच यही लगा मुझे पहले। लगा कि सब कुछ मिल गया है मुझे। अपनी मेहनत के फल पर पैदा कर के दिन काट रही थी। उस भले आदमी ने जो रुपये मुझे दिये थे उमे मैं ने बैंक में रख दिया था और उस में हाथ नहीं लगाया था, हाथ लगाने की इच्छा भी नहीं होती थी, हो सकती है कि वह कहे कि नारी पुरुष से चाहती है। इस क्षेत्र में तुम ने वही भूल की थी। नहीं, मुन्दर जबान डॉक्टर मेरे चारों तरफ घूमकर भारा करते थे। पहले अच्छी थी। मन में यही हुआ कि सब कुछ मिल गया है मुझे, उस के बाद सारे रंग जैसे पीके हो गये। और कुछ अच्छा नहीं लगा। धीरे-धीरे सब कुछ बामी होने लगा। कई दिनों से इधर मैं गराब थी रही थी। मैं ने क्या चाहा था, मैं खुद नहीं समझ पायी थी डॉक्टर गाहब। शायद आदमी उमे नहीं समझ सकता। दरअसल मनुष्य समझ नहीं पाता। उमे कुछ हटात् मिल जाता है। पाने के बाद वह समझ पाता है कि उम ने क्या चाहा था। विय पीने की बलमा में बहुत आनन्द था रही हूँ।

पुनरुप—सिखा है उम ने—मेरे जो रुपये बैंक में है उन का ट्रस्टी मैं ने भार को बना दिया है। क्योंकि आप को ठीक समय पर बतादेगा। स्थितियों के किसी कार्य में लगा दीजिएगा।

डॉक्टर स्तब्ध हो कर चुपचाप बैठा रहा।

क्या पाहा था निर्मला ने? मुख? मन्तान? लेकिन किसी पुरुष का

आश्रय तो उसे अच्छा नहीं लगा ?
 क्या चाहा था ? क्या किसी और को चाहा था ? डॉक्टर को हठात्
 जैसे एक दर्द और ऐंठन सी होने लगी । ... शायद मुझे ही चाहा हो । भक्ति
 से, थढ़ा से कभी-कभी ... मनोविज्ञान तो यही कहता है ।
 हठात् उसे ऐसा लगा कि निर्मला उस के कान के पास खिलखिलाती
 हुई होस रही है और कह रही है ... 'पुरुषों के मन में होता है ...' मुझे प्यार
 करने पर ... तो ...
 डॉक्टर लज्जित हो उठा मन ही मन ।

कमला नाम की एक लडकी ... प्लुरिसी की रोगिणी । उसे लाया था
 उस का बाप ।
 डॉक्टर उठ कर बैठ गये—विजय, कैलेशियम लाओ ।
 —वाह, लडकी तो चगी हो रही है । वाह, ।
 विजय बहुत देरी करता है । डॉक्टर को चुपचाप बैठा रहना पड़ा ।
 —यया चाहा था निर्मला ने ?

□

व्याघ्रचर्म

जिसे कहते हैं बिलबुल बय्य देहात । मजोदपुर वैसा ही बय्य देहात है । केवरा पगडण्डी के अलावा गाँव में जाने के लिए और कोई दूसरा रास्ता नहीं है । शरीर में अच्छे कपड़े और पैरों में जूते देख कर किन्हीं परदेशी को गाँव के मुत्ते भूँकते-भूँकते स्वयं दूर धले जाते हैं । रास्ते के ऊपर रोकते हुए नग-धडग बालकों का दिगम्बर दल आश्चर्य और भय में रास्ता छोड़ कर एक ओर घटा हो जाता है । इस के बाद उम घटोही के पीछे-पीछे गाँव के अन्तिम छोर तक जा कर वे लौट आते हैं । थोड़े दिन पहले वहाँ पर एक सरकारी कुआँ खोदा गया है, लेकिन उस का पानी वहाँ के लोग नहीं पीन—बहते हैं कि इन्दारा का जल नमकीन है...पीने पर पेट खराब हो जायेगा । ऐसा ही है बय्य देहात यह मजोदपुर ।

इस गाँव में ईंटें नहीं तैयार की जाती, कोयले नहीं जलाये जाते, पान के अलावा और किन्हीं चीजों में घूने की खरत नहीं पड़ती, और यहाँ तक कि सियारों द्वारा बकरी को पकड़ते जाने पर भी उसे मार कर भगाया नहीं जाता । इस का कारण है कि निसार को ये माथान् नरस्वनी मानते हैं । एक दिन यह छोटा सा गाँव अकस्मात् हो-दुल्लट में जैने खबस हो उठा । एक छोटे से गट्टे में पता नहीं किम में एक काना सा बीस मन का पत्थर फेंक दिया । गट्टे में तरंगों के उठने से भी खड़सना मन्दा पानी बाँध तोड़ कर बहने के क्रोध

हो उठा। गाँव के लोग ठीक भागने की अवस्था में हो उठे।

गाँव वालों का कोई दोष नहीं। गाँव के जमींदार जिन्होंने नया-नया एम. ए. पास किया है, आये हैं। उन के साथ रात के अन्धकार की तरह दो काले रंग के ग्रेहाउण्ड कुत्ते हैं जिन का नाम है—टाम और टेवी और अपने साथ वे लांघे हैं बहुत सी किताबें। जमींदार गाँव वालों के लिए डर की चीज होने पर भी अपरिचित चीज नहीं है। इत के पहले भी वे लोग जमींदार को देख चुके हैं। बड़ी-बड़ी पगड़ी बाँधे चपरासियों के मण्ड, फ़रशी, घड़े-यड़े नल वाले हुक्के, बोटलें और कुत्तों की गर्जना... इन सब से गाँव वालों का परिचय है। लेकिन इतनी डेर भी किताबों वाले कुक्कुर-प्रिय हेमांग बाबू की तरह जमींदार से उन का पाला नहीं पड़ा था। इस के अलावा जिस दिन गुमास्ते ने यह घोषणा की—बाबू किसी के साथ भेंट नहीं करेंगे, किसी से नजराना नहीं लेंगे और मालगुजारी की बात बोलने पर भी नहीं मुँहेंगे... उस दिन गाँव वालों का विस्मय चरम सीमा को पहुँच गया। लेकिन आश्चर्य की तुलना में उन सभी को डर ज्यादा हुआ।

हेमांग बाबू शौक से यहाँ आराम करने आये थे महल में, साथ ही साथ कुछ और पढ़ने की कुछ इच्छा भी ले कर। हेमांग बाबू अपनी कचहरी के आँगने में पैदल जब घूमते हैं तब दूर से उन की प्रजा उन्हें देखती है, बच्चे उँगली दिखा कर कहते हैं—वह देखो, बाबू हैं।

जो थोड़ा बूढ़े व्यक्ति थे वे बच्चों का हाथ पकड़ कर खींच कर कहते—
श्री खबरदार... कोई चुपचाप कहता—यह कैसी बात है भाई, मैं तो कुछ नहीं समझ पाता। कोई कहता—भाई बड़े आदमी हैं। यदि कोई साहस कर के कचहरी के पास जाता भी तो डर के मारे बाहर ही खड़ा हो जाता क्योंकि काले रंग के उन दोनों कुत्तों का डर पैदा था।

और उन के गले की आवाज सचमुच ही आदमियों को भयभीत कर देती।

उस दिन दोनों कुत्ते कचहरी के पिछवारे बँधे हुए थे। इमी लिए रंग मण्डल कचहरी में घूम गया। हेमांग बाबू अपनी देह में तेल लगा रहे थे। उस ने राय जोड़ कर कहा—साइए सरकार, आप के पैरों में मैं ही तेल लगा दूँ।

हेमांग बाबू ने हँस कर कहा—नहीं, रहने दो।

इन्द्र मण्डल को काठ मार गया। फिर भी उम ने कहा—टुडूर, मैं आप की प्रजा हूँ।

हेमांग बाबू आदमी भने हैं, उन्होंने मिठान के नाथ ही कहा—वरा नाम है तुम्हारा?

इन्द्र मण्डन ने उत्साहित हो कर कहा—टुडूर, इन्द्रचन्द्र मण्डल, टुडूर का नेवक हूँ। आप के चरणों की धूल हूँ।

—ठीक है, कैसी प्रमत्त हुई इस बार?

इन्द्र ने इस बार कातर कण्ठ में कहा—भगवान् ने सब मार दिया टुडूर, आदमी का भला बुरा दोष है?

ठठातू पीछे बैठे हुए दोनों कुत्तों ने बड़े जोर में भूँकना शुरू किया। वह जैसे कुत्तों की आवाज न हो कर जेर की आवाज हो।

साथ-ही-साथ एक आदमी की आवाज भी सुनाई पड़ी—बाप रे बाप, ये तो जैसे आदमी को फाड़ कर खा जायेंगे।

हेमांग बाबू ने नौकर से कहा—जा कर देख तो कौन आदमी बिस्ला रहा है। जा कर जरा कुत्तों को सम्हाल। जब तुम वहाँ पड़े हो जाओगे तब शायद वे कुत्ते थुप हो जायें। और उम आदमी से कह दो कि चला भाये।

नौकर चला गया। थोड़ी देर बाद एक असाधारण सम्बा जवान कचहरी के आँगन में आ कर जमीन पर मिर झुका कर सत्ताम टोंकता हुआ बोला—सत्ताम टुडूर।

हेमांग बाबू आश्चर्य से चकित हो कर उम आदमी की ओर देखने लगे। गाड़े छह फुट सम्बा एक जवान था वह। बीसी मटी हुई जमीन बाले-बाले धुँपराते बाल। लाल-लाल आँखें और उम आदमी के सम्यार्द के मुताबिक ही उम के हाथ में एक साटी। और माथे पर एक बड़ा हुआ दाग।

उम आदमी ने हँसते हुए कहा—टुडूर, हम लोगों की रोटी रोटी मार दोगे क्या? अच्छा कुकुर पाता है आप ने? ये कुत्ते तो जंगल में डेर-डेर पकड़ लायेंगे। और किसी आदमी पर सुलभार देने पर उम की

गरदन पकड़ कर चबा जायेंगे ।

हेमांग बाबू ने कहा—कि ये कुत्ते शिकार करने के लिए ही पाले जाते हैं ।

उम आदमी ने कहा—आप ने पासा है तो ठीक किया है लेकिन गुलाम की तरह ये कुत्ते नहीं हैं । एक लाठी में ही आप का यह गुलाम ठण्डा कर देगा इन्हें ।

उस आदमी को देख कर उस की बात में अत्युक्ति या असम्भव होने की बात नहीं लगी ।

हेमांग बाबू ने आश्चर्यचकित हो कर पूछा—क्या नाम है तुम्हारा ?

फिर एक सत्ताम ठोंक कर उस ने कहा—गुलाम का नाम है रतन हाड़ी । हुजूर का गुलाम हूँ मैं । इस इलाका में सभी पहचानते हैं मुझे—बोलिए न गुमास्ता माहब !

हेमांग बाबू ने इस बार पीछे फिर कर और सींगों की ओर देखा । उन्होंने देखा कि गुमास्ता, ठाकुर, लखी, इन्द्र मण्डस और वहाँ के सभी लोगों के शरीर जैसे काँप रहे हों ।

हेमांग बाबू ने पूछा—राधाचरण, यह कौन आदमी है ?

राधाचरण गुमास्ते ने कहा—जी हाँ, इस का नाम रतन हाड़ी है । हम जवार में इस से बड़ा सठैत कोई नहीं । जमींदार का कोई काम पड़ने पर यह काम-धाम कर देता है ।

रतन ने कहा—हुजूर की कचहरी में मेरे लिए एक बेंधी हुई रकम मिलती है । सभी लोगों की कचहरी में कुछ न कुछ धँसा हुआ है । दगा-फसाद और प्रजा की दयाने में जो आवश्यकता होती है वो मैं सब ठीक कर देता हूँ ।

इस के बाद अपने गिर के उस दाग को दिया कर उस ने कहा—मुगिदाबाद में फतह गिर परगने के जमींदार के एक दाने में मेरे गिर में एक आदमी ने जलवार में यह घाव किया । ताजा खून भक-भक करता हुआ गिरने लगा । चाकल देने में भात होता है हुजूर—उम मारे खून से मेरा मुँह भर ना गया । फिर भी मैं ने उसे छोड़ा नहीं, साब ही साब उस

की घोपटी पर एक लाठी जमा दी और अण्डे के खोल की तरह वेटा वही घूर हो गया। वह भी गिर गया। और मैं भी फिर गया। लेकिन मेरी रागि को देख कर उम तरफ के सभी भाग गये। कभी इस इलाके में उन सबों ने पैर नहीं दिया, छह महीने मुझे विस्तर पर जरूर भोगना पड़ा।

इन्द्र मण्डल धीरे-धीरे कचहरी में बाहर चला गया। हेमांग बाबू ने कहा—तुम्हें पुलिस ने नहीं पकड़ा ?

रतन ने हँस कर कहा—तब आप जैसे दृजूर क्यों हैं ? ऐसा गोलमाल कर दिया उम जमींदार ने कि पुलिस को पता नहीं चला। पानी की तरह रपया बहाया या मालिकों ने। उस मामले में जीत गये मेरे ही दृजूर ! उस इलाके में बाबुओं की आमदनी हजार रुपये बढ़ गयी है।

एक तिगरेट सुनया कर हेमांग बाबू ने पूछा—अब वहाँ काम करते हो तुम ? फिर एक सलाम ठोंक कर रतन ने कहा—मैं सदा काम करता हूँ दृजूर, जब जिन का काम पड़ता है सुनाने पर गुलाम दृजूर के पास आ जाता है।

—हैं, अभी कहाँ आये थे ?

—यही दृजूर को सलाम करने आया था। सुना था कि दृजूर आये हैं इसलिए पला आया। इन कुत्तों को रोख दूध-भान दे रहे हैं, मुझे कुछ भाज द्रुम कर दीजिए।

हेमांग बाबू ने गुमास्ता की इजारा किया। वह जल्दी से घर के भीतर जा कर एक बार फिर सलाम ठोका और कहा—जब जरूरत हो, कुत्तों को भेज कर मुझे बुला लेंगे। जो द्रुम देंगे, यही मैं करूँगा। दृजूर का अगर कोई द्रुमन हो तो द्रुम देने पर—उस ने इजारे से यह समझा दिया कि वह उसे मार भी सकता है।

इस के बाद फिर कहना शुरू किया—यह सब मारी प्रजा जानती है। इस इलाके में काशीदास नाम का एक बदमाश बिगान था। इस इलाके के लोग हर के मारे बाँपने थे। बेटे के पास पैसा भी खूब था और छाती भी खूब चौड़ी थी। आज उम की जमीन में सी तो बस उम का पोखरा खबरदस्ती छेक दिया और मछली पकड़ सी और बस उम का गेरा मिया मिया। अन्त में पाकस्ता के जमींदार के साथ झगड़ा भिड़ गया।

गुलाम के ऊपर इस का भार दिया गया। यही दो वर्ष पहले कानी पूजा के दिन एक मैदान के बीच काशीदान का खेल खत्म कर दिया। उस का हाथ, उस के पैर और उस का सिर सब अलग-अलग हो कर उस मैदान में पड़े हुए थे।

हेमांग बाबू उस के शरीर और उस की भविष्या को देख कर प्रगल्भ दृष्टि से उन की ओर देख रहे थे। उन्होंने कहा—तुम काम करोगे ?

फिर सलाम ठोक कर रतन ने कहा—हुनम होने पर कर सकता हूँ।

—नही, वैसे कोई काम नहीं है। मेरे पास नौकरी करोगे ?

—गुलाम का पेट खरा बड़ा है हुजूर !—ऐसा कह कर रतन ने हँसते हुए अपने पेट पर हाथ फिराया।

—मेरे ये दोनो कुत्ते पक्का तीन सेर चावल का भात खा जाते हैं और एक-एक सेर दूध पीते हैं।

—हुजूर के शौक की बलिहारी है। हुजूर अगर चाहें तो मेरी तरह बीस आदमी पाल सकते हैं। मैं कल आ कर बताऊँगा।—रतन नमस्कार कर विदा हुआ।

गुमास्ता ने हम बार डर से कहा—हुजूर, वैसे आदमी को घर में मत घुसने दीजिए।

जाना बनाने वाले महाराज ने कहा—साधातू जैसे व्याध है।

हेमांग बाबू ने हँस कर कहा—सोग तो बाघ को भी शौक से पालते हैं ! देखू जरा थोड़े दिन इसे भी पाल कर। महाराज ने डर से कहा—क्या करेंगे उसे पाल कर हुजूर ? हुजूर का नाम तो सारे देश में है।

बीच में ही बाघा दे कर हेमांग बाबू ने कहा—उन कुत्तों को पोता है, किसी को कटघाता तो नहीं, दो बन्दूकें भी मेरे पास हैं, लेकिन मैं ने किसी आदमी को गोली तो नहीं मारी। डरने की क्या बात है, जरा देरू तो। गुमास्ते ने कहा—वह भला क्या काम करेगा हुजूर ! बँधा हुआ बाघ करने की उसे जरूरत ही नहीं पड़ती। वह यही सब काम करता है। इस के अलावा ज़िम पर के सामने जा खड़ा हो जाता है उस दिन की सुराफ उसे भित जाती है, उसे कोई ना नहीं करता, उसे देखते ही सोग डर के

मारे काँते हैं। वह जो भी चाहता है उसे ही दे कर सोच उस से पिण्ड छुड़ा लेते हैं।

महाराज ने कहा—तब भी जरा देखिए न, इस अभाग की झोंपड़ी पर फूग नहीं है। पत्नी की साड़ी विल्कुल फटी हुई है। पाप का धन कपूर की तरह उड़ जाता है। कहते हैं न कि पाप से संचित धन और बाढ़ का पानी—ये कभी भी नहीं रहते !

गुमास्ते का अनुमान ठीक नहीं हुआ। दूसरे दिन ही सुबह रतन भा घरा हुआ। उस दिन वह सलाम नहीं बजाया। हेमांग बाबू के पैर को छू कर उस ने कहा—दुजूर के पैरों में ही आज से रहूँगा।

कई दिनों के बाद हेमांग बाबू किताबों से ऊब गये। वे अपनी बन्दूकों और कुत्तों को ले कर बाहर निकल पड़े। कोई बड़ा शिकार इधर नहीं मिलता। बस घरगोश और चिड़िया-बुनमुन। हरियल, तित्तर, सारस और भी कई तरह की चिड़ियों के झुंड। बन्दूक का शब्द भी इन चिड़ियों के लिए अपरिचित है। गुमास्ते ने कहा—रतन, तुम बाबू के साथ जाओ !

रतन ने कहा—दुजूर के साथ दो साथ तो जा ही रहे हैं, हाथ में उन के बन्दूक है। रतन मला उन चिड़ियों को उठाने के लिए कहाँ जायेगा। उस शम्भू को बाबू के साथ भेज दो !—वह बिलम पर तन्बाकू रखने में व्यस्त हो गया।

हेमांग बाबू गाँव पार कर के मैदान में पहुँचे तब पास के ही एक पंगती फूल की झाड़ी में एक जानवर उछल कर मैदान की ओर भागा... घरगोश या यह। उन्होंने बन्दूक उठा कर गोली दाग दी। घरगोश बहुत जैबा बूद कर फिर नीचे गिर गया। लेकिन दूम्रे ही क्षण लँगडाते-लँगडाते भागने लगा। तब टाम और टेबी उस के पीछे दौड़ पड़े। देखते ही देखते टाम ने आ कर उस मामूम जानवर की गरदन दबोच ली। निस्तब्ध प्रान्तर उस की करण ध्वनि से जैसे भर सा गया। हेमांग बाबू को लगा कि किमी बकरा के बच्चे को कुत्ते ने पकड़ लिया हो। ठीक वैसा ही चीत्कार। घरगोश का चीत्कार उन्होंने कभी नहीं सुना था। टाम ने उसे एक दो बार मिमोरा और वह बेचारा जीव वही ठंडा हो गया। मनुष्य की हिस वृत्ति

जब पाशविक उत्सर्ग में जाग उठती है, तब आदमी पता नहीं कैसे हो जाता। एक बार खून करने पर जैसे उस पर एक नशा पड़ जाता है और आदमी दूसरी हत्या के लिए पागल हो उठता है। वहने ही एक ऐसा शिकार कर के हेमांग बाबू जैसे मत्त हो उठे। अन्त में एक बोझा पशियों का लाद कर जब वे कचहरी में नीटे तब शाम हो चली थी।

स्नान और भोजन के बाद वे किताब ने कर बैठ गये। इसी समय गुमास्ता आ कर उन के पास छड़ा हो गया और उन ने कहा—उस मरे हुए खरगोश के पेट में चार बच्चे थे।

हेमांग बाबू ने बहुत शिकार किया था। मरी हुई चिड़िया के पेट में अण्डे तो उन्होंने कई बार देखे थे इसलिए यह खबर पा कर उन्हें कोई आश्चर्य नहीं हुआ बल्कि कुतूहलवश वे उठ कर बोले—अच्छा, चलो तो जरा देखूँ ?

सबसे पहली चमड़े की एक मितली के भीतर चार छोटे-छोटे बच्चे दिखाई दे रहे थे। हेमांग बाबू ने कहा—यह थोड़ी गलती हो गयी। खैर ! इन चारों बच्चों को दोनों कुत्तों में बाँट दो।

रात को भोजन करते समय हेमांग बाबू ने देखा, सभी लोग खाने बैठे हुए हैं सिर्फ रतन नहीं है। भी निकोड कर उन्होंने प्रश्न किया—रतन कहाँ है ?

गुमास्ता बोला—वह नहीं खायेगा, कहता है कि आज उस का शरीर ठीक नहीं है।

—क्यों ?

—इन खरगोश के बच्चों को देय कर, खरगोश के पेट में जो बच्चे थे उन्हें देय कर उसे कष्ट हुआ।

हेमांग बाबू आश्चर्यचकित हो उठे। जो आदमी मनुष्य को मार सकता है वह एक छोटे से जानवर के लिए रो रहा है ?

दूसरे ही क्षण वे तुरन्त हँस पड़े। ये सब अभ्यास की बात है। जो आदमी पशुहत्या किया करता है, वह नरहत्या नहीं कर सकता। और जो नरहत्या करता है वह पशुहत्या देख कर रोने लगता है। एक बार उन्होंने सोचा कि उन आदमी को बिदा ही कर देना ठीक है। दूसरे ही क्षण उन के

मन में हुआ—रहने दो ।

रतन हेमांग बाबू के पास ही रह गया । अपने परिवार के साथ आकर वह हेमांग बाबू के इलाके में रहने लगा । हेमांग बाबू ने ही उस का सब इन्तजाम कर दिया । वह खाता-पीता और उन की कचहरी में बँठा रहता । इन दोनों कुत्तों के साथ उस का बड़ा प्रेम-भाव था ।

हेमांग बाबू खरा झक्की मिजाज के आदमी हैं । इन भयंकर जानवरों के ऊपर उन का बड़ा स्नेह है । वैसे वे आदमी खराब नहीं हैं । जमींदार होने पर भी बरा-परम्परा के अनुसार ये सोम बड़े सम्म और दयालु जमींदार के रूप में प्रसिद्ध हैं । लेकिन और कर्मचारी इस भयंकर आदमी को देख कर डर से जाते थे । और रतन की मोटी तनछाह को भी देख कर उन को जलन होती थी । रतन एकाग्र दिन जा कर सलाम ठोंक कर कहता—गुमास्ता साहब, आज शराब आप की ओर मे रहेंगी !

यमराज के पास अनुनय-विनय चलती है, लेकिन यमदूत के पास गिड़-गिड़ाने से कोई लाभ नहीं होता है । कोई इकगनी और कोई दुअगनी पँक कर रतन से अपना पिण्ड छुड़ाता ।

रतन नमकहराम नहीं था, वह उन्हें भी एक सलाम ठोंकता और कहता—बाबू का गुलाम हूँ और आप लोगों का भी । कभी कोई जरूरत पड़े तो हुबम करेंगे हूबूर ।

बेचारे सीधे-सादे कर्मचारी शुष्क हँसी हँस कर कहते—हम लोगों का क्या क्या काम है रतन ?

रतन समझा कर कहता—हूबूर, आदमी होने पर ही काम की जरूरत पड़ती है । आप लोगों का कोई दुश्मन नहीं है । जो जैसा आदमी होता है उस का दुश्मन भी वैसा ही होता है, और वैसा ही उस का काम । रतनपुर के एक जमींदार के राजानची का झगड़ा उस के गाँव के एक बड़े आदमी ने हो गया । अरे बाबू, क्या बताऊँ ! अरे बेटा जाति का मोनार और पैसा होने पर आममान में सीढ़ी लगाने लगा । राजानची ने मुझे पकड़ा—रतन, मुझे तुम्हें बचाना ही होगा, नहीं तो मेरी दरख्त घूस में मिन जादेगी । मुझे पचीस रुपये दिये उस राजानची ने । तीन दिन बीतने ही उस ने समझा, बेटा सुनार की छप्पर में सात थोड़ा !

कर्मचारी ने डर से कहा—आग !

रतन ने कहा—जी हाँ ! लाल धोड़ा से मेरा मतलब आगे से ही था । और एक ही बार नहीं, तीन-तीन बार मैं ने आग लगायी । अन्त में उस बेटा सुनार ने टिन से छद्म दिया मकान । तब जानते है, क्या किया मैं ने ? गाँव के रास्ते पर वह बेटा खड़ा था । उस का कान पकड़ कर गाँव के चारो तरफ एक घुडदौड़ करा दिया ।

कर्मचारी चुन रहा । वह और बात-चीत नहीं बढ़ाना चाह रहा था । रतन से विप्लव छूट जाना ही अच्छा था । लेकिन रतन ने उसे धमका नहीं किया । उस ने अपने भयंकर चेहरे को और बीभत्स बनाते हुए कहा कि लाल धोड़ा तो खूब सस्ता होना है हुजूर, सिर्फ एक सलाई की तिल्ली और सब कुछ खत्म । एक रुपया देने पर एक कोने में, दो रुपये देने पर दो कोने में और तीन रुपया देने पर तीन कोने में और चार रुपया देने पर चारो कोने में आग लगा सकता हूँ ।

कर्मचारी ने इस बार नाराज हो कर कहा—लेकिन यमराज के यहाँ तो तुम्हे जवाब देना पड़ेगा रतन ?

ही-ही करता हुआ रतन हँस कर बोला—उस दिन किसी को पैसा नहीं देना होगा हुजूर, रतन अपनी ही गरज से यमराज की दलान में आग लगा देगा ।—ऐसा कह कर उठ पड़ा ।

एक दिन मधुसूदन रतन का काम आ ही पड़ा ।

हाल ही में हेमांग बाबू ने एक नया गाँव खरीदा था । उस गाँव में प्रजा के साथ थोड़ा विरोध हो गया । हेमांग बाबू का भी दोष नहीं दिया जा सकता । उन्होंने फसाद नहीं चाहा था । फसाद उस गाँव के अमात्यो ने ही किया । हेमांग बाबू ने मजबूत या सलामी कुछ भी नहीं चाहा था उन से । उन्होंने केवल कानूनी मालगुजारी ही चाहा था लेकिन प्रजा वह भी नहीं देना चाहती थी ।

अमात्यो ने कहा—सगान किस बात का ? धैर्य तो बिलकुल उगार हो गये ।

हेमांग बाबू ने नालिश की । उन के अमात्यो ने उन को कचहरी में आग लगा दी । एक दिन रास्ते में उन के गुमास्ते को पकड़ कर बान मल

कर अपमानित कर दिया। हेमांग बाबू के पैरों में अब गुमास्ता पड़ गया तब वे ऊपर से नीचे तक जल उठे। उन्होंने रतन को बुलवाया। रतन के आ कर खड़े होते ही उन्होंने कहा—कितने दिन तक बैठ कर तुम ने छाया है। हाथी की तरह तुम को पाला है। इस बार तुम को काम दिखाना होगा।

रतन उन के मुँह की ओर खड़ा हो कर ताकता रहा। हेमांग बाबू ने कहा—जये गाँव पलासबनी को जा कर आग लगा दो।

रतन ने पूछा—पलासबनी ?...

—हाँ। गाँव के छोर से से कर गाँव के अन्त तक। एक भी घर न बचे, समझ गया ?

हेमांग बाबू ने फिर कहा—अगर कोई तुम्हें रोके तो उसे मार डालना।

—छून ?—रतन ने जैसे हुक्म को बिल्कुल ठीक से गमझ लेता चाहा।

—हाँ, छून !—हेमांग बाबू ने काँपते गने से फिर आदेश दिया।

रतन ने फिर कोई बात नहीं की और चला गया।

हेमांग बाबू उत्कण्ठित हो कर रतन के सौटने की याद जोहने रहे। दूसरे दिन उन के मन में हुआ कि उसे जनाबश उन्होंने यह हुक्म नहीं दिया होता तो अच्छा होगा। लेकिन रतन ने क्या वह काम कर दिया है ? तीसरे दिन वह रतन के लिए और उत्कण्ठित हो उठे। कहीं रतन पकड़ तो नहीं लिया गया ? और चौथे दिन उन्होंने एक टहलदार को बुला कर कहा—जरा रतन के घर जा कर देखो तो !

वह नीकर लौट कर आया तो उस ने कहा—दुजूर, वो तो वहीं नहीं दिखाई पड़ता। उस का परिवार भी यहाँ नहीं है। घर में तो तामा बन्द है।

लेकिन रतन लौटा नहीं। विन्तित हो कर हेमांग बाबू ने पनामबनी गाँव में आदमी भिजवाया। लेकिन इस के पहुँचे ही मनम्या का समाधान हो गया। शाम को यह पता लग गया कि रतन दूसरे ही दिन यहाँ में अपनी पत्नी को ले कर भाग गया। उस के घर में कुछ टूटी-फूटी मिट्टी की हाँडियाँ थी बर। पनामबनी में खबर आयी कि उन ने गाँव भी नहीं जताया और

वह पकड़ा भी नहीं गया ।

हेमांग बाबू को काठ मार गया । नारायण गुमास्ते ने आ कर कहा—
इस आदमी का यही पेशा है हुजूर ! बेटा वहाँ भी कुछ रुपया ले कर
पैतरा बदल गया होगा ।

हेमांग बाबू उस दिन अपने दोनों कुत्तों की सेवा में जैसे पागल से
रहे ।

एक साल के बाद हेमांग बाबू अपने एक दोस्त के यहाँ मेयता घाने
गये । हुगली जिला का एक गाँव । उन का दोस्त भी उन्हीं की तरह अच्छा
जमींदार । वही पर नाटकीय ढंग से रतन के साथ उन की भेंट हो गयी ।

उन के मित्र ने कहा—इस बार मैं ने एक शेर पाला है, देखोगे ?

हेमांग विस्मित हो कर बोले—शेर ?

—हाँ-हाँ, शेर ।

—बसो देखूँ, कहाँ है ?—हेमांग बाबू उत्तुंग हो उठे । उन के दोस्त
वही बैठ गये । बोले—यही बैठो, उसे सा रहा हूँ । अरे ताराचन्द—जरा
उसे बुला लो दे ।

हेमांग बाबू बोले—अरे शेर यहाँ लाओगे ? नहीं, नहीं, इतना दु साहस
ठीक नहीं । अभी बच्चा है जायद ?

—बच्चा नहीं है । पूरा पट्टा है ।

—क्या कहते हो ?—हेमांग बाबू की आँखें आश्चर्य से फटी रह गयी ।

—सलाम हुजूर !

जमीन पर झुक कर सलाम ठोकता हुआ रतन ने उसीही हेमांग बाबू
के चेहरे की ओर आँख उठा कर देखा, वह पत्थर की तरह वही जड़ बन
गया ।

हेमांग बाबू के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा । उन के कुछ
बोलने के पहले ही उन के दोस्त ने हिस्सगी करने हुए कहा—नरव्याघ्र ।
निकार दिवाने पर और इंग्रेजों को देने पर उन के बचने का कोई उपाय
नहीं है ।

हेमांग बाबू ने कहा—हूँ !

इसी समय एक बमंचारी हेमांग बाबू के उस मित्र के पास आया ।

बोलने का साहस नहीं करेगा। लेकिन वह जानती है कि उन के चेहरे पर और उन की आँखों में जो भापा फूट उठेगी भला वह उसे कैसे देखेगी। ऐसे ही बच्चे-बच्चियाँ उसे देख कर बेहोश हो जायें। छी ! छी ! इसी सज्जा के कारण एक बार वह आधी रात को अपना गाँव छोड़ कर भाग गयी। उसे याद आ रहा है वह दिन, तब वह थोड़ी बड़ी हो गयी थी। उमी की उम्र वाली सावित्री को एक दिन पहले रात को शिशु हुआ था। सुबह ही उसे देखने के लिए गयी थी। सावित्री तब बच्चे को ले कर धूप में बैठी थी, उस का सड़का गुदड़ी के ऊपर सोया हुआ था। साँवले रंग का बया सुन्दर लहका था।

ठीक आज की ही तरह उस के मन में उस दिन भी आया था उस बच्चे को ले कर अपनी छाती में बिपका कर नरम मँदे की सोई की तरह अपने ओठों से घूम-घूम कर उसे खा जाये। तब वह नहीं समझ पायी थी कि यह क्या है ? उस के मन में ऐसा हुआ कि बच्चे को प्यार करने की कामना है यह !

सावित्री की सास हाँ-हाँ करती हुई दौड़ कर आयी थी और सावित्री को डाँट कर उस ने कहा था—अरे तेरी घोपड़ी में अकल नहीं है ? अरे हयमजादी ! इस के साथ क्या गप्प मार रही है ? मेरे बच्चे को कुछ हुआ बताऊँगी—हाँ !

इस के बाद बाहर की ओर अँगुली दिखा कर कहा था तम से—निकल जा, मैं कहती हूँ कि निकल जा। हयमजादी की आँखों की तो जरा देखो !

सावित्री बच्चे को जल्दी से अपनी छाती में लगा कर बाँप उठी और घर के भीतर भाग गयी। उस दिन बड़ी कबोट ले कर बृह सोटी थी। बार-बार उस के मन में हुआ था—छिः छिः, भला वह क्या कर सकती है ? भले ही वह डाइन हो लेकिन क्या ऐसा कहने से ही वह सावित्री के छोटे बच्चे का अहित करेगी ? कर सकती है छिः छिः ! भगवान् को जैसे उस ने पुकार कर कहा था—हे ईश्वर, तुम इस का विचार करना। तुम सावित्री के बच्चे को सौ साल की उम्र देना। तुम यह प्रमाणित करना कि सावित्री के बच्चे को मैं कितना प्यार करती हूँ।

लेकिन शाम होते ही उस की उम विस्मयी दृष्टि की भूष से वह लड़का चल बसा। सावित्री का छोटा शिशु धनुष की तरह टेढ़ा हो गया था और ऐसा लग रहा था कि जैसे उम के शरीर से कोई खून घूसे जा रहा है।

लज्जा के मारे भाग कर वह गाँव के श्मशान वाले जंगल में छिप गयी थी। बार-बार अपने मुँह से मिट्टी पर घूक कर वह देख रही थी कि उम में कहीं खून है। अपने गले में अँगुली डाल कर उबकाई कर के भी उस ने देपना चाहा था, समझना चाहा था कि कहीं खून है। दो-एक बार तो कुछ नहीं समझ सकी थी लेकिन इस के बाद ताजे रक्त का छोटा बाहर आ गया। उसी दिन वह समझ गयी थी अपनी अपार निष्ठुर शक्ति की बात !

गम्भीर स्तब्ध रात्रि। उम दिन शायद चतुर्दशी थी। हाँ, चतुर्दशी ही तो थी। बाकुल के तारा देवी के मन्दिर में पूजा की ढोलक बज रही थी, उस दिन माँ तारा जागृत थी, पूणिमा के पहले चतुर्दशी के दिन माँ की पूजा होनी है, बलिदान चढ़ाया जाता है। लेकिन माँ ने भी उस पर दया नहीं की। तितनी बार उस ने मिन्नत की हैं—माँ, मुझे डाइन से आदमी बना दो, मैं अपनी छाती चीर कर तुम्हें खून दूँगी। लेकिन माँ ने उम की कोई बात नहीं सुनी जैसे।

एक गहरी साँस ले कर घुंटा निराश हो उठी। अतीत की पिछली सारी बातें डोर-कटी हुई पन्य की तरह उम के मन में उमरी आ रही थी। उस की छोटी-छोटी भूरी आँखों में एक अर्धहीन दृष्टि जग उठी। उमी दृष्टि में वह छाती-फाटा मैदान की ओर तावनी हुई बैठी रही। छाती-फाटा मैदान धूलि-धतरित था। घुसर-धूलि का एक यात्रा प्रणेत जैसे मभी वस्तुओं को ढक गया था।

उम अपरिचितता युवती का बच्चा भी दो गाँव पार करते-करते खल गया। जो पसीना उगे छूट रहा था, वह बन्द नहीं हुआ। उस की देह का मार्ग रक्त कोई निबोड़ कर जैसे साहर कर रहा था। पर कौन था यह ? हाय रे सर्वनाशी ! वह तरनी अपनी छाती को पीट-पीट कर बह रही थी।—क्यों गयी मैं, उम डाइन के पाम क्यों गयी ? यह मैं ने क्या कर साता ! लोग बरि उठे। बुकिया की भीत की बामना करने लगे। एक बार

कई जवान लड़कों ने मिल कर उसे सजा भी देना चाहा । बूढ़ी डाइन साँपिनी की तरह फुँफकार उठी—वह भला क्या करेगी उस का ? वह क्यों आयी यहाँ ? उस की आँखों के सामने इतनी सुन्दर और इतनी कच्ची देह से कर क्यों आयी ? हठात् चील की तरह तीखी आवाज में वह चीख उठी । उस आवाज को सुन कर वे सारे जवान भाग गये । लेकिन वह बुढ़िया अजगरी की तरह फुँफकार रही थी, अपने भीतर का जहर जैसे वह उगल रही थी और छूद ही उस जहर को पी रही थी । कभी ही-ही कर वह हँसती और कभी क्रुद्ध फुँफकार के साथ इस छाती-फाटा मैदान को कँपाती । कभी उस की यह भी इच्छा होती कि अपनी छाती पीट कर अपने बाँसों को मोच कर वह हो-हो कर रोये । उस की भूख समाप्त हो गयी थी । आज रसोई की कोई जरूरत नहीं । आज उस ने एक पूरे बच्चे की देह का रस अदृश्य ढंग से शोषण किया है ।

हवा धीरे-धीरे बह रही थी । शुक्ल पक्ष की नवमी का चन्द्रमा छाती-फाटा मैदान में एक सादे चहर की तरह बिपरा हुआ था । कहीं में एक बिड़िया उड़ती हुई आ रही थी और साथ-ही-साथ उस की आवाज आ रही थी—टिटुट-टिटुट । आम के बगीचे में हाँगुर बोल रहे थे । बुढ़िया के घर के पिछवारे सरने के पास दो व्यक्ति धीरे-धीरे कुछ बालें कर रहे थे । बुढ़िया के मन में आया कि वे ही छोकरे उस का शायद कुछ नुकसान करने आये हों । बड़ी सावधानी के साथ बुढ़िया घर के कोने के सामने आ कर झाँकने लगी, नहीं वे नहीं हैं । यह उन्हीं दोमो की सड़की थी जिस के पाँठ ने उसे छोड़ दिया था और उस के नाथ था उस का प्रणयी यह दोम-सड़का ।

सड़की बह रही थी—नहीं, यहाँ भला कौन आयेगा । लेकिन मैं घर आऊँगी अब ।

सड़के ने कहा—हूँ, यही भला कौन आ रहा है ? दिन में हो क्यों नहीं आता और भला रात में कौन आता है ?

—ठीक है यह । लेकिन जब तेरा बाप मेरे साथ मर्याद नहीं करेगा तब मैं तेरे साथ कैसे रहूँगी ।

छि छि ! बिजनी शर्म की बात है ! कहाँ जाने वह ? यदि वे दोनों

बेचारे छिप कर बात करने यहाँ आये हैं तब भला वहाँ क्यों बैठे हुए हैं ? क्यों नहीं उसके घर में आये वे ? उस जैसी बुढ़िया से भला लज्जा की कौन सी बात है ? सड़का क्या कह रहा है जैसे—? अगर मेरे माँ-बाप शादी नहीं करते हैं तो चल, मैं तुझे ले कर भिनगाँव भाग चलता हूँ । वही मैं तुझे ले कर अपना घर-द्वार बसाऊँगा । तेरे बिना तो ज़िन्दा नहीं रहूँगा ।

आह, अरे मुँह फुकवन्ना क्या कह रहा है ! ऐसी काली-कलूटी सड़की के ऊपर इस सड़के का मन आ गया । बुढ़िया को अपने अतीत की याद आयी । उस के गाँव के दस कोस दूर बोलपुर शहर के उस पनवाड़ी की दुकान पर का बड़ा आइना । आइने के बीच एक सन्धी दुबली-पतली चौदह पन्द्रह साल की सड़की की तसवीर । सिर के बाल रुखे, छोटा-सा माथा, गोल-मटोल नाक, पतले होठ । दोनों आँखें छोटी-छोटी और आँखों की दोनों पुतलियाँ कतई रंग की । लेकिन छोटी आँखें होने से क्या, पानीदार थी । आइने की ओर ताक कर वह अपनी ही आँखें देख रही थी । आइना तो उस के पास था नहीं, इस लिए उस आइने में अपने रूप की देख रही थी ।—अरे तू कौन है रे ? कहाँ से आयी ? लम्बा-चोड़ा एक जवान उससे पूछ रहा था । पिछली रात को ही वह बोलपुर आयी है । साबित्री के बच्चे को मार कर वह उस चतुर्दशी की रात को बोलपुर भाग आयी थी । उस आदमी को देख कर उसे घुरा न लगा, लेकिन उस की बातचीत का ढंग उसे बड़ा खराब लगा था । वह निष्पलक दृष्टि से उसी की ओर ताक रहा था । क्यों, मैं भला जहाँ से भी जाऊँ, तुम से मतलब ?

—तुम से मतलब ? एक घूँसा मार दूँगा तो मिट्टी के भीतर घँस जायेगी । कभी घूँसा देखा है ?

क्रोधित हो कर दाँत पर दाँत बैठा कर उस दिन उस ने उन जवान आदमी के धून को पीने की इच्छा प्रकट की थी । काले कलूटी पत्थर को खरू गटा हुआ शरीर । उस भी उस के जीभ के नीचे जैसे सार का क्रम्वारा फूट पड़ा था । कुछ भी जवाब न दे कर वह केवल तिरछी नजर से उस आदमी की तरफ ताकती हुई चली आ रही थी ।

उस दिन मूयें उलझ होने के साथ ही साथ पूरें की ओर जैसे घुना और हल्दी के रंग में भिला हुआ एक बड़े घास के आकार का गोत घाँस भी उठ

रहा था। बोलपुर के 'बिलकुल' आखीर में रेल लाइन के पास के पोपरे के पाट पर बैठी हुई वह अपने आँचल से साईं निकाल-निकाल कर घा रही थी और चाँद की तरफ ताक रही थी। चन्द्रमा का रंग तब बिलकुल दूध की तरह नहीं हुआ था। अन्धकार मिले-जुले प्रकाश में चारों ओर कुहासा सा दिखाई दे रहा था तथा सहसा उस के सामने आ कर खड़ा हो गया और वह चौंक उठी। वही आदमी था। वह ही-ही कर के हँसा था। उस ने कहा था—आज भी याद आता है—हँसी के साथ ही साथ उम आदमी के गालों में गहरे पड़ गये थे।—मेरी बात का जवाब नहीं दे कर भाग आयी ?

उस ने कहा था—तुम यहाँ से भाग जाओ, नहीं तो मैं चिल्लाऊँगी।

—चिल्लाओगी ? देख रही है इस पोपरे की गीली मिट्टी, इसी बीच में तेरी गरदन दबा दूँगा।

उसे भय हुआ था। वह उस के मुँह की ओर ताकती रह गयी थी। उस आदमी ने एकाएक अपने पैर से जमीन को ठोक कर धमकाते हुए कहा था—प्रत ! वह चौंक उठी थी। उस के आँचल में पड़ी हुई साईं सरसरा कर गिर पड़ी थी। वह आदमी ही-ही कर के हँस पड़ा था। और वह तो बिलकुल रोने लगी थी। वह आदमी जैसे नाराज हो कर बोला था—ऐसी रोवनी सड़की ले कर क्या होगा ? भाग, भाग !

उस के गले में स्पष्टतः स्नेह का स्वर फूट पड़ा था।

उस ने रोते-रोते ही कहा था—तू मुझे मारेगा क्या ?

—नहीं-नहीं, मारूँगा क्यों ? मैं ने तुझ में पूछा था कि तेरा घर कहाँ है ? और तू इसी बात पर चौब-चौब कर उठी। इसी में मैं ने कहा था।—और ऐसा कह कर के वह ही-ही कर के हँस पड़ा था।

—मेरा घर यहाँ से बहुत दूर है। पापर भाटा।

—क्या नाम है तेरा ? जौन जाति है ?

—मेरा नाम है गुरधनी। सोय-बाग मुझे मरा बट कर पुकारते हैं। हम सोय होम हैं।

वह आदमी बहुत गुप्त हो गया था और उस ने कहा था कि हम सोय भी होम हैं। तो घर में क्यों भाग आयी ?

उस की आँखों में पानी भर आया था, वह पता नहीं चुपचाप क्या सोच रही थी, क्या जवाब दे वह ?

—नाराज हो कर भाग आयी हो ?

—नहीं !

—तब ?

—मेरे माँ-बाप का कोई नहीं है । भला मुझे खाने-पीने को कौन देगा ? इसीलिए यहाँ मजदूरी कर के अपना पेट पालने आयी हूँ ।

—शादी क्यों नहीं किया ?

वह उस आदमी के चेहरे की ओर देखने लगी थी । भला उस की तरह डाइन से क्यों विवाह करेगा ! वह मिहर उठी थी । इस के बाद पता नहीं कौसी लज्जा से भर उठी थी ।

बुढ़िया आज भी अकारण अपना सिर ऊँचा कर के मिट्टी के ऊपर धीरे-धीरे हाथ फेर कर धूल और ककड़ इकट्ठा करने लगी । सारी बातें जैसे खो गयी हैं । जैसे भाला बनाते-बनाते धागे से कढ़ी सुई गिर पड़ी हो ।

ओह, कितने मच्छर है ! जैसे मधुमक्खी के छत्ते को घोंद देने पर मक्खियाँ आदमी छँकती हैं वैसे ही ये मच्छर चारों ओर से घेरे हुए हैं । अरे ! वह लड़का और लड़की कहाँ गये, उनकी बातें तो नहीं सुनाई पड़ती है ! जल्दी से वह दरवाजे पर जा कर बैठ गयी । कल ये जरूर आयेंगे । भला उस के घर की तरह उजाली जगह कहाँ मिलेगी ? इस ज्वार में किसी को आने की हिम्मत नहीं हँती लेकिन ये निश्चित आयेंगे । प्यार में भी कहीं डर लगता है !

हटातू उस के मन में एक विचित्र भावना घुसबुला उठी । इस लड़के को वह घायेली । बड़ा पढ़ा जवान है वह । हटातू उस का मन सिहर उठा । अपनी गरदन हिला कर बार-बार वह बोल उठी, नहीं, नहीं, नहीं ।

कई रातों के बाद बस वह अपने मन से गरदन इधर-उधर करने लगी । इस के बाद उठ कर वह धीरे-धीरे छप्पर के बरामदे के सामने इधर-उधर टहलने लगी । वह बाट जोड़ रही है । आज उस ने एक बच्चे को घा लिया है, आज तो वह सो नहीं पायेंगी, उसकी इच्छा होती है कि छाती-गालों में दान को पार कर बहुत दूर चली जाय । सोच कहते हैं कि वह पेट

को भी आसमान में उड़ा सकती है, अगर ऐसा होता तो बहुत अच्छा होता । पेड़ पर बैठ कर आसमान के बादलों को चीर कर हरहराती हुई जहाँ चाहती वहाँ जाती । कम से कम इस लड़के-लड़की की बात तो सुनाई पड़ती । वे कल जरूर आयेंगे ।

ही-ही-ही ! ठीक, आये हैं वे । लड़का चुप बैठा हुआ है और अपनी गरदन घुमा कर रास्ते की ओर ताक रहा है । आयेगी रे, वह आयेगी रे ।

उसे अपनी बात याद आ गयी । सारे दिन धूम-फिर कर वह जवान शाम को ठीक उसी पोखरे पर आया था । उस से पहले ही आ कर बैठा था । रास्ते की ओर ताकता हुआ अपने ही आप पर हिला रहा था । वह स्वयं आ कर मुँह छिपा कर हँस रही थी ।

—आ गया है तू ?

—मैं तो यहाँ कभी से बैठा हूँ ।

बुढ़िया चौंक उठी । ठीक वैसी ही बानें । उस ने भी उस से यही बात कही थी । ओह, यह लड़का भी ठीक वही बात कह रहा है । लड़की उस के मामले छड़ी है, जरूर वह मुँह छिपा कर हँस रही है ।

उस दिन वह एक दोने में कुछ घाने को लाया था । उस के मामले बड़ा कर उसने कहा था—कल तेरी साईं गिर गई थी न । ले, यह है ।

लेकिन वह हाथ नहीं बढ़ा सकी । उस की छाती में जैसे साँप की तरह सपनपाता हुआ उस के भीतर की डाइन का मन बार-बार फन मारने को तैयार हो रहा था, लेकिन मार नहीं पा रहा है ।

इस के बाद उस ने क्या किया था ? हाँ, याद है । वे बातें क्या भसा ये जानते हैं ? या वे ऐसा कर सकते हैं ? ओ माँ ! ठीक बने हो तो । यह लड़का भी उस लड़की के चेहरे को अपने हाथ में पकड़े हुए है । बुढ़िया बगने दोनों हाथों को जमीन पर ठोक कर हँसो से पट पड़ी । लेकिन उस की हँसी एकाएक ठहर पड़ी । गहसा एक सम्बो दीर्घ स्वास ले कर वह पेड़ के छारे बैठ गयी । उसे याद आया अपना वह अतीत । इस के बाद ही उस ने कहा था—मुझ से शादी करेगी सरा ?

ओ पता नहीं कैसे हो गयी थी । कुछ वह नहीं सबी थी, कुछ मोख नहीं मारी थी । भिफं उस के कान के पास कुछ गरमाहट भी मारी थी ।

उस डाइन का काला खून वहीं गिरा हुआ है।

अतीत के उस महानाग के विष के साथ इस डाइन का रक्त मिल कर छाती-फाटा मैदान को और भी भयंकर बना गया है। चारों ओर कहीं भी आर-पार नहीं लगता। मिट्टी से ले कर आसमान तक बस एक घुआँट, कुहासा। उसी कुहासे भरी शान्ति में काले-काले छोटे-छोटे उड़ते बिन्दु आकाश में धीरे-धीरे उतर आ रहे थे।

उतर रहे थे गिद्धों के झुण्ड।

□

तीन शून्य

कंकालावशिष्ट एक मूर्ति, छाती के हाड़ बस, चमड़े से ढके भर, क्षुधातुर अग्निगर्भ कोटरगत आँखें, भूरे-रुखे-उतझे केश, क्रोधित कुत्ते जैसी मुख-भंगिमा, चौड़े धुत्ते हुए ओठों के बीच तीक्ष्ण हिंस दो दाँत, हाथों में भी बड़े-बड़े हिंस तीक्ष्ण नख, गले में हड्डियों की माला, नगी देह, शमशान से उठा कर लाया गया सोहू से भरा हुआ एक धोयड़ा कमर पर लपेटा हुआ, हो-हो-हा-हा करता हुआ वह आया इस देश में।

दुर्मिश था वह। उस के अट्टहास से सारा देश सिहर उठा। उस के श्वास-अश्वास से धामु नीरस हो उठी। उस की जलती आँखों से सारा पानी सूख गया, उस के क्षुधार्त उदर को भरने में घरती माता के शस्य-भण्डार का कोप शून्य हो गया, इस के बाद उस ने मनुष्यों का खत-मोम ही अपने पेट में शोकना आरम्भ कर दिया।

भयार्त मनुष्य जन्मत पशुओं की तरह इधर-उधर भागने लगा। वह दुर्मिश अट्टहास करता, रुदन करता—हा अन्न ! हा अन्न !! मनुष्य भी भयभीत काँवर स्वर में रोते-रोते उसी दुर्मिश के ही स्वर को दुहता—हा अन्न ! हा अन्न !!

एक बहुत बड़े घनी का घर। घर के दरवाजे पर अन्नप्राप्ति भिक्षुकों की भीड़ जम गयी है। एक मुठ्ठी भात, पोड़ी सी दात, शाक-पात जैसा कुछ अयाध, बस यही दा

प्राप्य । दोपहरी के बाद, चार बजे बैठने का वक्त था । लेकिन ये सुबह से ही बैठे रहते । भूख के मारे अति कुलबुलाती रहती किन्तु मिलने की आशा में ही ये सन्तुष्ट हो कर बैठे रहते । कोई किसी के सिर में से जुएँ चीनता, कोई नावदान की ओर ताकता रहता—इसी ओर भात का माँड़ बढ़ता आयेगा । कोई गृहस्थ के घर से बिना भिक्षा के ही निराश सौटता ।

—दो-चार दाने लाई दोगी माँ—

—कौन है री ? कौन अभागिन है, जान द्या गयी ।

किसों का नौकर एक कुएँ से पानी काढ रहा था, दो छोटे बच्चे अपने हाथों में एक पुरवा लिये आ खड़े हुए ।

—जरा-सा पानी दो न जी !

—किस के घेते हो ?

—बमारों के

—कौन-कौन हैं तेरे ?

—यस माँ है बाबू, और कोई नहीं ।

—हूँ, कौन है तेरी माँ ? वही स्त्री जिन के गाल कटे हुए हैं ?

—हाँ, बाबू !

—भाग जा, हरामजादे !

दोनों बच्चे भयभीत हो कर एक-दूसरे की ओर ताकते हैं ।

नौकर पुरवा से जमीन पर धूक कर कहता है—हरामजादी को देखते ही देह गनगना उठती है ! भाग जाओ, भाग जाओ !

दोनों लड़के दर के मारे मरक आते हैं । साथ ही नौकर के मन में दया भी होनी है, वह पुकारता है—आओ, आओ, पानी से जाओ !

दोनों लड़के मिट्टी का पुरवा लिये फिर आ खड़े होते हैं । नौकर पानी ढाल देता है । उन बच्चों की प्यास साधारण तो नहीं, वैसी अगस्त्य की तृपा हो । इस के अतिरिक्त भूख भी तो है, डक-डक करते हुए पुरवे पर पुरवा पानी पी गये थे और खासी पेट पानी में भर कर उन दोनों ने कहा—आह !

नौकर ने मडाक करते हुए कहा—आओ, तुम दोनों के गले में रस्सी बाँध कर कुएँ में सटका दूँ, कुएँ में दिन-रात पानी पीते रहना ।

एक लड़का थोड़ा आगे बढ़ कर कहता है—आ रे आ, भाग आ, मारेगा ।

दूसरा भी भाग गया ।

उस ओर उन ककालो के दल में झगड़ा-झाँटी शुरू । नावदान में वह कर आये हुए माँड के लिए यह झगड़ा था । ऊँचे स्वरों में अश्लील-शुक्तिमय यावय-विनिमय अविराम गति से होने लगे ।

एक आदमी ने एक स्त्री की गरदन धर दबायी । उस स्त्री के तीन लड़के थे—किमी ने उस आदमी को दाँतों से काटना प्रारम्भ किया है, एक उसे दोनों हाथों से कस कर धपि हुए है और एक टूटी हुई ईंट उठा कर उसी से मार रहा है उसे ।

ये दोनों लड़के यह दृश्य देख ताली बजा कर नाचने लगे ।

उम तरफ एक लम्बे-चौड़े डील-डील वाला बूढ़ा, बँठे-बँठे अपने आप ही बक रहा था—मैं ने अपने जीवन में ऐमा राख-मात नहीं खाया है, या नहीं खाऊँगा । साले, भात बाँट रहे हैं, पुण्य कर रहे हैं—हूँ, धाक कर रहे हैं ।

एक अन्धी युद्धिया भगवान् की गाली दे रही थी । बिल्कुल उम ओर से मुवतियाँ धराद के पत्ते के दोने में पके हुए पीपल के गोदे या रही थी । मंपाल इसे घाते हैं, घाने पर दुर्गन्ध होती है पर घाया जा सकता है । एक मुवती काजरी गुन्दरी है ।

—अरे ओ, क्यों मारपीट कर रहे हो ? ओ, हरामजादा ! गुअर !!

—एक भममानुष रास्ता चलते-चलते ठमक कर रुक गया । रूँट या कर उम आदमी ने स्त्री का गला छोड़ बिल्ताना शुरू किया । उम ने स्त्री को बेहनाई और छुदगर्जों की शिकायत की । साप-ही-साप उम औरत ने भी रोना शुरू कर दिया ।

उन 'भममानुष' की नजर उस तरफ नहीं थी । वह देख रहा था उन बवान छोरियों को ।

दोनों तरणियाँ सज्जा के मारे पीछे जा कर बँटीं ।

उम भते आदमी ने धमका कर कहा—तुम लोग मार-पीट करोगे तो सभी को यहाँ से भगा दूँगा ।

मीन हून

अन्धो बुढ़िया बोली—हाँ बेटा, वही करो। ये आफ़त के परकाले कहीं-से-कहीं आ गये हैं ! भगा दो।

इस बार वह सभी से पूछ रहा था—तेरा घर ? तेरा घर ? तेरा घर ?

—अरी ओ, तुम दोनो का घर कहीं है ?

दोनों सड़कियाँ पीछे घूम कर ताकने लगीं।

—कहीं है घर ?

—साउगाँव, बाबू जी !—उन में से एक ने कहा।

—हूँ, यह तुम लोगों के कपड़े की क्या हासत है ?

इस बार वे दोनो कातर-करुण भाव से ताकने लगीं। उस भले आदमी ने एक गुड़ मुसकान के साथ कहा—दूँगा, कपड़ा भी दूँगा।

उन संघाल सड़कियों ने अपना घेहरा झुका लिया।

उस 'भले आदमी' ने पीछे ताका सो पाया कि सभी की आँखों में एक कुत्सित हँसी है। वह चला गया।

थोड़ी देर बाद वह फिर दिखाई पड़ा। एक आड़ वाली जगह में खड़ा हो कर वह उन दोनों सड़कियों की दृष्टि अपनी ओर आकर्षित कर रहा था। उस के हाथ में पुराने कपड़े की रंगीन किनारे की साड़ी थी। केवल अभाव की पूर्ति का साधन ही मन को नहीं भाँघता है, उस वस्तु का सौन्दर्य भी मन को सोलुप बनाता है, पथभ्रष्ट करता है।

दोनों सड़कियों की भडर भी उधर गयी थी लेकिन संकोच और भय के मारे उन का कलेजा काँप रहा था। बीच-बीच में वे सोलुप दृष्टि से उस की ओर ताक कर भी उधर नहीं बड़ पा रही थीं। आह, इतना गुस्से और चिक्ना कपड़ा है इन दोनों साड़ियों का और कितनी अच्छी किनारी है इन की।

—आ, आ, इधर आ।

अपनी आवाज़ में मिठास घोल कर उस आदमी ने इन सड़कियों को अपनी ओर बुलाया।

दोपहरी, वह भी ग्रीष्म की दोपहरी, आकाश से जैसे सगाठार आग बरस रही थी। पैर के नीचे धरती जैसे गरमी से फट जायेगी। मिछारियों

का दस एक हाण्ड में एक स्थान पर नहीं था। इधर-उधर जहाँ-तहाँ छाया
तने बँटा हुआ था, पेट उन का खाली था और उस भूख की थकान के कारण
जैसे वे इधर-उधर दुलक से पड़ते थे।

बार-बार इधर-उधर ताक कर एक लड़की आगे बढ़ आयी। उस
भले आदमी ने बहुत धीमे से कहा—यह ले, नयी साड़ी दूंगा, रुपया भी
दूंगा; समझी?

लड़की ने कुछ नहीं कहा।

फिर उस भले आदमी ने कहा—समझी?

लड़की ने गरदन हिलायी।

उस तरफ हल्सा-गुल्सा हो रहा था। भयंकर कोलाहल। जूठन
बैठने का समय हो गया था।

वह लड़की भी जल्दी से उधर चली गयी।

घोर अँधेरी रात।

जंगल में भेड़िये घूम रहे थे, सीलन भरी गलियों में मिट्टी पर निःशब्द
इधर-उधर साँप, बिच्छू, केंचुए घूम रहे थे।

इसी के बीच मनुष्य भी इधर-उधर घूमता था, ऐसे ही घुपचाप, दबे
पैरों से। अन्धकार, चारों तरफ अन्धकार। लेकिन सीधी दृष्टि अँधेरे को
पीर कर बहुत दूर तक जा रही थी। वही भला आदमी चारों ओर घूम
रहा था। उस के हाथ में एक बोना था।

कहाँ, किस तरफ? इसी जगह तो रहने की बात थी। कहाँ है?

एक टूटा-भूटा मकान, घर के सामने ही थोड़ी सी साफ जगह, उन के
बाद भी एक बँधा पाट। इसी पाट पर ही तो रहने की बात थी।

यहाँ कौन सो रहा है? निद्रा कौन सो रहा है?

सीधी दृष्टि से देखने पर पता लगा, वही जानी बुझिया है। यह कौन
गान रहा है घर में? कान लगा कर सुनने पर पता लगा कि कोई मर्द है।
फिर भी घर में घुस कर उस ने देखा, देखा तो पता लगा कि मर्द ही है।
कौन है, यह समझने की जरूरत नहीं थी।

कहाँ, कहाँ?

जगमगा साससा उस की छाती में उमड़ रही है, खड़े-खड़े वह घोषठा

है । उस के मस्तक पर आकाश में अगणित नक्षत्र झलमला रहे हैं । बीच-बीच में दो-एक तारे जैसे टूट भी रहे हैं ।

शायद उस बलिये के टूटे हुए घर में न हो ?

फिर सावधानी से वह आगे बढ़ता है । हाँ, आदमी की साँस का पता तो लगता है ।

आँखें जैसे जल उठती हैं, तीखी दृष्टि और भी तीक्ष्णतर हो उठती है ।

हाँ, यही तो है । ऐं ।

नहीं, यह नहीं है; हाँ, यही है ।

इस के बाद ?

वह लड़की डर के भारे चिल्ला उठी । लेकिन एक ही क्षण के बाद उस की चीत्कार बन्द हो गयी, उस के मुँह पर हाथ रख दिया उस ने ।

—घुप !

लड़की ने सारी शक्ति लगा कर रोका । लेकिन वह रोक नहीं पायी । जैसे उस का दम फुट गया, वह बेदम पड़ गयी ।

लड़की रोती थी । फक्क-फक्क कर । और कितना कारण था वह रोदन ! नीरव अन्धकार जैसे निश्वास ले रहा हो । आकाश में एक दिपता हुआ उज्ज्वल तारा टूट गया ।

—यह ले, अपना ले । रोती क्यों है ?

रात्रि के गहन अन्धकार में चाँदी के रुपये की चमक दीख पड़ी । लेकिन फिर भी वह रो रही थी ।

ओ, एक-एक, ए दोने में कुछ खाने का साया । यह ले । थोड़ी दूर पर चहारदीवारी के ऊपर बोना रखा हुआ था । उस ने सा कर उस दोने को उमे दे दिया ।

लड़की ने उसे हाथ से छू कर अनुभव किया कि यह क्या भीख है ।

वह आदमी घसा गया ।

लड़की ने बैठे-बैठे ही एक टुकड़ा अपने मुँह में डाला । अद्भुत स्वाद है । फिर एक टुकड़ा मुँह में डाला, फिर दूसरा टुकड़ा । इस के बाद उगी अन्धकार में दोने का सारा साया उस ने समाप्त कर दिया । अपनी बगल

मे मोयी हुई बहन तक को नहीं जगाया। वह बहन चुपचाप सो रही थी।

उसी अन्धकार भरी रात में वह भीषण कुत्सित स्वरूप वाला दुर्भिक्ष बंटे-बंटे मनुष्य के चाम की बही पर हड्डी की कलम से जमा-ग्रचं का हिमाव लिख रहा है। स्याही नहीं है, लाल स्याही स्रम हो गयी है, जो कुछ है उस का रंग पानी की तरह हो गया। चमड़े के ऊपर चीर-चीर कर लिखता है वह। उस के चेहरे पर बीभत्स हँसी है, हिंस्र आनन्द से उस के भयंकर दाँत थोड़े फँसे हुए हैं, उस की कुरूप नाक बँठी हुई है। दुर्भिक्ष पा यह।

उसे बहुत हिसाब करना है।

दूसरे दिन देखा गया, प्रातःकाल ही था वह, एक ककाल मात्र जीर्ण बूढ़ा की जीवित ही अवस्था में सियार खींच ले गये थे। प्रायः उसे आघात बे ग्रा चुके थे। सब से पहले उस की छाती के पांजर पर ये जुटे थे। बुढ़िया की आँखें मृत्यु के बाद भी फैली हुई थीं। आतंकित विस्फारित दृष्टि।

इस तरफ उस लड़की में बहुत परिवर्तन हुआ है।

उस के सिर के घास रुखे नहीं हैं, उस का पहनावा बदल गया है। बपड़े उम के टाट-बाट से भर गये हैं। उस के चेहरे पर अब उपवास के दुःख की छाप नहीं है। उम के हाँठों के कोनों पर अब जैंगे हँसी मिलती है।

लेकिन एक महीने के भीतर उस की देह अस्वस्थ हो उठी। जैंगे धारों ओर में उदामी आ रही हो। सारी देह में दर्द। कुछ भी अच्छा नहीं लगता और थोड़े ही दिन बाद उस की सारी देह पर छोटे-छोटे दाग उभर आये।

लड़की ने शक्ति दृष्टि से अपने अंगों की ओर देखा। अन्त में वह रो पड़ी।

रात्रि के अन्धकार में उस ने उस पुण्य से, जो उम का जीवन-देवता था, बिलपते हुए सब कहा।

उस ने आश्वासन दिया कि किसी तरह की बात नहीं है। दवा मा देपा यह।

मदारी उसी के भरोंसे बँठी हुई थी। रोड सोचती थी, आज आयेगा यह दवा मे कर और सारा रोग किसी जादू के प्रभाव से समाप्त हो आयेगा। सुबह उठ कर वह देखेगी कि उम की देह पहले की तरह सुन्दर

और चिकनो हो उठी है।

लेकिन कहाँ है वह ? वह नहीं आया। उसे छोड़ने पर भी नहीं पा सकी वह। और पाने पर ही वह क्या करेगी ? दिन की रोशनी में वह कैसी जगी हुई अपना दावा जतायेगी ? क्या वह दावा है उस का ? इस बल्पना से ही वह सिहर उठती थी।

कई एक दिन बाद। अब उसे गाँव में नहीं देखा जाता। वह अपने गाँव भाग गयी कि यहाँ शायद कोई देशी दवा काम देगी। तीन सात बाद उसे फिर देखा गया। लेकिन उसे पहचाना नहीं जा सकता था। दुमिश नहीं था अब, लेकिन उस की हड्डियों भरी देह, और सारी देह पर बस घाव-ही-घाव। घाव की दुर्गन्ध से आदमी की तो बाँझ ही गयी, जानवर को भी डरकाई आ जाती।

लड़की की गोद में एक बच्चा।

दुमिश का वरदान जैसे उस बच्चे को मिला है। दुमिश जैसा ही कुरूप बेहरा, उस के ऊपर सँगड़ा, पशु की तरह हाथ और पैरों के बल रेंग कर चलता। उस की आँखें धँसी हुई, लगातार उस में से पानी बहता हुआ। उस के मुँह में जैसे भाषा नहीं। बस केवल एक स्वर ही, उस के मुँह से लगातार लार टपकती रहती।

पशु की तरह चिल्ला कर वह अपनी माँ के स्तनों पर दाँत में आधात करता और रवतावत दुग्ध को पीता। उस के पेट में अकाम की भूख थी।

उस की माँ भी बेदना से बाँतर हो कर बच्चे को पीटती।

—अरी आँ औरत, ऐसे बच्चे की क्यों पीट रही है ?

लड़की चौंक उठी, उस का मुँहका प्रत्याघात से चमक उठा, उस ने धीमी आवाज में कहा—बाबू !

—ओह, हटो, हटो, हटो। क्या बदबू है !

—मुझे पहचान नहीं रहे हैं बाबू ! मैं...

—हरामजादी, निकल जा, मैं बहता हूँ। जा...

वह भला आदमी उसे सबमुच ही नहीं पहचान पाया। रोग ने उस औरत को ऐसा ही बना दिया था।

स्त्री ने केवल एक गहरी साँस ली। उस के मन में स्थाप देने की उम्मीद

भी नहीं है। वस एक शिथिल निराशा के कारण जैसे उस के
और भी डीने हो गये। जैसे चोट लगने पर वह कराह भी नहीं सकती।

और पन्द्रह माल बीत गये।

रोगग्रस्ता वह कुत्सित स्त्री बहुत पहले ही मर चुकी थी लेकिन ध्वंश
पशु की तरह वह लड़का बचा हुआ था। वह हाथ और पैरों के महारे रंग
कर चलता। उस के मुँह से सार टपकती रहती और आँखों में पानी।

ऐसा लगता था जैसे अपनी माँ के रक्त का विष वह उमल रहा है
और जो रदन उस की माँ के गले में फँसा ही रह गया था, यही रदन उस
की आँखों के पानी में यहता है। बीच-बीच में वह हँसता भी है। हाथ-
पैरों के बल चल कर वह गृहस्थों के दरवाजों के सामने जा कर बैठ जाता
और ओऊ-ओऊ-ऊँ-ऊँ कर के चीखता रहता है।

गृहस्थ हँसते और उस पर दया भी करते, एक दिन भी उसे उखास
नहीं करना पड़ता।

लड़के उसे कहते थे लगूर और बड़े लोग कहते थे सारू।

सारू इधर-उधर घूमता था। पशुओं के साथ खेलता था, बकरियों
और भेड़ों के बच्चों को पकड़ कर उन्हें मारता-पीटता, जब वे चिल्लाते
तो उन्हें मारता। जगलों में जा कर वह लगूरों को पकड़ने के लिए
घूमता।

भूय लगने पर वह गाँव में खला आता। गाँव की लड़कियाँ कहती—
सारू आया है?

वह वृत्तमता प्रकाशित कर के बस हँसता।

—सा रे, कुछ जूटन-ऊटन सा कर दे दे, सारू आया है।

सारू बड़े भक्तोप के साथ उसे घाता है। बीच-बीच में कुछ अकड़
लगने पर चिल्लाता आँ—आँ।

जो चीज को हाथ में ले कर दिया कर चिल्लाता और जब तक नहीं
पाता तब तक चिल्लाता रहता। वह यह नहीं जानता था कि उन का
चित्रना अधिकार है? यह भी हो सकता है कि वह पिन्ड छोड़ने वाला नहीं
था। लड़कियाँ हँसती।

कभी-कभी वह रात को पशुओं की चरन में खना जाता और नदियों में

कुछ खोजता। वह जानता था कि इन नौदों में सड़ा हुआ वासी भात मिलता है।

हठात् सारू पता नहीं कैसे हो उठा। भूख जैसे उस की कम हो गयी थी, वह अब जंगल में ही बैठा रहता है, दिन भर विमुग्ध हो कर पशुओं का खेल भी देखा करता, बीच-बीच में हाथ से तासी बजाने लगता। कभी-कभी एक विचित्र चंचलता और प्रचण्ड आवेग से वह धरती के वनस्पत पर लोट-पोट करता। कभी-कभी वह भीतल जल में आकण्ठ डूबा रहता। रात को जब कुछ दिछाई पड़ता तब वह गाँव में आता और भोजन छोजता, पशुओं के घर में और गृहस्थों के दरवाजों पर। उस दिन अग्निकार में वह आहार छोज रहा था। कहीं भी एक बण नहीं दिछाई पड़ा। सारू बैठा-बैठा मोचता। बीच-बीच में जैसे भूख की चिंगता समाप्त हो उठती। वह मिट्टी में लोटने-पोटने लगता। फिर थोड़ी देर बाद भूख की ज्वाला तताती और वह इधर-उधर घूमता। बन्द दरवाजों पर आघात करता—आँ, आँ, आँ। लेकिन गम्भीर निद्रा में मग्न था गाँव, कहीं में कोई उत्तर नहीं मिलता। सारू आगे बढ़ता जाता।

एक नाबदान। सारू उस के सामने ही बैठा सोच रहा था। इस के बाद उमी नाली में वह भीतर घुसने की चेष्टा करने लगा। उम की सारी देह—कट-कट गयी। फिर भी उस की चेष्टा नहीं थमी। अन्त में वह घर में घुस ही गया। सामने ही जूटे वर्तन रमे हुए थे। सारू आनन्द से उन्हीं को चाटता रहा। और कहीं? और कहीं? उस घर के दरमदे में गया वह। सामने के घर में हलका प्रकाश था। सारू दरवाजे के पाग जा घड़ा हुआ। दरवाजा नहीं खुलता। इस बार उस ने जोर लगा कर अपने निर से दरवाजे को ठोकर दिया। घर के भीतर की सिटकिनी टूट गयी। सारू घर के भीतर घुस गया।

हलके प्रकाश में चौदह-पन्द्रह साल की एक लड़की दिछाई पड़ी। लड़की निद्रामग्न थी, उम के अगल-बगल दो-तीन बच्चे। निश्चिन्त निद्रा के कारण उस की सारी देह का वस्त्र सिधिस हो कर जैसे उम के नान सोन्दर्य को उम के कोमल हलके प्रकाश में उद्दीप्त कर रहा था।

सारू के भीतर दुष्ठा का आवेग एक ही क्षण में समाप्त हो गया। जग

पड़ा एक प्रचंड, दुनिवार्य आवेग । उस के शरीर में एक अद्भुत परिवर्तन
दिखाई पड़ा ।

इस के बाद ?

फूल की तरह कोमल, पवित्र सड़की चीत्कार कर उठी । लेकिन सारू
ने जैसे उसे पीस कर रख दिया, उस की वाणी मूक हो गयी । सारू स्तब्ध,
जैसे उस के गले की आवाज सूख गयी हो ।

अदृश्य लोक में, विधाता के हाते में हिसाब के लेन-देन का अन्त एक
क्षण को भी नहीं होता । वहाँ जमा-खर्च का हिसाब चलता ही रहता है ।
उम दिन दोनों ही ओर एक पक्ति खींच कर जैसे समाप्त कर दिया गया
एक हिसाब । खत्म हुआ एक हिसाब ।

नीचे हाथ में लगे तीन शून्य ।

□

नहीं

आठ साल पहले जो हत्याकाण्ड हुआ था, उसी हत्याकाण्ड के निषेध का दिन था। नृशंस हत्याकाण्ड था यह। सन्धे आठ सालों के बाद आज अदालत बैठी थी। कस मुक्तक कासीनाथ की पत्नी ब्रजरानी की गवाही होगी।

ब्रजरानी सन्ध्या के अन्धकार में अपने घर के भीतर ध्यानस्थ-सी बैठी थी। हरदास बाबू कचहरी से लौट कर सीधे उसी के घर में घुसे और बोले—अरे ब्रज !

ब्रज ने कोई उत्तर नहीं दिया, केवल जिज्ञासा थी उस की दृष्टि में। उस अपने भाई की ओर ताका उस ने। हरदास बाबू बोले—कल तेरी गवाही का दिन है। पुरा अपना दिन सज्ज रहना। घत्सिक मैं तुम्हें सुबह एक बार इजहार अण्ठी तरह से समझा दूंगा।

हरदास ने और कोई बात नहीं की और वे चले गये।

अण्ठी तरह से सुना दूंगा। समझा दूंगा। ब्रजरानी एक गहरी साँस ले कर विचित्र तरह की हँसी हँगी। ओठों के कोनों पर क्षीण रेखाओं में वह हँसी पट्ट पड़ी। हँसी के साद-ही-गाय उस की बड़ी-बड़ी आँखें जैसे बन्द होती जा रही थी। उम के अंग-प्रत्यंग में जैसे बर्फ की शीतलता आ रही थी, विचित्र थी वह हँसी।

जिस तरह से मूर्तिपूजक छेनी और हथोड़ी के आधार पर मूर्ति गड़ना है ठीक वैसे ही ब्रजरानी के मन पर अकस्मिक है

वह मूर्ति, भला वह क्या मिटेगी !

अमागी कालीनाथ की विधवा पत्नी ब्रजरानी ।

ओह ! कितना भयानक था वह शब्द । जैसे मृत्यु की हुकारध्वनि थी । बार-बार । पहले हाथ टूटा था इस के बाद फिर, इसके बाद फिर, लगातार उस के पति की देह लहलुहान हो कर उस की आँखों के सामने गिर गयी ।

ब्रजरानी उस मूर्ति के स्मरण मात्र से ही आतंक से चौंक उठी, भय-भीत हो कर घर के बाहर निकल कर वह नीचे चली आयी । अपने पति की वह लहलुहान देह आज भी जैसे उसे डरा देती है । प्रायः रात की वह स्वप्न देखती है, चित्ला उठती है, उस की माँ उम के पास सोयी हुई रहती है, उस के शरीर पर माँ का हाथ अभय स्पर्श की तरह रहता है । उन हाथ की हथेली के आतंक से उम की निद्रा टूट जाती है ।

ब्रजरानी को भयभीत कदमों से आता देख कर माँ ने पूछा—क्या है री ? ऐसे क्यों... अपना प्रश्न बीच में ही छोड़ कर वह चुप हो गयी । उस के मन ने ही स्वयं उत्तर दे दिया ।

उम सरफ बरामदे में ब्रजरानी के भाई की बहू ने जैसे मुना-मुना कर कहा—मेरे बाप ने भी शायद ऐसा डर नहीं देखा होगा । आठ-दग साल हो गया लेकिन...

माँ ने डाँट कर गम्भीर स्वर में कहा—बहू !

लेकिन बहू ने मुँह बिराकर एक विविध तरह की गंगी में अना मनो-भार प्रकाशित कर के ही पिण्ड छोड़ा । माँ ब्रजरानी को अपने पाग बँटा कर उम के रुंगे बालों को गुलझाने लगी । पति की मृत्यु के परवान् ब्रजरानी ने आज तक अपने बालों में तेल नहीं डाला है ।

ब्रजरानी के बड़े भाई हरदाम बाबू आ कर घबरे हो गये—माँ !

माँ ने अपना मुँह उठा कर हरदाम की ओर देखा । हरदाम ने कहा—अम्मा, एक बात थी ।

—क्या बात है ?

—बरा उठ कर इधर आओ ।

—यहीं बोल न !

जरा सा इधर-उधर कर के हरदास ने कहा—बड़ी अच्छी बात है।
ब्रज को सुनना जरूरी है।

फिर जरा इधर-उधर कर के उन्होंने कहा—माँ, ब्रजरानी के छोटे-
ममेरे समुर और उन के समधी आये हैं मिलने के लिए।

ममेरे समुर ? ब्रजरानी के पति को जिस ने जान से मारा था उस के
पिता और उसी हत्याकारी के समुर ? ब्रजरानी की माँ की दोनों आँखें
जल उठी। ब्रजरानी जैसे चंचल हो कर अपने गिर के आंचल की ठीक करने
लगी जैसे उस के ममेरे समुर कहीं पास हो हो। माँ ने कहा—क्यों ? किस
के लिए ? क्या मतलब है उन का ? क्यों ये बार-बार आते हैं ?—और
क्रमशः माँ के गले का स्वर बढ़ता ही जा रहा था।

हरदास ने कहा—और भला क्या कहेंगे। वस वही बात है—भाफ़ी।
जो कुछ हुआ है उस के ऊपर उन का वश नहीं। अब वस सिर्फ दामा की
भीख चाहते हैं। किसी भी तरह से दामा चाहते हैं।

—दामा ? माँ की हँसी में व्यंग्य फूट पड़ा। इस के बाद उन्होंने कहा
—उन को तुम ने बाहर-ही-बाहर क्यों नहीं सीटा दिया ?

—वह क्या मैं ने नहीं कहा। माँ ! बार-बार मैं ने कहा। लेकिन मेरा
हाथ पकड़ कर ये पीछे पड़ गये। अन्त में वर पकड़ने पर उतर आये।

—तब जा कर उन से कह दो कि मेरी बेटी ब्रजरानी ने आज सम्भे
आठ सालों से अपने बालों में तेल नहीं लगाया है। वह केवल इसी दिन के
लिए, वह भला दामा कैसे करेगी ?

हरदास चुप रहे, फिर इधर-उधर कर के बोले—अम्मा, एक बात
और, मुझे कुछ बुरा मत समझना, मैं उन के साथ बचनबद्ध हूँ। समुर ने
कहा है—मेरी सड़की पर दया करनी होगी। जो कुछ हो गया है उसे तो
भगवान् भी आज पूरा नहीं कर सकते। लेकिन मनुष्य द्वारा जो कुछ सम्भव
है, जो कुछ किया जा सकता है उसे क्यों नहीं किया जाये ? ब्रजरानी का
भी भविष्य है, उस के सड़के को तो आदमी बनाना होगा...

माँ ने बीच में ही टोक कर कहा—यानी खया देना चाहते हैं ? यही
यात्र है न ?

धनुष की शोर में छूटे हुए वाद्य की तरह ब्रजरानी दूमरे ही शयन उठ-

कर पड़ी हो गयी। उस की बड़ी-बड़ी आँखों से जैसे आग की लपटें निकल पड़ीं। उम ने दृढ़ स्वर में कहा—नहीं।

इस के बाद धीरे-धीरे वह उस स्थान को छोड़ कर चली गयी।

अनन्त ममेरा भाई था; कालीनाथ उस के पिता की बहन का बेटा। कालीनाथ उम्र में कुछ बड़ा था। लेकिन यौवन काल में बीम और तीस की उम्र के बीच बिना किसी बाधा के मैत्री हो जाती है। और उन दोनों के बीच तो केवल चार साल का अन्तर था। इसी मैत्री के गठबन्धन से परस्पर स्नेहवत्त हो कर दोनों बन्धु एक होते जा रहे थे। भिनसार होते न होने अनन्त ने आकर पुकारा—काली भैया! बाप रे, कितना ताँने हो? उम के कंधे पर सनी हुई थी एक बन्दूक और उस की जेब में ये भरे हुए कारतूस।

कालीनाथ के उठ कर दरवाजा खोल देने के बाद ही वह धूलहे के पाम बैठ कर चूल्हा जलाने लगता। कालीनाथ तब अविवाहित था। भाई-बहन, माँ-बाप आदि कोई नहीं थे। घर के भीतर वे ही दोनों अपना मनमाना राज्य करते। कालीनाथ के हाथ-मुँह धोते-धोते अनन्त पाप तैयार कर लेता और दो प्यालियों में चाय डाल कर, पिछली रात के बारी मास की नारत के साथ खा-पी कर वे दोनों जगस की ओर खाना हो जाते। गाँव पार होते ही कालीनाथ अपनी जेब से चिलम और सिगरेट का मसाला तथा चाय ही कुछ दूसरी चीजें भी निकालता। अनन्त प्यासे की तरह कहता : जन्दी बाहर कर पार, इस के बगैर जम नहीं पाता, आज का निशाना ठीक नहीं बैठ पाता।

अनन्त बहुत कम पढ़ा-लिखा था, एक प्रकार से मूर्ख कहा जा सकता है उसे। कालीनाथ शिक्षित, विश्वविद्यालय की सर्वोच्च उपाधि में युक्त लेकिन आश्चर्य की बात थी यह कि वह भी इसी नशे का आदी था। बेवस बारी ही नहीं, इस विषय में अनन्त का गुरु भी वही था। उन दोनों की मैत्री का आधार-स्तंभ भी यह नशा ही था।

एक अम्याभाविक उत्तेजना से उत्तेजित हो कर अनन्त रिग्रेटर को पाल कर एक बारगी छह कारतूस भर कर कहता बस। चलो इस बार। लेकिन मेरा हाथ छटपटा रहा है—क्या मारूँ?

—चलो एक आदमी ही मार डालो ।

—अच्छा ठीक है, तुम खड़े हो जाओ । आदमी के बीच तो तुम्ही बस नजर आते हो । अनन्त बन्धु को पकड़ लेता । कालीनाथ डर के मारे चिल्ला कर कहता—अरे ! अरे, अनन्त देख यह सब भयांक ठीक नहीं है । यह तो साक्षात् यमदूत है, बस जरा-सा गोड-हाथ दवा कि यमराज का दरवाजा खुल गया ।

अनन्त ही-ही करते हुए बन्धु को लौटा लेता । कालीनाथ एक कुत्ते अथवा आकाश में उड़ती हुई चिड़िया को दिखा कर कहता—उस को मार न, भला मारने वाली चीज का अभाव है । अनन्त एक क्षण में बन्धु को उठा लेता । मैदान में जाते ही अपरिचित दोनों आदमियों की ओर देख कर भयभीत कुत्ता अपनी पूंछ को ओर भीतर की ओर लपेटता हुआ डर के मारे कूँ-कूँ करता हुआ धीरे-धीरे भागता । लेकिन अनन्त का निशाना अचूक था । दौड़ता हुआ प्राणी किमी न किसी अंग में चोट खा कर वही लोट सा जाता, और एक चीत्कार सुनाई पड़ता । कभी वह जानवर मर जाता, कभी वह अघमरा सा रहता । नहीं मरने पर कालीनाथ कहता—सा, बन्दूक मुझे दे दे । जरा एक बार मैं भी अपना हाथ बँटा लूँ ।

और थोड़ी दूर खड़े हो कर गोलियों के बाद गोली दाग कर वह उसे मार डालता और कहता—इसे ही कहने हैं कुत्ता मारना ।

—चुप ।

—क्या है ?

—तुम्हारे सिर पर डैनों की छटपटाहट नहीं सुनाई दे रही है, शायद हारिल उड़े जा रहे हैं । बस यही चुपचाप बैठ जाओ ।

दृग के बाद बन्दूक की आवाज, पक्षियों की भयात्त ध्वनि से छोटा सा गांव जैसे आलोकित हो उठता । दौड़ पड़ने बच्चों के शृंग, वे आ कर चिड़ियों का मरना देखने, और साथ ही साथ कारतून की दासी टोपी बीनने ।

एक साथ ही दोनों के विवाह का इम्तजाम हो रहा था । ब्रजगानी के पिता का वन सरकारी नौकरी का खानदान था । मरचारी नौकरी करने-करने काफ़ी धन इकट्ठा कर लिया था उन्होंने । वे लोग खोब रहे थे एक

प्रतिष्ठित घर की सन्तान। वे कलकत्ते के निकटवर्ती किसी पुराने जमींदार घर के आधुनिक ढंग के लड़के खोज रहे थे—जिस के पास विद्या भी हो और जो सम्य भी हो। विवाह कराने वाला अगुआ जो जगहों से दो बरों को खोज लाया। एक ओर में उम ने अनन्त को और दूसरी ओर से उस ने कालीनाथ को प्रस्तुत किया। अनन्त ने प्रसन्न हो कर कहा—भाई, मैं तुम्हारे लिए तुम्हारी बहू देखने जाऊंगा, और तुम मेरे लिए मेरी बहू ढूँढोगे।

कालीनाथ अनन्त की पीठ पर खोर से एक चपेटा मारता हुआ बोला—एक्सलेंट आइडिया। बहुत अच्छी बात है भाई !

ब्रजरानी को देख कर कालीनाथ मुग्ध हो गया। इस के बाद उस ने दो गुमनाम पत्र लिखे। ब्रजरानी के पिता को लिखा—बड़े आदमी का लड़का है अनन्त, इस में कोई सन्देह नहीं है, लेकिन वह नथोबाद आदमी है, और गंवार और जाहिल है। इस के अलावा हर तरह का नशा करता है यह और सब से बड़ी बात यह है कि वह बरिप्रहीन है।

इस के अलावा जहाँ उस का सम्बन्ध होने जा रहा था वहाँ उम ने लिखा कि कालीनाथ एम. ए. पास है लेकिन वह एक साधारण खानदान का लड़का है, उस के पिता सरकारी नौकरी जरूर करते रहे हैं, लेकिन उम के पास मध्यम श्रेणी के परिवार से बढ़ कर कुछ नहीं है। और इस के अलावा यह लड़का हीन स्वभाव का है। अपने बचपन में कई बार उस ने शोस्ती की किताबें पुरायी हैं। मैं ने आप को यह सब सूचना के लिए लिखा है, आप समझ-बूझ कर सब ठीक करेंगे।

इस के बाद अगुआ के कारण जो कुछ हुआ, वह बड़ा ही विचित्र हुआ। दोनों सम्बन्ध ही बदला-बदली हो गये। अगुए के अनुसार कालीनाथ की अवस्था अच्छी थी, मूल्य के रहने पर भत्ता चन्द्रमा को कौन देखा है, बने ही मामा का बस रहने पर भानजे की ओर कौन देखा है। नहीं तो मूल्य की जगह पर चन्द्रमा से ही काम चलता। अनन्त भने ही टिप्पणी बाना न हो लेकिन उस के पास क्या नहीं है। इस का परिणाम यह हुआ कि बार मोर बन्धा दोनों ही परिवर्तित हो कर विवाहित हुए।

मिट्टी के नीचे अँधेरे तले में पक्ष बाने दोमक रहने हैं। बीब-बीब ॥

रोमनी के लिए जब वे बाहर आते हैं तब वे पिचकारी की तरह जैसे किसी गड्ढे से बाहर निकल उठते हैं। इन पंख वाले दीमकों की शक्ति वैसे होती कम है लेकिन अहंकार इन का बड़ा विचित्र होता है। अनन्त के सगुर की अवस्था ठीक इन्हीं पंख वाले दीमकों जैसी थी। जमींदार घरानों की चोल को छोड़ कर जैसे ये इन्हीं दीमकों की तरह फरफरा कर उड़ रहे थे।

सुहागरात के ही दिन बहू ने प्रश्न किया—तुम्हारे पढ़ने-लिखने का घर शायद बाहर है ?

अनन्त ने शायद प्रश्न नहीं समझा। बहू के चेहरे की ओर ताक कर कहा—पढ़ने-लिखने का घर ?

बहू ने सज्जित भाव से अपने को सुधारते हुए कहा—तुम्हारी लाइब्रेरी की बात मैं पूछ रही हूँ।

लाइब्रेरी ? इस के बाद वह चुपचाप अपनी सरदन हिला कर बोला—देखो, वह सब लाइब्रेरी-लाइब्रेरी हमारे पास कुछ नहीं है। बस सरस्वती पूजा के दिन एक बकरा काटता हूँ और उसी दिन एक किताब की पूजा कर देता हूँ।

बहू को जैसे काठ मार गया। इस के बाद वह जो सीमी तो सीमी ही रही। वहाँ से हिली-डुली नहीं। अनन्त ने देखा—कि बहू रो रही है।

—क्यों रो रही हो ? क्या हुआ तुम्हें ? गुन रही हो ?—बहू निरुत्तर। अनन्त ने फिर पूछा—क्या हुआ तुम्हें ? अरे कुछ घबराती नहीं ? अरे रानी, चरा बीलों तो सही ?

—अरे भाई, क्यों जाने पर निमक छिटकते हो, तुम्हारे पैर पड़ती हूँ।

करना भरे स्वर में भी उदासीनता थी। अनन्त को जैसे एक थोड़ लगी। फिर भी अनन्त ने पूछा—हुआ क्या, मुझे बताओ न ?

—मेरे गिर में दर्द है। इस बार बहू ने अपनी नाराजगी और उदासीनता दोनों ही रणट कर दिये। अनन्त चौध से अनन्त पलंग से नीचे उतर आया और एक गियरेट जला कर जेबते के नीचे रखा हो गया। नीरव रात्रि, बेचल उन के मकान से चारों तरफ नारियलों की बतारें दीख रही थी और किसी नारियल के पेड़ पर बैठा हुआ एक उल्लू करकत स्वर में धिस्ता रहा था। अनन्त वहाँ से उठ आया।

माँ को जैसे काठ मार गया। लडकी के रुपये गले की ओर ध्यान दे कर वह बिलकुल निस्तब्ध हो उठी। लडकी ने कहा—बस मुयह-शाम वहेलिये की तरह चिड़िया मारता फिरता है। गुण्डे की तरह कभी इस को पीटता है, कभी उस को पीटता है; और इमे ही समझता है कि बड़ा इच्छत का काम है।

अनन्त गम्भीर भाव से बरामदे में बैठा था। सहगा उस का एक साला एक अँगरेजी की किताब सा कर रन्ध गया। उस ने कहा—जीजा जी, जरा यह समझा दीजिए।

अनन्त इस परदे के पीछे वाले खेत को नहीं जान रहा था। लेकिन एक छोटी सी साली ने आ कर एक अँगरेजी का अखबार ला कर उस के सामने फेंक दिया और पिलपिलाती हुई हँस कर बोली—जीजा जी, जरा पढ़ कर सुनाइए न।

एक क्षण के भीतर सब कुछ अनन्त की आँखों के सामने जैसे स्पष्ट हो गया। उस के सिर के भीतर की आँखें जल उठी, लेकिन कोई उपाय नहीं था। वह चुपचाप अपना सिर नीचे किये हुए बैठा रहा।

दिन में खाने-पीने के बाद जरा सा आराम करने के लिए घर दिया कर उस की साम ने कहा—बेटा एक बात कह रही थी। तुम्हारे स्वगुरु की इच्छा है कि तुम... उस की भी इच्छा है कि अब तुम बलकले रहो। मेरा बड़ा लडका यही बलकले में रहता है। कमकला मेरा मकान भी है यही पर तुम एक कर थोड़ी पढ़ाई-लिखाई करो।

अनन्त की इच्छा हुई कि वह खोर से बिस्ता कर बैठे—नहीं, नहीं। लेकिन वह ऐसा नहीं कर सका—चुपचाप नीची नजर करने बैठा रहा। उस की साम अनन्त की चुप्पी को स्वीकृति मान कर प्रमत्त हो कर चली गयी।

शाम को उस के स्वगुरु ने उसे बुला कर कहा—मैं ने एक बात तुम्हारे पिता को लिख दी है। इतनी कम उम्र में चुपचाप बैठे रहना ठीक नहीं। तुम तो जानते ही हो कि खाली दिमाग सैतान का घर होता है। कमकले में रह कर थोड़ा पढ़ो-लिखो।

अनन्त ने किसी बात का जवाब न दे कर चुपचाप धीरे से स्टेशन का

रास्ता लिया। उसका सरोमामान सब कुछ वहीं पड़ा रह गया। वह अपने पर आया और जैसे गुस्से में ही और नशा शुरू कर दिया।

एक दिन हठात् अनन्त के पिता गुस्से के मारे अपनी स्त्री से बोले— मैं अनन्त की शादी दूसरी जगह करूँगा। क्या छोटे आदमियों की लड़की है यह? लड़की का बाप हो कर साला हमें चिट्ठी लिखता है। जरा यह तो देखो। और यह भी लिखा है कि हम लोगों ने गंवार-अपठ लड़के की शादी कर देने के लिए कासीनाथ के विरोध में एक गुमनाम चिट्ठी लिख दिया था। तुम एक चिट्ठी लिख दो समझी महोदय को कि अगर अपनी लड़की यहाँ नहीं भिजवा देते हैं तो मैं अपने लड़के की शादी कर दूँगा।—वे चिट्ठी अपनी औरत के हाथ में दे कर क्रोध के मारे बाहर चले गये।

अनन्त वही पाग में ही था। सब कुछ उसने गुना था। उस के पिता जब बाहर चले गये तब वह चुपचाप माँ के कमरे में घुसा और झपट कर वह पत्र अपनी माँ के हाथ से छीन लिया। यही ही कड़वी भाषा में लिखा था—“और अन्त में यह भी लिखा था—“सबूत के लिए गुमनाम चिट्ठी भी हम के साथ भेज रहा हूँ। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यह पत्र आप लोगों के ही इशारे पर लिखा गया होगा।

गुमनाम पत्र पढ़ कर अनन्त जैसे चौंक उठा। यह क्या? यह तो किसी परिचित के हाथ की लिखावट लगती है। यह तो—“यह तो—“शत्रु के पत्र को माँ के परो के पास फेंक कर उस गुमनाम चिट्ठी को ले कर यह बाहर धौड़ पड़ा। एकाएक कासीनाथ के घर में आ कर उसने पुकारा— बानी भैया!

—कीन है रे, अन्नु! आ-आ।

अनन्त के आते ही कासीनाथ की पत्नी ब्रजरात्री ने झपट काड़ लिया और वह चली गयी। अनन्त ने देखा कि घर के चारों ओर जैसे लहमी का नाम है। सब कुछ जैसे हँस रहा है। हर चीज में जैसे एक छन्द है। क्या खिल्ला है!

बानीनाथ ने कहा—और तो गू आता ही नहीं।

—आने पर तुम बतलाओ, घुस हो या नहीं?

हा-हा कर के हँसता हुआ बानीनाथ ने उस बात का जवाब ही नहीं

या । अनन्त ने प्रश्न किया—तुम्हारी बहू गूत्र मुन्दर मिली है न ?
 बिना किसी भेद-भाव के कालीनाथ ने स्पष्ट कहा—रानी के गुण का
 वखान भला मैं क्या करूँ ? अनु देखना नहीं घर-द्वार को जैम स्वर्ग बना
 रखा है । तू भी जा कर इस बार अपनी बहू को सा न ।

अनन्त चुप हो गया । कालीनाथ ने कहा—इस बेला में कैसे आये ?
 अनन्त ने गुमनाम चिट्ठी को कालीनाथ के हाथ पर रखते हुए कहा—
 यह पत्र तुम्हें दिखाने के लिए लाया हूँ । दिखाने क्या तुम्हें देने ही आया
 हूँ । यह पत्र तुम रखो, मेरे शत्रुमुर ने मेरे पिताजी के पाग भेजा था । काली-
 नाथ का चेहरा एक क्षण में उन्नत गया । अनन्त ने और प्रतीक्षा नहीं की ।
 बाहर चला आया । लेकिन दरवाजे में बाहर जाते ही पीछे से बिम्बी ने
 गुफारा—देवर जी !

अनन्त ने पीछे ताक कर देखा—शत्रुरानी एक तख्तरी में खाने की
 चीजें ले कर गुला रही है । अनन्त जा नहीं सका और फिर लौट आया ।
 भाभी के हाथ का भोजन तो वह फेंक कर जा नहीं सकता । क्यों काली
 भइया ! भाभी जी तो स्वर्ग की देवी हैं, तब तो इन के हाथ की बनी चीजें
 अमृत होंगी ।
 कालीनाथ एक गूरी हँसी के साथ बोला—निरनय ही ।

अप्रत्याशित भाव से एक दिन अनन्त की पत्नी धा पड़ गयी । अनन्त
 के पिता ने जो चिट्ठी लिखी थी उस में बहू के साथ बुर नहीं रह गये ।
 वे स्वयं गृहकी की पढ़ाया आये ।

उस दिन पुरखान की टीम के साथ अनन्त की मंग देवने जाना था ।
 मुयह ही मुयह एकाएक बहू को बिना बुलाये हुए आता देख कर उस का
 मन प्रगल्भता से भाव उठा । उस ने टीक किया, आज वह मंग देवने गयी
 जायेगा । लेकिन वही उस टीम का सबसे अच्छा शूट धेक खिलाडी है, उस
 के बाद वह कैप्टन भी है । उस का मन पना नहीं बँगा-बँगा हो गया ।
 अन्त में उस ने निश्चय किया कि मेरा समायन होने ही पर टैक्नी में लौट
 आयेगा लेकिन टीम मोन का रास्ता कोई हँसी-मोग नहीं है । अगर टैक्नी
 न मिलनी तो माइकिन तो है ही । और रात के प्रेस में वह दाना ही
 नहीं ।

जयगायन

प्रगल्भता के मारे वह अपने सोने वाले कमरे में गया। उत की वह पीछे घूम कर पता नहीं क्या कर रही थी। अनन्त ने पीछे से आ कर उसे अपनी बाँहों में भर लिया। अनन्त को देख कर वह चकित हो उठी और उम ने जोर से अपने को छुड़ाते हुए कहा—छोड़ो-छोड़ो।

अनन्त ने हँस कर कहा—आधिर इतना प्रोथ क्यों ?

—प्रोथ नहीं है, लेकिन तुम छोड़ दो।

—याह, यह प्रोथ नहीं तो क्या है ? लेकिन मैं ने तो नहीं लिया था कि मैं शादी करूँगा। मेरे पिता ने लिखा है।

—मैं कहती हूँ छोड़ दो, कहती हूँ छोड़ दो। नहीं तो मैं बिल्लाऊँगी।

अनन्त ने अपनी पत्नी को छोड़ दिया लेकिन उन ने कहा—तुम्हारा ऐसा व्यवहार क्यों है ?

वह ने हम बात का कोई जवाब नहीं दिया, केवल प्रोथित आँखों से पति की ओर ताकती रही। अनन्त ने फिर कहा—वह देखो न बाली भइया की बहू है, कितना अच्छा भीठा व्यवहार है उस का। अपने पति की बितनी भक्ति करती है....!

उम के मुँह की बात जँगे छीन कर बहू खोल उठी—किंग के साथ तुम अपनी तुलना कर रहे हो, कहीं देवना और कहीं खंदर ! यह विद्वान् है....!

अनन्त वहाँ नहीं घड़ा रह सका। मनमनाता हुआ बाहर निकल गया। अपने हस्तक्षेप में जा कर उम ने पुकारा—निताई !

निताई गर्दन अपने दोस्तों के साथ थोड़ी-थोड़ी देनी ठर्राँ पी रहा था। अनन्त एकाएक दरवाजे को खोल कर बोला—हण्टर कहाँ है ? हण्टर को ने कर लौटते-नीटने उन ने कहा—देखूँ तो।

निताई कुछ गममा म गया—ओ हाँ ?

—अरे यार खोजन। और ऐसा कह कर गुद ही भागे दर दर बहू खोजन उम ने उठा लिया और उसे पी गया। बिना पानी की मारा उम की छाती के भीतर भाग की तरह मरट खँसी जल उठी। उन के मग्नक में धमि-गिलाएँ मपनपा उठी। इस के बाद वह भीतर जा कर अपनी पत्नी के सामने जा गड़ा हुआ और कहा—बना कह रही थी, अब बरा बराओ।

उम भयंकर रूप को देख कर उन की बहू को बाट मार गया। दूसरे

ही शराब की बदबू से जैसे वह अपना शान छो बैठी। बहू ने कहा—
तुम शराब पीते हो ? तुम पिम्बकड़ हो ?

—हाँ, पीता हूँ, शराब पीता हूँ, गाँजा पीता हूँ, धतूरा खाता हूँ।
तुम्हारे बाप के घरे से खाता हूँ।

अपने को भूल कर बहू ने क्रोध से कहा—पिम्बकड़, गेंवार, उजड़
कही के, निकल जाओ***।

लेकिन उम की बात बीच में ही रह गयी। हण्टर के आघात में वह
धीरे धीरे। हण्टर की रस्सी का दाग उस के कंधे से होना हुआ पूरी बांह
पर एक गहरा दाग डाल गया। अनन्त हाथ में ही हण्टर लिये हुए बाहर
चला आया।

फुटथॉल टीम से लौटते हुए रास्ते में उसे भूख लगी, वह उधर से ही
कालीनाथ के घर चला आया। उम ने पुकारा—काली भद्र्या।

कालीनाथ भी बाहर निकल रहा था, उस ने कहा—भरे तू, मैं तो
तेरे ही पास जा रहा था।

अनन्त ने कहा—वो रात में बाद में मुनूंगा, भाभी कहाँ है, भाभी ?

—तुम्हारी भाभी के ही दृष्य से तुम्हारे यहाँ जा रहा था। उन का
आज घत है और तुम्हें आज ब्राह्मण के रूप में स्वीकृत दिया है।

—ठीक है वह तो होगा। लेकिन अभी तो कुछ घाने को दो भाभी !

ब्रजरानी थोड़ी ही दूर पर खड़ी थी, उम ने कहा—यह क्या ? आज
तो तुम्हारी बहू आयी है***।

—बहू, भाभी, ये सब बातें रहने दीजिए। अब ये बनावो कि तुम
कुछ घाने को दोगी या नहीं, अगर तुम कहो कि नहीं तो फिर दूगरी जगह
जाऊँ। मुझे समय नहीं है। तुम्हारे पिता के शहर में मैं बस चलने जा रहा
हूँ।

ब्रजरानी घबड़ा कर एक बड़े घाल में घाने-पीने का सामान ले कर
आयी। कालीनाथ ने प्रश्न किया—लेकिन तुम सोटोगे सब ? परमो तो
तेरी भाभी का प्रश्न है।

भूख शान्त होने पर अनन्त भाव में ही अनन्त ने कहा—बस मुझ
सोट आऊँगा। परमों के लिए क्यों मोचने हो ? पर घत है क्या ?

सज्जित हो कर वज्ररानी ने अपना मिर नीचा कर लिया । फालीनाथ ने उत्तर दिया—मुहागिन रहने का व्रत यानी मेरे आगे ही मरने का पामपोट लेने की व्यवस्था कर रही हैं तुम्हारी भाभी ।

—याह ! औरतों की यह बात मुझे बहुत अच्छी लगती है । कानी भदया !

इन के बाद वज्ररानी के मुँह की ओर देख कर उम ने कहा—भाभी; स्वर्ग की देवी हो तुम ।

। सज्जिता वज्ररानी ने धाम को दूसरी ओर घूमा कर कहा—लेकिन मेरे पिता के ही घर जा कर तुम रहना, देवर जी ! नहीं तो मैं झगड़ा करूँगी । मेरा भी कुछ साम होगा, कुछ समाचार मिलेगा । बहुत दिन हुआ, कोई खोज-खबर नहीं लगी ।

मैच जीतने के बाद भी अनन्त का मन उदाग था । प्रभात की यह तित्क स्मृति उम के मन को भय रही थी । यह वज्ररानी के पिता के घर याहर घुपघाप निर्जीव की भाँति मो रहा था । वज्ररानी के अनुरोध के कारण ही उम ने यह आतिथ्य स्वीकार किया है । उम के दिल में लोगों की बहुत आपत्ति थी । उन लोगों ने कहा था—नहीं, नहीं भाई, यह भला नहीं हो सकता है ! हम लोगों ने मैच जीता है रात भर जाग कर गप-गप करने, हो-हल्ना करने । तुम कैप्टन हो, भला तुम्हारे न रहने में नहीं बनेगा ! हाथ जोड़ कर विनय के साथ अनन्त ने कहा—यह नहीं हो सकता भाई ! मैं ने भाभी को वचन दिया है ।

—अच्छा तो ठीक है, तब जरा पी कर जाओ । उन लोगों ने योगन और गितास बाहर निवाला पर जीम बाटने हुए अनन्त ने कहा—छि छि, भला ये कैसे हो सकता है ? परिवार पाने है, अपने सम्झणी हैं...

बार-बार अनन्त की आँखों में पानी आ गटा था । उन का मन उदाग हो गया था । वज्ररानी की माँ ने आने हो पूछा था—मेरी ब्रज तो ठीक है क्या ?

जन्दी से उठ कर अनन्त ने उन का पैर छूँ छूँ कहा—हा माया जी, भाभी अच्छी है ।

—मेरी ब्रज ने वहाँ नाम बमाया है कि नहीं ? तुम लोगों को छोड़-

छबर सेती तो है ?

अनन्त ने भीतर से प्रसन्न होते हुए कहा—इस युग में ऐसी सज्जियाँ नहीं होती। माता जी ! सती सावित्री के बारे में पढ़ा था लेकिन भाभी के भीतर उन दोनों को जैसे अपनी आँखों से देख लिया।

ब्रजराजी की माँ ने परम तृप्ति के साथ कहा—धुश रहो बेटा, भगवान तुम्हें लम्बी उम्र दे। दरअसल तुम लोग भी अच्छे हो, इसीलिए मेरी ब्रज भी तुम लोगों के बीच और अच्छी होती जा रही है।

इस के घोड़ी देर बाद एक कटोर में दूध ले कर उन्होंने प्रवेश किया और बोली—बेटा !

अनन्त मन ही मन अपने समुराल की तुलना इस के साथ कर रहा था। उस ने कोई जवाब नहीं दिया। उसे अच्छा नहीं लग रहा था। ब्रजराजी की माँ ने उस की घुण्ठी देख कर कहा—शायद खेल-कूद कर आया है, घुपचाप तो रहा है।

वे फिर बाहर चली गयी। घर के भीतर हरदास ने प्रश्न किया—सो गया है शायद ?

—हाँ, थक कर सो गया है, इसीलिए नहीं बुलाया।

—ओह, घुप भैसता है छोकरा। बहुत अच्छा रोमता है। बितना मुन्दर स्वास्थ्य है ! बहुत अच्छा लड़का है।

माँ ने भी बड़ी लागीरु की ओर बताया कि ब्रजराजी की प्रशंसा करता है। इस का मतलब यह हुआ कि अच्छे गानदान का लड़का है। वह पत्र शायद किसी ने जमन के बारे में लिखा था। विषकट, नशाघोर, परिजहीन, गंवार आदि। देखने पर तो ऐसा नहीं लगता। मूँह गं रा है रे ?

—हाँ, हैन रहा हूँ।

—बसो हैन रहा है, क्या ?

—वह बिट्टी काशीनाथ के हाथ की सिंघी हुई थी। काशीनाथ की दम गमय की सिंघी हुई बिट्टियों के साथ मिला कर देया है। ब्रज की देखने वह आया था। उस को बहुत पसन्द आये थो, इसीलिए उस ने ऐसा किया था।

—तो मेरे ब्रज की अच्छी तपस्या थी वह। कालीनाथ के रूप में, गुण में सकलें दामाद के भीतर एक दामाद है। ब्रजरानी को कितना प्यार करता है वो !

अनन्त का मस्तक भीतर में झनझना उठा। रात के अन्तिम पहर में उस ने निश्चय किया वह जरूर पड़ेगा-लिखेगा। वह जीवन में प्रशंसा चाहता है, शान्ति चाहता है। अपने अन्तःकरण से उस ने कालीनाथ को शमा कर दिया। ब्रजरानी को बार-बार उस ने मन ही मन आशीर्वाद दिया—तुम बिर सुखी होओ, आयुष्मती होओ !

लेकिन घर आने ही सब कुछ जैसे गड़बड़ हो गया। उस के पिता ने प्रोष्ठ में कहा—मैं तेरा मुँह नहीं देखना चाहता। तू मेरे वश के लिए कलक है, तेरे ही लिए इतने बड़े वश की मर्यादा गयी, तू मर क्यों नहीं गया ?

कल ही अनन्त की बहू जिस आदमी के साथ आयी थी, उसी आदमी के साथ अपने माँह के धापस चली गयी थी। गिडगिड़ाने के बाबजूद भी अन्त में बहू ने पुलिस की महायता लेने की जब बात की तब ये सोच चुपचाप उस का रास्ता छोड़ने को तैयार हो गये। बहू ने जो कुछ कड़ी बातें कही थी, उस के तीरे घन में अभी भी अन्त की माँ के आँसू गूँथ नहीं पाये थे। अनन्त का सब कुछ जैसे गड़बड़ा जा रहा था। फिर भी उस ने दृढ़ता के साथ कहा—मैं जा रहा हूँ।

—कहाँ ?

—अपनी समुरात।

उस की माँ चिल्ला उठी—नहीं, नहीं।

—डरने की बात नहीं है माँ, मैं अपने स्वमुर का पैर पकड़ कर गिडगिड़ाऊँगा।

वह बाहर चला गया अपने उन्ही कपड़ों में बिना श्रावे-रिदे। माँ उस के पीछे आकर भी अशक्त के मारे नहीं बिन्ना गयी, पीछे में पुकारने पर अपशक्त माना जाता है न ?

अपनी समुरात जा कर उस ने तबमुख ही अपने स्वमुर के दोनों पैरों को पकड़ लिया। लेकिन उस के स्वमुर एक ही दान बाद अपने दोनों पैरों

को घीब कर वहाँ से चले गये। अनन्त वहाँ चुपचाप छड़ा रहा। अकस्मात् दर्द के मारे जैसे वह चौंक उठा—उस ने देखा कि हाथ में हण्टर उठाये हुए उस के श्वसुर लाल आँखों से उस की ओर ताक रहे हैं। अनन्त इस बार वहाँ स्थिर खड़ा रहा, हण्टर की रस्मी बार-बार उस की देह पर सपाक-सपाक पड़ने लगी। उस के मारे वस्त्र चिमड़े हो गये, और धून में सन गये।

—निकल जाओ, अभी निकल जाओ मेरे घर से।

अनन्त चुपचाप खड़ा रहा। अपने हाथ का हण्टर फेंक कर उस के श्वसुर ने आवाज दी—दरवान, निकाल दो इस को। वे वहाँ से चले गये।

दरवान के आते ही अनन्त चुपचाप जल्दी से बंदम बढ़ाता हुआ वहाँ से चल दिया।

उस के मस्तक में आग की लपटें जल उठीं, उस का सारा संबल टूट गया। उस ने स्थिर किया कि घर से जा कर वह रिवाल्वर लाये और इस घमण्डी आदमी को मार डाले और फिर अपनी आत्महत्या कर डाले। अपने घर के स्टेशन के पास उतर कर उस ने देखा कि उग के आदमी पालकी से कर प्रतीक्षा कर रहे हैं। सोगो ने गमझा था कि घटू को ले कर ही यह सोटेगा। घर का मुन्शी आगे बड़ कर बोला—बटू...

—नहीं आयी।

—यह क्या छोटे बाबू! आप की मारी देह!—मुन्शी काँप उठा।

अनन्त जल्दी से स्टेशन छोड़ कर मैदान की तरफ चल पड़ा।

एक भीतरी रास्ते से ऊपर जा कर उस ने अपना रिवाल्वर गोजा। थोड़ी देर के ही भीतर उस के मन में यह छया आया कि श्वसुर को मारने में क्या होगा? अपनी बेटी के बिछवा होने का कष्ट फिर कौन भोगेगा। बार-बार उस के मन ने कहा—यही ठीक है। उस ने अपना रिपीटर उठा लिया। उस ने देखा—कई कारतूम उस में भरे हुए थे।

—घर में, इसी घर में? नहीं, अगर किसी तरह में वहाँ मैं मरन नहीं हो सका तो फिर कोई उपाय नहीं रह जायेगा, बिम्बी एकान्त जगह में। आत्महत्या का मकसद ले कर वह अपनी बन्दूक हाथ में लिये हुए घुसपार

बाहर चल पड़ा। पागलों की तरह घला जा रहा था वह। उसे यह ध्यात नहीं रहा कि यह किछर जा रहा है।

—अनु ! अनु !!

कालीनाथ के घर के जंगले के पाग अनन्त की प्रतीक्षा में यतचारिणी प्रजरानी खड़ी थी। कालीनाथ ने कम पानी पिया था, पानी पी कर ही वह अनन्त को बुलाने जाने वाला था। उस तरफ घत की मामूली रछी हुई थी। प्रजरानी ने देखा कि अनन्त हाथ में बन्दूक लिये जा रहा है।—अरे देखनी हो, अनु देवर जी रास्ते पर चले जा रहे हैं।

कालीनाथ ने पुकारा—अनु ! अनु !! अनु !!!

—कौन ? कालीनाथ ? अनन्त के मन्त्रक में जैसे आग की लपटों पर किनी ने धी डाल दिया हो। लपटें जैसे और भी घट गयीं कालीनाथ ! उस के जीवन का दुष्ट वह—उम के ही मुख को छीन कर परम गुग्गी कालीनाथ ! कालीनाथ !! फिर कालीनाथ !!! कम के जीवन का गमी कालीनाथ ! वह भला अबेला कहाँ जायेगा ?

अनन्त सौट पड़ा और खुले दरवाजे के भीतर आ कर बोला—अरे !

हो-हो कर के हमने हुए कालीनाथ ने कहा—आते ही हाथ में बन्दूक ?

—कुत्ते का मारना तुम्हें याद पड़ता है न ? जैसे ही मैं तुम्हें मारूँगा।

माथ ही माथ उस ने बन्दूक मीठी कर ली। प्रजरानी ने एक चीज भरी। कालीनाथ ने डर के मारे बन्दूक की नली पकड़ कर दूगरी ओर मोड़ने की चेष्टा की और वह चिन्ता उठा—अनु, मुझे माफ़ करो, क्षमा... लेकिन भीषण गर्जन के साथ मूगनु टूटकर दे उठी। कालीनाथ ने त्रिग हाथ में बन्दूक की नली को पकड़ा था वह हाथ टूट गया। प्रजरानी ने कालीनाथ को धोर में गीच कर पुकारा—देवर !

फिर बन्दूक गरज उठी। कालीनाथ नीचे गिर गया था, लेकिन तब भी वह जीवित था, फिर एक गोली। कालीनाथ का शरीर बिलकुल अचल हो गया।

अनन्त जल्दी से गाँव को पार कर रहा हुआ एक मैदान में आ कर खड़ा हुआ। इन के बाद एक स्थान पर खड़ा हो कर उन ने बन्दूक की नली अपने

मुंह में डाल कर अपने पैर से घोंडे को धीब दिया। बस केवल घट-सी आवाज हुई, यह क्या ! बन्दूक को हाथ में ले कर उम ने देखा, उम में कारतूस नहीं थे। तीन ही कारतूस थे बस, वे तो सब खरब हो गये। खर, रस्मी तो है। अपने कपड़े को फाड़ कर वह रस्मी बना लेगा। दूसरे ही क्षण वह डर के मारे बन्दूक फेंक कर वहाँ से भागा। जैसे मृग्यु की भयंकर मूर्ति... कालीनाथ की सहस्रसुहान विकृत मूर्ति फाँसी की डोरी हाथ में लिपे हुए उम की ओर बसी आ रही थी। वह प्राण हथेली पर ले कर भागा।

दस दिन बाद वह बगाल के बाहर एक पहाड़ी प्रदेश में पकड़ लिया गया। उस समय वह जैसे पागल-सा हो गया था। आठ साल बाद वह पगला जेल में रहने के बाद जैसे कुछ ठीक हुआ हो, आज अदालत में उसी का कैमला था। कल बजरानी की गवाही है।

आज आठ साल बजरानी ने लगातार अजीब पालन किया है। बिना तेल लगाये नहाना, अपने ही हाथ से पकाया हुआ भोजन और मिट्टी पर सोना... यह सब दूमी दिन की प्रतीक्षा के लिए तैयार किया है बजरानी ने।

माँ ने हरदाम से कहा—मैं ने सब समझ लिया बेटा, तीन पहर रात तो बीत गयी। एक-एक कर के अनन्त की माँ और उम की घूँस गयी तो आयी लेकिन योंही तो क्या उपाय है, वह तो कोई बात नहीं सुनती, जा कर तू ही देख आ। चुपचाप आँखें बन्द कर के पड़ी हुई है, दोबार के सहारे बीच-बीच में उस की आँखों में आँसू गिर रहे हैं। यह तो आँखें गोल कर टाकती भी नहीं। नहीं तो जो होना था वह तो होना ही, उम के लड़के का एक भविष्य तो है !

कालीनाथ की मृग्यु के समय बजरानी गर्भवती थी। एक पुत्र दूमी के बीच उम मिला था। हरदाम बाबू स्वयं जा कर बोले—ब्रज !

आँखें बिना खोले ही उम ने कहा—नहीं !

—अरे बात तो सुनो !

—नहीं,

माँ ने भा बह कहा—दम बार घोड़ा मो ने नू, ब्रज !

पोरु कर ब्रज ने कहा—नहीं !

मोने ही बही भयंकर मूर्ति ब्रज के सामने आ गयी होगी।

माँ ने कहा—मैं तेरे शरीर पर अपना हाथ रखे रहूँगी ।
—नहीं ।

अदालत में ठमाठम भीड़ है । बजरानी की गवाही सुनने के लिए जैसे आज भीड़ उमड़ रही है । बजरानी गम्भीर चास से गवाही के लिए कठपरे में आ कर खड़ी हुई ।

उन के गामने वाले कठपरे में एक आदमी खड़ा था—सफेद बाल, जीर्ण-शीर्ण झुर्रीदार चेहरे, बाँयें जैसे कण्ठा में बिह्वल, हाथ जोड़ कर बस पड़ा है । उस बिह्वल दृष्टि को देख कर जैसे बजरानी स्वयं से ही प्रश्न करने लगी । उत्तर जैसे अति परिचित है और अत्यन्त निबट है पर वह उसे धोख नहीं पा रही थी । बजरानी आश्चर्यचकित थी । मामने वाले उस व्यक्ति में तो वह बलवान्, घमण्डी युवक को नहीं देख पा रही थी ? कहाँ है वह ? यह क्या वही आदमी है ? नहीं, नहीं, यह वह नहीं है, हो नहीं सकता यह । जैसे उस के मन में एक प्रथम आशय उमड़ आया और उस ने बजरानी को अपने में खपेट दिया । वह धर-धर काँसने लगी । उस की दोनों बाँयें भर उठीं । अकस्मात् उस जीर्ण-शीर्ण हतभाग मनुष्य को बजरानी ने अपनी स्मृति में देखा—परम सुगंध दृष्टि से गम्भीर श्रद्धा महिन वह उस की ओर देख रहा था और बार-बार जैसे अपनी गरदन झिंझा कर वह कह रहा है—देवी, देवी, तुम स्वर्ण की देवी हो । तुम मेरी भाभी हो ।

बजरानी की बाँयाँ ने आँसू टपकने लगे । बरना और मनता ने वह तबमुख देवी हो उठी हो ।

गरवारी बकील ने बजरानी को मानवना देते हुए कहा—अब रो कर बना बरोगी बेटी ! अब विचार की प्रापना करो, जिन से उचित न्याय हो, उस के लिए तुम अपनी गवाही दो ।

जैसे गारी पृथ्वी की दीनता, पुंजीभूत हीनता, वह जीर्ण-शीर्ण, पृथ्व, हतभाग यह व्यक्ति, इसी व्यक्ति को रूत में पानी दे कर मटका देना बना न्याय है ? यह किस के बिरुद्ध न्याय है ? बजरानी का मस्तक जैसे झुन्न हो उठा । गरवारी बकील ने झिंझा मुँह की । उस तरफ़ भीड़ में कुछ आवाजें सुनाई पड़ी ।

—उसे पानी नहीं, दण्ड की दोली में मारना चाहिए ।

बजरानी की आँखों में आँसू आ गये। उस ने चारों ओर देखा, सारे आदमी क्रूर भाव से क्रोधित दृष्टि से उस हतमागे की ओर ताक रहे हैं। गम्भीर स्वर में व्यायाधीश ने अँगरेजी में कुछ कहा, अर्थ नहीं समझने पर भी बजरानी ने जैसे उस शब्द की कठिनता अनुभव की।

अदालत के अदंसी ने बार-बार चिल्लाना शुरू किया—धुपचाप रहिए, आहिस्ते !

—इस आदमी की ओर देखिए। इस के चेहरे में परिवर्तन जरूर हुआ है। क्या इसी अनन्त ने आप के पति को बन्दूक से मारा था ?—सरकारी वकील ने प्रश्न किया।

बजरानी की अन्तरात्मा ने जैसे प्रतिवाद किया और उसी प्रतिवाद की प्रतिध्वनि जनता ने चौंक कर सुनी—नहीं।

इस के बाद वक्त सक्षिप्त कुछ और जिरह।

बजरानी जैसे स्वप्नाहत अवस्था में ही घर सीटी, उम के हृदय में एक प्रगाढ़ शांति थी, उम का शरीर, उस का मन, उस का प्राण जैसे सब कुछ हलका हो गया था। उस के माथे पे हरिदास यादू, उन्होंने कहा—तेरे साथ मामा स्वमुर एक बार मिलना चाहते हैं। एक बार उन से मिल ले ब्रज ! वे जो कुछ देना चाह रहे थे, उमे ले ले। भविष्य में काम देगा***।

बजरानी ने कहा—नहीं।

उम के घर के भीतर इन बात को ले कर जैसे चारों ओर गीरगुन था। ब्रज की माँ तक अपनी बेटा की इस भूर्जता की आलोचना कर रही थी। उन्होंने कहा कि तुम्हीं एक बार जाओ न हरदाम ! उस का नाम उम ने कर के। वह क्यों नहीं ?

राध्या के अग्रकार पे बजरानी मेटी हुई, जैसे वह बच भी गयी थी। माँ उमे देख कर नाराज भी हो गयी और बोली—अभी स्वप्न में पिन्मा उठेगी। अरे ब्रज ! अरे ओ ब्रज !! आ-आ, धमो आ नीचे सोयेगी, यहाँ अकेले तू नहीं सो गयेगी। डर जायेगी तू।

ब्रज ने अपनी निद्रायम आँखों को खोल कर कहा—नहीं।

इस के बाद वह गम्भीर निद्रा में डूब गयी।

पुत्रेष्टि

रामचन्द्रपुर के उत्तरपाड़ा के बन्धोपाध्याय बस के मँसते मासिक दालान में बँट्टे हुए गुच्छ गोबर रहें थे । हठात् उन्हें जैसे कुछ बाद हो उठा—घट से एक गुच्छा मूँछें घीब बर उपाड ली उन्होंने । बोले—बेटा, तुम दूध की मलाई पाओगे । और फिर एक गुच्छा, फिर दूसरा गुच्छा ! लेकिन दम बार उन्हें शान्त होना पडा । मूँछों के दोनों ओर हाथों में सहसाते-सहसाते बोले—ओह ! दम के बाद कुछ गोबर-ममस कर जैसे उन्होंने स्वयं ही प्रश्न किया—भिर तो गंजा हो जाता है पर मूँछें क्यों नहीं गंजी होती ? इसी समय दरवाजे पर पटपटाहट हुई । दुवसा-पतला एक लम्बा बूझा आदमी दरवाजे के सामने ही अपनी चप्पलें उतार कर, एक बटून बडा हूबरा हाथ में लिये घर में घुसा । उस आदमी की आँखों पर एक विशेष प्रकार का मोटे शीशे कासा पहना था । पहने की दोनों शीटियाँ नहीं थी, उन की जगह पर मून लगा हुआ था, जिसे बानों के पीछे बाँधा गया था । घर में घुसने ही बूँछे ने अपनी शीघ्र दृष्टि में अच्छी तरह घर की देखा फिर दरदन हितायी उम ने । अच्छी तरह से मँसने मानिक को पदपान कर लुबने हुए प्रणाम कर उम ने कहा—दासभायी ! मैं तमायूं पीये ! माद-ही-माप आदर के माप उन के सामने हुका बडा दिया । हुक्के में दो-तीन बस घीब बर मँसते मासिक ने कहा—अच्छा, जरा बसा तो बसा बिया जाये, ओ रे सन ?

राय ने उत्तर दिया—जी, बाजार का खर्चें दें।

राय इस घर में बहुत दिनों का पुराना नौकर है। पैंरों में फटी हुई एक जोड़ा चट्टियाँ, आँखों पर चरमा पहने हुए राय को यहाँ बच्चे-बूढ़े-स्त्री सभी जानते हैं। मैसले मालिक ने कहा—हूँ, तो देख-भास कर बाजार में चीज लेते आओ।

इधर-उधर देख कर राय ने अपने अभ्यास की भाँति धीरे-धीरे कहा—पेट पर तो रुपये फलते नहीं कि हिला साज्जें और मँदान में भी नहीं पडा हुआ है कि चुन साज्जें—दुकान पर तो दाम सनेगा न !

ऊपर के होठ फुला कर नीचे की ओर अपनी मूँछों को साँपने हुए मैसले मालिक अपने में ही डूबे रहें। राय ने फिर कहा—जी, खर्चा दें।

मैसले मालिक ने हुबरा रख दिया जोर से, प्रोधपूर्वक बोले—खर्च ? कैसा खर्च ?

राय दबा नहीं, उस ने उसी तरह सपाक से कहा—जी, बाजार का खर्चें।

नाराज चेहरे से मालिक बोले—कितना ?

राय ने भी जवाब दिया—वह तो आदिकाल से हिगाय किया ही हुआ है। आठ आना ! पहने या नौ आना—आठ आना कर दिना आप ने। वही सायें।

मैसले मालिक ने अपनी टेंट में छह आने पैमे राय के हाथ पर रखते हुए कहा—हाँ, यह सों।

उस कर्द आने पैमे की थगमे के पास में जा कर राय ने देगा-बरगा फिर कहा—यह भला पैमे होगा ? हिगाव के पैमे तो कम करने में नहीं चलेगा। इस छह आने में भया कैमे चलेगा ?

मैसले मालिक ने कहा—उतने ही से हो जायेगा, उरा गमा-बुश कर खर्च करना।

खीची पर उन छह आने पैमों को रखते हुए राय ने कहा—तब मुग में नहीं हो गयेगा यह। जो इसे कर सके, उम ही भेज दें, मैं तो बूढ़ानों में बह दूँ, घन मेरा काम खग्य।

इस के साथ ही वह घूम पड़ा। मँझले मालिक ने शीघ्रता से कहा—
 'मैं कहता हूँ, सुनो, जरा सुनो। यह सो...ऐसा कह कर घोती के फेंटे के
 गुँट में दकन्नी बाहर निकाल लो। राय से उन्होंने कहा—'बच्चे-बच्चे कुछ
 भी नहीं हैं, इतना खर्च क्यों आखिर ? यह लो मात आने पैंग लो—इसी
 में सब कुछ निपटा लो। मुझे मत परेशान करो अब।

राय ने तब भी पैसा नहीं लिया। उस ने कहना शुरू किया—मेरी ही
 मोत नहीं है। मँझले मालिक ! मैं भ्रमा क्या करूँ ? आप इधर खर्चा नहीं
 देंगे, उधर चीजें अगर कम हो जायें तो बहुरानी मुझी पर फट पड़ेंगी।
 तीन-तीन चीजें मैं कम खरीदूँ। आप ही बताइए न ?

मँझले मालिक बोले—तुम बहुत बकबक करते हो राय जी ! यह लो।
 इस बार उन्होंने अपनी घोती के दूसरे गुँट में बार पैंगे बाहर निकाले,
 उस में से तीन पैंगे राय की हथेली पर रख कर बोले—और नहीं है मेरे
 पास, और मैं नहीं दे सकता। ऐसा कह कर राय की ओर पीठ कर के वे
 बैठ गये।

राय ने इस बार लक्ष्मट नहीं की। पीने आठ आना से कर ही फिर
 एक बार प्रणाम करता हुआ बाहर चला गया। राय के बाहर जाने की
 आवाज उस के पप्पलो की होल धीमी-धीमी दरनि से पना मग गयी थी।
 मँझले मालिक ने अपनी हथेली का एक पैंग और दुआना में मुट्ठी में बन्द
 कर लिया। और बोले कि, यह पैंग मैं किसी को नहीं दूँगा। इस के बाद
 वे घर के भीतर चले गये और तब वे उस टुकड़े को मजूरों में डाल भाये,
 यही उन का स्वभाव है। आज बारह मास से वे मजदूरों की मजदूरी के रूप
 पैंग बचाने के फेर में हैं। रोजाना के खर्च में वे अगर बड़ी एक पैंग खर्च
 जाता है तो वे बचाते और इस बचाये हुए को वे खर्च नहीं करते। इसी
 निम-मित्त कर संचित राशि का एक पचस जेने जम गया है, अगर पचस
 नहीं तो उसे खून लो कहा ही जा सकता है। सोच रहने ? कि यन्त्रों
 खानदान के उस छात्रा जाने मालिक की यह बर्माई है। दोष-बोध में वे
 बाँटें मँझले मालिक के बानों में आती है, मँझले के बुर गये ?।

दामान के बाद ही अंदले में खम्भे वाली एक इमारत है। उनसे
 दूसरी तरफ़ टाकुर का घर और मादय-मन्दिर है। और उसी के बाद उस

जमाने की पक्की इमारत है। मँझले मालिक नाट्य-मन्दिर को पार करके भीतर गये। इस समय घर तीन हिस्सों में बँट गया है। उत्तर की तरफ वाला अग बीच से बाँट दिया गया है। उन के दो तल्ले वाले मोने के कमरे की छाट के तिरहाने पर एक सन्दूक है, जिसमें सिन्दूर से स्वस्तिक चिह्न अंकित किया हुआ है। सन्दूक छोल कर मँझले मालिक ने टाट के बने हुए एक बहुत बड़े मोने में वह पैसे डाल लिये। उभी सन्दूक में काठ के दो छोटे-छोटे बक्स हैं। एक बक्स में इमारत की आमदनी का खपया रहता है और दूसरी तरफ़ मूद के खपयों के कार-बार का मोना-चाँदी और गहने आदि। बन्धक का भी व्यापार होता है इस बँश में। सगति की ओर ताक कर उन के होठों पर हँसी फूट पड़ी। एक बार उस टाट के धँले को छोल कर उन्होंने अनुमान लगाना चाहा। थैला काफी भारी हो गया था। हो नकता है कि बीस सेर या पचीस सेर रहा हो। लेकिन बीच में ही मँझसी मालकिन ने आवाज दी—यह क्या हो रहा है?

उन की गोद में एक दूसरा दुबला-पतला शिशु था।

धँले को रघ कर जल्दी से सन्दूक का ताला बन्द कर के मँझले मालिक हड़बड़ा से उठे। मँझसी मालकिन ने हँस कर कहा—कोई डर की बात नहीं, मैं खपये-वैसे लेने नहीं आयी हूँ। तुम धीरे-धीरे मझे में सन्दूक बन्द करो।

मँझले मालिक ने जैसे बीच में ही कट कर कहा—ती, तुम लेती क्यों नहीं, तुम तो कुछ माँगती ही नहीं।

—नहीं, मुझे खपया नहीं चाहिए। अगर मुम मुझे आजा दो तो मैं इन बच्चे को गोद ले लूँ। बड़ा ही मुन्दर गहका है, देखो न एक बार।

मँझले मालिक स्थिर दृष्टि से मँझसी मालकिन की ओर ताकते रहे, बच्चे की धीरे उन्होंने नहीं ताका और कोई उत्तर भी नहीं दिया।

मँझसी मालकिन ने कहा—मैं जानती हूँ कि बच्चे के लिए तुम्हारे मन में दुःख है, मुझ में छिपाने में क्या होगा? मेरी तो आँखें हैं, मुझ कीने हो गये! मैं ने कितनी बार तुम में कहा कि तुम दूसरी शादी कर सो, लेकिन तुम ने कह भी नहीं किया। मँझले मालिक का मन जैसे खपन हो उठा। उन के गरीर की गति देख कर उन की खपमता का अनुमान

किया जा सकता था। वे कुछ कहने जा रहे थे लेकिन उन की पत्नी ने कहा—चुपचाप जरा बैठो तो, मेरे पान भी क्या तुम पागलों की ही तरह समाया करोगे ?

अपनी सारी देह दोनों हाथों से खुजलाते-खुजलाते भँसने मालिक बोले—कितनी गरमी है, बाप रे बाप !

बिछोने के ऊपर से पछा ले कर भँसली मालकिन ने कहा—बंठो, मैं तुम्हें पछा करती हूँ।

दो बार सूने गले से खाँसते हुए भँसले मालिक ने कहा—पना नहीं पगु क्या कर रहे हैं ? मेरा मतलब है कि उन को कुछ खाने-पीने को मिला ही नहीं। अण्ठा जाने दो मुझे, रास्ता छोड़ो।

दरवाजे के सामने खड़ी हो कर भँसली मालकिन ने कहा—मेरी बात समाप्त कर लो, लय जाने दूंगी। सुना, इस लड़के को मैं गोद लूंगी। यह षट्ठोगप्राय का भानजा है, न इस के माँ है न बाप है। कोई नहीं है। मामी भी इस को देख कर पिण्ड छुड़ाना चाहती है—कुछ पैसे ले कर ही दे दूंगी।

भीतर के संपर्प से जैसे घबल हो कर भँसले मालिक बोल उठे—नहीं, नहीं, नहीं, वह नहीं हो सकता, वह नहीं हो सकता। मैं लेगे बलमो पैर नहीं चाहता। पता नहीं कैसा खानदान है ? छोड़ो, मेरा रास्ता छोड़ो।

भँसली मालकिन ने दुःख भाव से कहा—नहीं।

भँसले मालिक तब भी बोल रहे थे—पना नहीं खोर है कि बदमाश है या भिखारी खानदान का सदका है, वह सब नहीं हो सकता। फिर मर मर जायेगा, देखती नहीं हो कैसा उस का चेहरा है।

भँसली मालकिन की आँखों में आँसू आ गये। उन्होंने कहा—गृम कुनो क्यों नहीं, जिन लोगों को दोनों देसा पावन-दास भी नहीं खाने को मिला, दूध तो उन के लिए स्वप्न है। उन के घर में खूने पर पत तो मर ही जायेगा।

बिना किसी कारण के पसल पर की खट्टर को घीबट्टे-गोबरने भँसले मालिक बोले—मर जाने दो, मरने के बाद के इमे पेंक देदे।

भँसली मालकिन ने कहा—छिः छिः, यह बेपारा अबोध गिम्न है। इस ने भना तुम्हारा क्या किया है ?

मँझले मालिक अपने-आप बक-बक कर रहे थे—दूमरे का सडका है...दूमरे का लडका है, यह नहीं हो सकता, यह नहीं हो सकता, लोटा दो, लोटा दो, बल्कि चार आना पैसा...

मँझली मालकिन बाहर चली गयी। सामने के लम्बे बरामदे में उन के जाने की आवाज क्रमशः धीमी पड़नी लगी और अन्त में सीड़ियों के पास जा कर विलीन हो गयी। अपने-आप बोलने हुए मँझले मालिक चुपचाप खड़े थे। अपनी पत्नी के जाने के बाद उन्हीं रान्तों की ओर ताकते हुए बोले—अगर मुझे सडका नहीं है तो तुम्हें क्या? इस के बाद फिर कुछ सोच कर बोले—युधिष्ठिर निर्वंश रहे, भीम निर्वंश रहे, रावण निर्वंश रहा, कृष्ण निर्वंश हो गये, मैं भी निर्वंश हूँ, इस से हुआ क्या? नहीं है तो फिर नहीं है। और ऐसे ही बक-बक करते हुए वे घर से बाहर आ कर दालान की ओर जाने लगे। उन के कमरान की चहार-दीवारी के पास ही अमरुदों के पेड़ हैं। मँझले मालिक ने देखा कि बिना हवा के ही अमरुदों के पेट हिल रहे हैं। वे समझ गये कि बन्दर चढ़े हुए हैं। वे धिल्लाये—वो नितार्ई, अरे वो नितार्ई, अमरुदों के पेट पर बन्दर चढ़े हुए हैं, भगा दे, भगा दे उन को और इस के माध-ही-नाय जपाक्षप दम-बारह सड़के मिट्टी पर बूद पड़े। मँझले मालिक क्रोध से पागल हो उठे। सड़कों के इस उपद्रव ने वे जग उठते हैं। आज भी वे टीक-बच्चों की तरह उन के पीछे दौट पड़े। लेकिन बिगी को पकड़ नहीं सके। बाहर से बच्चों की हँसी सुनाई पड़ी। इस अगमनग के कारण मँझले मालिक का क्रोध और भी बढ़ गया। अभी नोप्र के कारण उन्होंने बर्त डेरे उठाकर अमरुदों के पेट को मरफ फेंकना शुरू किया। अपने-आप ही बोल उठे—आज अमरुदों को ही मारूँगा। लेकिन उन्हें रक जाना पड़ा। पीछे रंगे हुए पुआव के गमिहान के पीछे में पता नहीं कौन रो उठा। लौट कर उन्होंने देखा तो पाया कि पुआवों के दो गमिहानों के बीच की पतली जगह में चार माल का एक मुन्दर सड़का दर के मारे रो रहा है। मँझले मालिक को देख कर उग का रोना भी बन्द हो गया। सड़के की ओर देख कर मँझले मालिक जैसे मुग्ध हो गये...बहुत मुन्दर सड़का था। अर्थात् उन्होंने बच्चे को झपट कर उठा लिया और अपनी छानी में पिपटा कर बार-बार उग का चुम्बन करते हुए बोले—दर की क्या बात है? लेकिन

दुमरे ही क्षण वे छूट चकित हो उठे। चारों ओर देख कर बच्चे को फिर उसी तरह वे फेंक कर जल्दी से वहाँ से उठ पड़े। दानान में कोई नहीं था, उम एकान्त दालान में आधे प्रकाश और आधे अन्धकार के बीच वे गड़े हो कर हाँफने लगे। उन की दृष्टि पता नहीं कैसी अस्वाभाविक हो उठी थी। हुक्के के बिलम के बीच में घुएँ की तीदन रेखा उठ रही थी। मैसले मालिक धीरे-धीरे हुक्का उठा कर चौकी पर बैठ गये। हुक्का उन्होंने पीना नहीं शुरू किया बल्कि चुपचाप उसे पकड़ कर बैठे रहे।

बाहर जूते का शब्द हुआ लेकिन वह आवाज उन के कानों में नहीं गयी। जो वहाँ आया वह घड़े मालिक का लडका था—“मैसले मालिक का भतीजा”—मणि, मणि। मणि ने पुकारा—चाचा !

मैसले मालिक ने पता नहीं कैसी अद्भुत दृष्टि में मणि के चेहरे की ओर ताका और आदर सहित उन की अगवानी करते हुए बोले—आइए, आइए, आइए। अच्छे तो ये आप। सीजिए, तम्बाकू पीजिए—ऐसा बट्टा कर उन्होंने हुक्का मणि की ओर बढ़ा दिया।

मणि जैसे चौंक उठा और बड़े डग पीछे हट कर उन में जैसी आवाज में कहा—“मैं मणि हूँ। एक बात थी—” उम की बात पूरी नहीं हो सकी। मैसले मालिक हुक्का वहीं छोड़ कर जल्दी में दानान छोड़ कर भाग गये।

मणि ने माराज हो कर कहा—मोंग क्या चीक में बोगने है—“जैसे पागल गनेस, गोबर गनेस।

बीग-बकसीस माल पहने की बात है, मैसले मालिक की कुछ गद्दी लज्ज थी। बनबी गानदान में सब यग मरी थे। उन समय मैसले मालिक ऐसे नहीं थे। उन का नाम सोनो ने सब दिया था—“गनेस बाबू। भव गोट नाम को वे गाने-बजाने की मञ्जलिम में बैठते। मुहिदाबाद की मञ्जलिम निगार-जनी, नेबाज गी निजमित उन के यहाँ एक बार मरीने में लाते। मैसले मालिक गी गाह्य में निगार भोगते थे। मैसले मालिक आषार-निषाग, कानबोन, कापदा-कानून सभी में जैसे जिम्मे के आइमी थे। खड़े-बड़े करने में वे दमिदासि थे। सोनो को निगाने-दिसाने में उन के ऐसा कोई आइमी नहीं, उन के बड़े भाई उमीदारी देखते, और भाई मामला-मुहज्जा और

इस मंशले भाई पर पोछरा, बगोचा और जमीन देयने-भालने का काम था ।

गाँव के उम कोने पर मंशले मालिक को बैठक जमा करती थी । निस्तब्ध रात्रि में छलछलाती हँसी से गाँव वाले सोते से जग पड़ते । लेकिन दूसरे ही क्षण फिर वे निश्चिन्त हो कर सोने चले जाते । वे समझ जाते कि ये मंशले मालिक हँस रहे हैं ।

ऐसे ही दस-बारह साल बीत गये । तब मंशले मालिक की उम्र भी तीस साल और उन की पत्नी मंशली मालकिन की उम्र भी पचीस साल । उस दिन नहा-धो कर पूजा-पाठ कर के मंशले मालिक छोटे भाई बालिक के मंशले घेरे को अपनी गोद में ले कर नास्ता कर रहे थे । पर के पाँच लडकों के बीच यही लडका नि मस्तान मंशले मालिक को बड़ा प्रिय था । स्वयं भी छाते और उम बच्चे के मुँह में भी एकाध बीर डाल दिया करते ।

उस दिन उन की पत्नी मंशली मालकिन ने बिना किसी भूमिका के कहा—देखो, मैं बँधनायधाम जाऊँगी, तुम्हें भी चलना होगा ।

मंशले मालिक भतीजे में दूबे हुए थे, याँ ही बोले—क्यों ?

—घरना दूँगी बाबा के पाम ।

मंशले मालिक इस बार होंग में आ गये । मंशली मालकिन के गले में झूलती हुई लाबीडों और बबबों की ओर ताक कर बोले—बहुत तो तुम ने किया, अब यह फिर क्यों ?

मंशली मालकिन की आँखों में आँसू आ गये । उन्होंने बोलने लगे में कहा—तुम यह बात कह रहे हो !

मंशले मालिक खुले हुए जँवने की ओर से आकाश की ओर ताकने रहे । मंशली मालकिन ने अपने को किसी तरह मंशालने की कोशिश की । बाबा को पकड़ कर एक बार देखूँगी, देखूँ शायद हमारे पर भी उन की कृपा हो जाय । मंशले मालिक चुपचाप बैठे रहे । उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया । मंशली मालकिन चुपचाप उत्तर की प्रतीक्षा में खड़ी रही । छोटा गिनु भोजन की आग में अपने बड़े चाचा की दाढ़ी खींच कर बोला—तू हूँ । ...बच्चे का हाथ गरमा कर उन्होंने उदासीन हो कर कहा—भोज ।

उत्तर नहीं पा कर मंशली मालकिन ने कहा—अगर तुम नहीं आ

मरने तो फिर मुझे मेरे मायके पहुँचा दो, मैं वहाँ से चली जाऊँगी।

उस तरफ गोद में बैठे हुए बच्चे की चंचलता बढती जा रही थी। दम बार उस ने अपने चाचा की नाक पर उँगलियों से छिछोरने हुए कहा—
दे हम। नाराज हो कर मँझने मालकिन ने बच्चों को मँझनी मालकिन की तरफ फेंकते हुए कहा—ले जाओ, दम की माँ को दे आओ। मँझनी माम-
किन बच्चे को अपनी गोद में ले कर उत्तर की आशा में खड़ी रही।

घोड़ी देर बाद मँझने मालिक ने भीठी आवाज में कहा—नुम मुन्ने को क्यों नहीं अपनी गोद में ले लेती हो?

मँझनी मालकिन ने दृढ़ भाव में कहा—नहीं, एक पेड़ का फल दूगरे पेड़ में कभी नहीं लगता।

मँझनी मालिक चुप रहे, अन्त में बोले—अच्छा, चलो।

मँझनी मालकिन की देवघर यात्रा की तैयारी हो रही थी। यात्रा पर जाने के एक दिन पहले दोरहर को उन की पटोमिन औरतें, छोटी मान-
किन और बड़ी मालकिन उन्हें घेर कर बैठ गयीं। एक आदमी ने कहा—
बाबा की कृपा का कोई अन्त नहीं है, वहाँ जाने पर बाबा की कृपा होगी ही।

दूगरी ने कहा—भाई, भाग्य ही अमनी बीज है, भाग्य में यदि है तब तो ठीक है, नहीं तो बाबा...।

उस बीच में ही बाबा दे कर एक दूगरी ने कहा—ऐसी बात मत कहो—
बाबा के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। पता नहीं किस का ले कर किस को देने हैं। कोई समझ नहीं रखता? वह जो मुखर्जी खानदान की मणि की बहू है, उस के लग लटके भर गये और उस के दाद वह तीनगोरी बीदा हुआ, इसे भला कोई जानता है? एक ही क्षण में वहाँ भद्रा उम गयी। रामा ठकुरानी ने बाबा की प्रणाम कर कहना शुरू किया—उम मुखर्जे की मुन्नी दीदी, मोकल्ला ठकुरानी—अरे उन्नी का भतीजा मत मना और मणि की बहू के लटके के रूप में खम्हा। जानती तो हो मुन्नी मणि की बहू के घर में रहती थी, खाना-पीना सब कुछ मणि की बहू के घर ही, दोनो आदमी से बड़ी मित्रता थी। जब उस के दोनों लटके भर गये तब मुन्नी बीदनाप्रणाम मनी। और वह अपने लिए नहीं मनी थी। मणि की बहू के

लिए घरना देने गयी थी। तीन दिन के बाद स्वप्न हुआ—आ जा, उठ जा तू। उन के लडके अब नहीं होंगे। लेकिन मुको बाबा का पिण्ड छोड़ने वाली नहीं थी। बोली—नहीं बाबा, देना ही होया। नहीं देने पर मैं यहाँ से उठूंगी नहीं। दूसरे दिन भी वही स्वप्न आया। मुकी उठी नहीं, बोली—बाबा, मैं यही मर जाऊँगी। और तब तीसरे दिन स्वप्न हुआ—और यह देखो भाई, मेरा शरीर रोमांचित हो रहा है।

सचमुच ही धमा ठकुरानी का शरीर रोमांचित हो उठा था। मुनने वालों में से सभी की बाँतली बन्द। धमा ठकुरानी ने फिर शुरू किया—तीन दिन स्वप्न हुआ—अरे उसें नहीं कुछ है, अगर उसें अपना कोई दे तब होगा, नू क्या देगी? मुकी ने कहा कि हाँ बाबा, दूँगी। बाबा बोले—तो ठीक है, तब उस को होगा लडका। मुकी के शस तों बच्चे-बच्चे थे नही, बस केवल उस का भतीजा बा और मुकी उसें ही आदमी बना रही थी। पन्द्रह-सोलह साल का स्वस्थ लम्बा-चोड़ा सुन्दर लडका बा। और आठ दिन के भीतर ही वह लडका छटपटा कर मर गया। और तब मुकी अपनी छाती पीटती हुई बोली—हाय, यह मैं ने क्या किया, यह मैं ने क्या किया? और वही लडका मरने के बाद उनी माल मणि की बहू की गोद में तीनकोड़ी के रूप में पैदा हुआ।

सारी लोग स्तब्ध हो कर मुन रहे थे। हड़ान् बड़ी मालकिन ने कहा—क्या हुआ गी मँझली? उसे क्यों कर रही है?

चौरन हुए हाथों में कर्ज की पकड़ कर मँझली ने कहा—मुरवी घाने से मेरा माया घुम रहा है।

रात को अपने पनि में मँझली ने कहा—देखो, अगर भाद में है तब तो बस होगा। चँटनायशाम जाने की जरूरत नहीं।

मँझने माणिक भाइयचंकिन रह गये। उन्होंने पूछा—अब क्या हुआ?

मँझली ने मुरी जाने अपने पनि में बना दी। यह मकरप नेत्र अपने पनि की आँख ताकती रही। मँझने माणिक स्नेह में बोले—ठि-ठि, ऐसी कबा नहीं बननी चाहिए। बाबा चँटनाय ने स्वप्न में मँझने माणिक और मँझली माणिकिन में बना कहा, तीसरे बिभी रक्षित को यह पना नहीं मदा।

सोठने के कई दिन बाद मँसले मालिक बड़े भाई के पास जा कर बोले—
मेरी एक बात भी भइया ! बड़े मालिक कचहरी का कोई कागज पढ़ रहे
थे, उमे रग्य कर बोले—घोसो, क्या कहते हो ?

जरा-भा इधर-उधर कर के मँसले मालिक बोले—मैं ने ठीक किया है
कि मैं कोई लडका गोद ले लूँ ।

बड़े मालिक ने प्रश्न किया—क्या बाबा की दया नहीं हुई ?

मँसले मालिक ने कहा—यह बात रहने दो । अब मेरी इच्छा है, और
मँसली बहू की भी इच्छा है कि यह छोटे भाई कार्तिक के मँसले लडके को
गोद लें ।

बड़े मालिक ने कहा—यह बात तो कार्तिक से जा कर कहो, और
छोटी बहूरानी से भी बात करनी होगी, उस की भी स्वीकृति लेनी जरूरी
है ।

मँसले मालिक ने कहा—यह भार मैं तुम्हारे ऊपर देता हूँ ।

बड़े मालिक बोले—अच्छा, ठीक है, मैं ही कार्तिक से जा कर कहता
हूँ ।

और थोड़ी देर बाद बड़े मालिक बोल उठे—यह तो बहुत अच्छी बात
तुम ने की है । गणेश, घर की सम्पत्ति घर में रहेगी । एक ही वंश में ।

मँसले मालिक हँसते हुए भेतों की ओर चले गये । उमी दिन पोन्ड्रुन
के उपलक्ष्य में यज्ञ और ब्राह्मण भोजन का पर्व मगन्न हो गया । कुछ दिनों
ने कहा—यात्रा और कुछ माना-पजाना होना चाहिए । बनबत्त की यात्रा,
और दूसरे दल ने कहा—नहीं, गेमटा नाच होना चाहिए ।

मँसले मालिक ने कहा—कोई परवा की बात नहीं, वह दोनों ही
होया । एक दिन मजलिस होगी और एक दिन वह मख । याँ माह्व की
बिट्टी लिग्य देता हूँ, बे मख उस्ताद और बाबो को ने जर आ जायेंगे ।
शेगहर की घर के फाटव के पास आते ही मँसले मालिक ने देखा—कार्तिक
मँसले बच्चे को गोद में ले कर दामान से भीतर की ओर चला गया है ।
उन्होंने समझा कि बातचीत खरम हो गयी है । उन्होंने भीतर जा कर अपना
हाथ बड़ाते हुए बच्चे को पुकारा—मुन्ने !

रग का उगार देते हुए कार्तिक ने जोधजुबंन कहा—नहीं । रग के

बाद अपने भँसने भाई को सिर से पैर तक तीखी मज़रों से देघ कर वहाँ—तुम कितने बड़े चाण्डाल हो, इतनी जलन है तुम में यह मैं नहीं जानता था ।—भँसले मालिक स्तम्भित हो उठे । कोई उत्तर न पा कर कार्तिक ने फिर कहा—इम लडके को मार कर के तुम अपना वंश धाँसे हो ? छि ! छि !!

चारों ओर में जैसे भँसले मालिक के ऊपर आकाश फट पड़ा था । वे करुण स्वर में बोले—कार्तिक !

कार्तिक सब क्रोध के मारे ज्ञानशून्य था । उस ने कहा—तुम्हारे छिपाने से क्या होगा ? सब बात कभी छिपी नहीं रहती, समझने हो ? हम लोगो ने बाबा के स्वप्न की बात सुनी है । तुम चाण्डाल हो । चाण्डाल हो ।

भँसले मालिक हठात् जमीन पर गिर पड़े और दोनों हाथों से पृथ्वी को पकड़ कर चिल्ला उठे—भूमिकम्प ! और वही पर अयेत हो गये ।

उसी दोपहर को भँसने मालिक अपने सोने के कमरे में गये और पूरे दो महीने बाद बाहर निकले । उस दिन वे घर के बड़े मालिक और अपने बड़े भाई के पास जा कर बोले—मेरा हिस्सा बाँट दो ।

बड़े मालिक चौंक उठे, लेकिन दूसरे ही क्षण अपने को समझित करने हुए बोले—बस !

घर के भीतर बहलकदमी करने हुए भँसले मालिक एक जगह पर पड़े हो गये । दीवाल पर उन्होंने शुक कर देखा कि चींटियों का गुच्छ घना जा रहा है । बाप रे बाप ! चींटियों का वंश कितना बड़ा है । और गभी के मूँह में एक अण्डे । ऐसा कह कर उन्होंने दोनों हथेलियों में चींटियों की पत्तियों को रगड़ दिया । बड़े मालिक उठ कर आ रहे थे, भँसने भाई की पीठ पर हाथ रख कर उन्होंने पुकारा—गणेश !—सज्जा के मारे कुछ क्षण पड़े रह कर भँसने मालिक घर में बाहर भाग गये । बड़े मालिक ने बंद की बुलवाया लेकिन भँसने मालिक ने सौटा दिया । घर से ही उन्होंने बरतवा दिया—मेरी सम्पत्ति पट्टे बाँट दी जाय । इम ने—उम के बच्चों के दूध का दाम मैं क्यों दूँगा ? इम के बाद बिछोने के ऊपर एक धूँसा जमा कर बोन उठे—बच्चू बँदनाथ के गिर पर एक धूँसा रावण की तरह मगाने का मन

करता है। बेटा बैरनाथ को मार-भार कर कचूमर निकाल दूंगा, जमीन में बँटा दूंगा। देवता नहीं घब्टा है। थोड़े ही दिन बाद सम्पत्ति बँट गयी, यह बारह साल पहले की बात है। इस के बाद मँसले मालिक धर्म ही व्यवहार करते रहे। एक और भी परिवर्तन उन में आया था। जब-तब धर्म-कर्म में उन का प्रेम बढ़ गया। भयकर जाड़े में जब लोग रजार्द के भीतर दुपके रहते तब मँसले मालिक नगी देह अपनी छाती पर दोनों हाथ रखे हुए, पता नहीं क्या बड़बडाते हुए देवी के मन्दिर में घर की तरफ दौड़ते। जिन रास्ते से सभी लोग आते उस रास्ते से ये नहीं आते। ये एक दूमरा ही रास्ता बना कर चलते।

इस घटना के बाद आज तक कभी भी मँसले मालिक ने गोद लेने की बात नहीं की, यहाँ तक कि सन्तान की बात भी इन के मुँह में कभी नहीं फूटी। धर्म अर्थ और परमार्थ के बीच उन्होंने वश की कामना हुआ दी। लेकिन मँसली मालकिन यह नहीं भूल सकी, उन्होंने अपने पति में विवाह करने के लिए अनुरोध किया था, गोद लेने के लिए भी कहा था, लेकिन उस का परिणाम यह हुआ कि मँसले मालिक का दिमाग दिन-प्रतिदिन घराब होता गया। अधिकतर उन का समय रपया इकट्ठा करने में लगता। अर्थ-लाचय की उन की पिरामा बढ़ती ही जाती—अपने मोने के कमरे में जो गन्दूक उन्होंने रखी थी—बार-बार उसे खोल कर देखते। कभी-कभी धर्म-कर्म में उन का अनुराग बढ़ता। और बिना किसी में कुछ बहे वैसीध-भ्रमण के लिए बाहर जाने जाते। यह सब कुछ देख-भुन कर मँसली मालकिन परेशान हो गयी। बहुत दिन तक उन्होंने कोई बात नहीं की। लेकिन आज बार महीने के बाद हटान् चटखियों के इस भानवे को ले कर वह अपने पति के पास आयी थी, लड़का बूँकि अनाथ था इसलिए ये अपना सोभ नहीं रोक सके। उस लड़के की मामी नीचे प्रतीक्षा कर रही थी। लड़के को देग कर उसे कुछ खाना पाने का सोभ था। मँसली मालकिन ने नीचे आ कर खुशमान उस की गोद में दे दिया।

चटखी की बहू ने प्रश्न किया—क्या हुआ ?

मँसली मालकिन ने उस की बात का जवाब नहीं दिया, उन की छाती के भीतर जैसे कोई रसाई बार-बार उमड़ रही थी। चटखी की बहू

आश्चर्यचकित हो उठी और उम ने पूछा—क्या हुआ ?

गरदन हिना कर मैत्रिली मालकिन ने बताया नहीं। और वे वहाँ पड़ी नहीं रही, एक दूसरे घर में चली गयी।

दोपहर को बूढ़ा नोकर राय ठक्-ठक् कर के आया और अपने चपरे से चारों ओर देख कर बोला—बहू रानी !

मैत्रिली मालकिन सोयी हुई थी। उठ कर बैठ गयी, अपने सिर पर के कपड़े को जरा छींच कर मधुर स्वर में बोली—चलो, आती हूँ। बाबू आये हैं ?

नितला कर राय ने कहा—बहू माँ, पगले आदमी का मन मुन्दावन दोनो ही घराबर है, क्या बहूँगा मैं। ग्यारह बजे की ट्रेन में वह गया स्नान को चले गये। मैं नहीं-नहीं करता ही रहा, वह चले ही गये।

मैत्रिली मालकिन ने कहा—तब तुम लोग जा कर पा सो। महाराज को रमोई मैमसाते को कह देना।

राय ने कहा—अब तुम भी घामोगी बहुरानी, दो बीर तुम भी पा सो।

सन्नेह हँस कर मैत्रिली मालकिन ने कहा—मैं नहीं गाऊँगी बाबा। मेरा गिर दर्द कर रहा है।

राय ने फिर एक बार प्रणाम किया और धीरे-धीरे लौट आया। अपनी चप्पल पहनने हुए, फिर उम ने चप्पल उतार दी और जा कर कहा—नहीं, बहू रानी, ये तुम लोगों की अच्छी बात नहीं है, यह हम को अच्छा नहीं लगता, तुम जरा दो ही बीर तो पा सो। उम पगले के माथे तुम भ्रमा बर्नी पागल हो रही हो ?

धीरे-धीरे मैत्रिली मालकिन ने आदेश दिया—मैं ने जो कहा है, वही जा कर करो राय जी !

राय ने फिर कोई बात नहीं की, अपने पैरों में चप्पल डाम कर टूट-टूट करने लगा पला गया।

बहुत दिनों के बाद आज मेलने मालिक पता नहीं बंते चपम हो उठे। उमो चबराहट और चबचपा के कारण अपने कमीने मणि लक्ष को नहीं पहचान गये। हुक्का उगे देने जा रहे थे। इस का ख्याल आते ही वे

जमगायत

सजा कर अपने सोने के कमरे में आ कर छिप गये थे। लेकिन वहाँ बैठे नहीं रह सके। लगातार अपने कमरे में चहलकदमी करते हुए वे खोस उठ—दूर हो जा, दूर हो जा। एक बार छोटे घर की ओर ताक कर बोले—घट-घट, सब डका।

दूमरे ही क्षण फिर कह उठे—दूर हो जा, दूर हो जा।

दुग के बाद फिर चहलकदमी करते हुए वे विछोने पर मो गये। लेकिन वह भी अच्छा नहीं लगा। विछोने से उठ कर वे फिर खबल पग में दुधर-उधर टहलने लगे। आले पर से अपना गमछा और कुरना निकाल कर कण्ठ पर रखा और खोस उठे—दुस को छो कर आ जाऊँ ! यहाँ मैं चार मी मीस की दूरी पर रहता हूँ, एक बार गंगा तो हो आऊँ—और बपम से कुछ घरन-वरन निकाल कर वे बाहर निकल आये। घर के बाहर ही राय माहब ने मँट हो गयी, उम के यगल में जाने-जाने मँसले मालिक ने बड़ा—गंगा स्नान को जा रहा हूँ, उस से कह देना।

राय वहीं ठमक कर खड़ा हो गया। और प्रणाम करते हुए बोला—रक्षिए-रक्षिए !

लेकिन उत्तर नहीं दिया उन्होंने। राय ने जोर में पुकारा—मँसले मालिक, मैं कहता हूँ मुनिए। अरे हे ! और दुग यात बा भी प्रवाय उन्होंने नहीं दिया। राय ने अपनी गरदन उठा कर, आँख फाड़ कर देखा, कोई नहीं दिगार्ड पड़ रहा था।

स्टेशन से नीचे उतर कर मँसले मालिक बिल्कुल गया घाट पर जा पहुँचे। घाट पर नहाने वालों की चहल-गहल और भीड़, दुग के अमावा घाट के ऊपर जो छीटा-गा बाजार है, उस में खरीदने और बेचने वालों की भीड़। मँसले मालिक घाट के ऊपर बैठ कर उस बार की गैनी की ताक रहे थे। धूप में चमकती हुई वह गैनी शानमला रही थी। बहुत दूर तक जैसे उस गैनी पर हरियारी भी दिगार्ड पड़ रही थी। उन के आग-आग की आवाज उन के बानों में आ रही थी—आव-अव-माधु ! माधु !

ओ भी जा रहा है उस का नाम पुकारता है। किस का वहाँ पर है पर भी बता देता है।

एक दूमरे आदमी ने धीमे से कहा—ममलान घाट का शोम बट रहा

था कि यह बाबा मुरदा खाता है ।

मैंने मालिक ने साग्रह पूछा—कहाँ रे भाई, कहाँ ?

दूसरे ने उत्तर दिया—अरे साधु क्या भीड़ में रहते हैं ? वही श्रमशान पर है ।

मैंने मालिक उठ पड़े—गंगा के किनारे से होते हुए घने जंगल के बीच एक पतली सी पगडण्डी चली गयी है, उस पगडण्डी को पकड़ कर श्रमशान में बनी हुई टिन की उस झोपड़ी के पास आ गये हुए । थोड़ी ही दूर पर रेली के ऊपर मधुमक्खियों के झुण्ड जैसी गोलाकार भीड़ जमी हुई थी, उन्होंने समझ लिया कि सन्यासी वही पर हैं । वे भी आगे बढ़ कर उगी भीड़ में मिल गये । जनता की भीड़ के बीच घुनी जलाई हुए एक प्रचण्ड काफी लम्बे-चौड़े सन्यासी बैठे हुए थे । बहुत से लोगों को बहुत-सी बातें ये बता रहे थे । बीच-बीच में अपरिचित भीड़ के भीतर से वे किसी का नाम ले कर पुकार उठते थे । इसी बीच हठात् सन्यासी की आँखें मैंने मालिक की आँखों में जा मिली । थोड़ी ही देर बाद सन्यासी ने हँस कर धीरे से कहा—आओ बाबा गणेश बन्धोपाध्याय, रामचन्द्रपुर के बनर्जी, मैंने मालिक, आभा । मैंने मालिक आश्चर्य के मारे काठ बन गये । दूसरे क्षण वे डर से पम गये । सन्यासी ने यदि कही उन के मन की बात दाग भीड़ के सामने कह दी तो ? वे जल्दी से वही में आ कर गंगा घाट पर बैठ गये ।

तब तक वे बंटे रहे, उन का उन्हें पना नहीं लगा । हठात् चौक उठे । याजार के किमी परिचित दुकानदार ने उन्हें प्रणाम करते हुए कहा—अरे मैंने मालिक, प्रणाम, अच्छे तो हैं ?

मैंने मालिक ने अर्घ्यहीन हँसी हँसी हुए कहा—हाँ, अच्छा ही हैं । और तुम अच्छे तो हो ?

दुकानदार ने कहा—जी हाँ, आप लोगों के आशीर्वाद में ठीक ही हूँ । धनिय, ग्यान करिए । पून-माया मा हूँ ?

मैंने मालिक आकाश की ओर देखा कर पना नहीं बना गोच रहे थे । मूर्ख का दिव्य रत्नाभ हो, रहा था । वे जल्दी से उठ कर बोले—हाँ, जल्दी में पून-माया मा हूँ । उम ट्रेन में मैं जाऊँगा । हँस कर उन दुकान-

दार ने कहा—अब वह तो कल सुबह नौ बजे मिलेगी। तीन बजे की गाड़ी तो जा चुकी।

मैशनले मालिक धीरे-धीरे चिन्तित भाव से ही गंगा के जल में नहाने लगे।

गम्भीर रात्रि। दुकानदार के दरामदे में मैशनले मालिक जाग रहे थे। बार-बार उठ कर बैठने थे और फिर सेंट जाते थे। इस बार वे गेट पर से उठ गये और बाहर चले आये। चारों ओर निस्तब्धता थी। गंगा तट पर और विशेषतः उग बन भूमि की तरफ झींगुरों की शब्दों आ रही थी। मैशनले मालिक श्मशान की ओर चल पड़े। उन की छाती के भीतर धक्-धक् कुछ जैसे हिल-डुल रहा था। श्मशान में पहुँच उन्होंने ने देखा कि अग्निकुण्ड के पाम बैठा हुआ मग्यामी गंगा की ओर ताक रहा है। पोड़ी दूर पर पड़े हो कर मैशनले मालिक ने पुकारा—बाबा !

मग्यामी ने बिना मुँह फेंके ही उत्तर दिया—आओ, बैठ आओ। मग्यामी को प्रणाम कर के मैशनले मालिक बैठ गये। आदमी की गोपही के पात्र में पता नहीं क्या पी कर मग्यामी ने कहा—मन में कोई इच्छा लें कर आये हो बाबा ?

मैशनले मालिक का कण्ठ जैसे फँसा जा रहा था। जैसे उन का स्वर बाहर नहीं निकल रहा था। मग्यामी ने फिर कहा—क्या चाहते हो बाबा ?

बहुत बरत के साथ मैशनले मालिक ने इस बार उत्तर दिया—बाबा तो अन्तर्पामी हैं,

हँस कर मग्यामी ने कहा—नेकिन तुम्हारे मन की बात मुझें ही कहने मन से कहना होगा। नहीं तो इस सगार में भला क्या मिलेगा—तुम क्या चाहते हो ?

उसी श्मशान भूमि पर सोट कर मैशनले मालिक ने कहा—मग्यान ! बाबा बैटनाप न मुझे निराश किया है, तुम दया करो बाबा !

मग्यामी स्थग्न हो कर बैठे रहे, मैशनले मालिक भी नहीं उठे, वेमें ही रमोन पर लेटी अवस्था में पड़े रहे। मग्यामी के चरणों में ही सेंटे रहे।

कुछ देर बाद मग्यामी बोले—उठो, उठ कर बैठ आओ।—देना कर

कर मंग्यामी ने अपने झोले में से मिट्टी का एक पुरवा निकाला और थोड़ा-सा तरल पदार्थ उस में डाल कर कहा—यह देवी का प्रसाद है, इसे पी लो। मैंने मालिक जातक ब्राह्मण वसीय से, बिना किसी शर्त के उसे पी गये।

मंग्यामी ने स्वयं भी उसे पी कर कहा—भगवान् शंकर की बात को क्या कोई काट सकता है। बोलो, काट सकता है ?

मैंने मालिक ने निराश हो कर कहा—नहीं बाबा, नहीं काटी जा सकती शंकर भगवान् की बात।

हैम कर मंग्यामी ने कहा—काटी जा सकती है। लेकिन जानने हो, कौन काट सकता है ?

मैंने मालिक ने कहा—नहीं बाबा !

गिलगिला कर हँसते हुए मंग्यामी ने कहा—शिव की भी बात काट सकती है ये, देवी, काली माँ, बैठा मेरी काली माँ, जो शिव की छाती पर बैठकर नाचती है।

फिर वही गिलगिलाती हुई हँसी।

उम हँसी की तीक्ष्णता से उम श्मशान का अन्धकार भी जैसे बँट उठा। श्मशान की उम टिल से छापी हुई शीपड़ी में वह प्रतिध्वनि थी और भी गूँज रही थी।

मैंने मालिक का सखीय रोमाञ्चित हो उठा। मंग्यामी ने फिर एक बर्तन में मँदा र मालिक को पीन दिया कुछ। और स्वयं पीने लगे, बोले—काली माँ को मुम मनुष्य कर सकते हो ?

हाथ जोड़ कर मैंने मालिक ने कहा—क्या करना होगा बाबा ?

मैंने मालिक के धैर्य के निकट जा कर मंग्यामी ने कहा—नरपति दे सकते हैं ? मैंने लिए मंग्य के अनुसार काली के पास पुष्पेष्टि यत्न करना।

मैंने मालिक का मुँह प्रसन्नता में खमक उठा। बोले—हाँ बाबा !

मंग्यामी ने कहा—लेकिन नर बलि, दे पायेगा तो ?

मैंने मालिक का दरदर-पर-पर कर के बोलने लगा। हम के माप हो माप एक बर्तन में फिर कुछ पीने को मंग्यामी ने उन्हें दिया। और बोला—हर की क्या बात है ? अमावस्या का अन्धकार है, कोई नहीं जान

मकता । गम्भीर रात्रि है । शमशान है, यह कोई नहीं जान सकता । मँसले मालिक के मस्तिष्क में मुरा अग्नि-शिखा की भाँति जल रही थी, उन की आँखें भी अंगार की तरह धधक रही थी ।

मँसले मालिक बोले—हाँ, बलि दे सकूँगा ।

दूगरे ही दिन मँसले मालिक घर लौटे । बिना किसी कारण के ही बनायदी हँसी-हँस कर अपनी पत्नी को उन्होंने कहा—गया स्नान हो गया था ।

मँसली मालकिन ने कहा—अच्छा किया ।

लगता है, इस बात का कोई उत्तर न पा कर मँसले मालिक ने फिर हँसते हुए कहा—दसलिए कह रहा था***।

मँसली मालकिन ने भोकर को बुला कर कहा—उरा जल्दी में रगोई बना दो । कल से बाबू ने कुछ खाया नहीं है । पचनमाय में कई बार इधर-उधर घूम-फिर कर मँसले मालिक ने कहा—यह सटका कहीं गया ?

शक्ति स्वर में मँसली मालकिन ने कहा—ये तो उम्रे उठा ले गये ।

मँसले मालिक बाहर चले गये । फिर थोड़ी देर बाद आ कर बिना किसी भूमिका के कहा—उस सटके को रगना चाहता था ।

मँसली मालकिन ने पति की ओर ताक कर कहा—बिने ?

मँसली मालकिन की ओर लौट कर रगोई में रंगे हुए घान की एक मुट्ठी में भर फेंकने हुए बोले—अरे ! उम्मी सटके को, यही की***

मँसली मालकिन ने कोई जवाब नहीं दिया । मँसले मालिक ने तब ही बार लौट कर कहा—अरे गोद नहीं लेनी यही पर गाना-गोना और पड़ा रहता ।—ऐसा बहते-बहते फिर एक मुट्ठी घान लेकर पेश दिया ।

बीच में ही रोक कर मँसली मालकिन ने कहा—यह घान क्यों पेश रहे हो ? ओ कुछ कहना है, उरा टप्पा हो कर कहो ।

मँसले मालिक और नहीं रके । हरहराने हुए बाहर निकल आये । सामान में आ कर गम्भीर चिन्ता में डूब गये । भीतर ही भीतर ऐसे उन का हृदय उद्विग्न हो रहा था । दरवाजे के पास उन के लौकर रात के आने की आवाज सुनाई पड़ी । रात में आ कर उन्हें प्रणाम दिया—बूँ ओ

आप को बुला रही हैं ।

मैंसले मालिक ने चौंक कर प्रश्न किया—ऐं-रें ?

राय ने कहा—दिन-रात इतना क्यों मोचने रहते हैं मालिक ? मैं कह रहा हूँ, बहू जो आप को बुला रही हैं ।

मैंसले मालिक उठ पड़े हुए । मैं एक बार बासी माई के धान की ओर जा रहा हूँ । राय जैसे घबड़ा उठा । बोला—हे, हे, हे, अरे ये क्या करते हो ? अंग मैं कहता हूँ सुनिए ।

मैंसले मालिक जा चुका थे ।

दोपहर को जब मैंसले मालिक धानें बँठते थे तो उन की पत्नी उन्हें ताल-मगों से हवा करती थी । हवा करने हुए उन्होंने कहा—तो घटजी के उस लडके को ।—मैंसले मालिक बोले—हाँ, घामेगा, पीयेगा, पड़ा रहेगा, आदमी होगा, माने ।

दरवाजे के नीचे बनजी परिवार के जूठन पर जिन्दा रहते याती कुतिया बँटी हुई थी । सहमा वह आकाश की ओर मुँह उठा कर ऊँ-ऊँ कर के बिस्लाने लगी । महाराज ने उसे दुस्कार कर कहा—दुर-दुर ।

मैंसली मालकिन ने कहा—रहने दो, रहने दो, महाराज ! वह कुतिया अपने बच्चे के लिए रो रही है । कत उस के बच्चे को सियार उठा ले गया । अरे यह क्या, यह क्या ? तुम ने तो कुछ घापा ही नहीं !

और मैंसले मालिक मोजन छोड़ कर उठ पड़े हुए थे ।

दोपहर की मोने के बाद जब मैंसले मालिक उठे तब उन्होंने देखा कि गिलास में पानी मिये हुए मैंसली मालकिन बरामदे में आ रही हैं, उन के चेहरे पर हँसी है और गोंद में बही लड़का है । पति को देख कर उन्होंने कहा—कई बार मैं आगे पर मुहारी नींद ही नहीं टूटती, बड़ा अच्छा लड़का है, रोने का तो नाम ही नहीं लेता ।

मैंसले मालिक का मुँह-हाथ धाना नहीं हो गया । वे थूपथाप नीचे उतर गये । मैंसली मालकिन के चेहरे पर एक ग्लान हँसी लगी । मेदिन उन्होंने कोई नाराजी भवका दुःख नहीं प्रकट किया ।

रात को मैंसले मालिक बोले—उम लड़के को मोहरानी को दे दो । वह उसे पानेगी-पोगेगी ।

मंझली मालकिन ने कहा—ठीक है, वही कहूंगी।

घाट पर सोते-सोते भी मंझले मालिक को नींद नहीं आयी। उन का मस्तिष्क जैसे घूम रहा था। सब भी वे नींद का बहाना कर के पड़े रहे। वहीं पत्नी को पता न लग जाये। उन्हें याद पड़ रही थी आने वाली अमावस्या की रात्रि, वह भयकर संन्यासी, सामने जग्निकुण्ड—और वह सड़का जो आश्चर्य से फटी हुई अपनी आँखों से सब देख रहा है। साय ही साय जैसे उन के भीतर एक दूसरा दृश्य दिग्राई पड़ता। मंझली मालकिन उग बच्चे के लिए घूस में लोट रही हैं। हठात् फिर सगता जैसे उग बच्चे की स्वर्गीया माँ आ कर कह रही है—साओ, साओ, मेरी सन्तान को सोटा दो। और साय ही साय तकिये के भीतर वे अपना मुँह घुमेड़ देते। बाहर वह कुतिया चिल्ला रही थी। वे तिहर उठे—ओह...और धीरे-धीरे फिर मन को दृढ़ करने लगे।

सुबह उठ कर मंझले मालिक ने देखा कि उन की पत्नी कभी की उठ गयी है। उधर का पलंग झुग्न है। लेकिन ध्यान में देखने पर पता लगा कि उसपर शायद कोई मोया ही नहीं था।

एक दिन के बाद। उस दिन अमावस्या थी। रात को छाने-पीने की कोई शंका नहीं थी। मंझले मालिक अमावस्या को उपवास करते थे और राय नौकर रात को खाता नहीं था। मंझले मालिक पर पर नहीं थे। आज कई दिनों से उसी सन्यासी के पीछे पागल हैं। सुबह ही घर में चले जाते हैं, मौड़ते हैं, दोपहर को, फिर छाने-पीने के बाद बाहर चले जाते हैं। फिर आधी रात को मौड़ते हैं। बीने मंझले मालिक की वह मंझली-मेवा कोई अमाधारण भी बात नहीं है। इस के पढ़ने भी वे तान्त्रिक मन के अनुसार जप-तप और मुरापाव कर चुके थे। सब पति की अनुपस्थिति मंझली मालकिन को भी बुरी नहीं लगती थी। वे उग बच्चे को माप ले कर खेनती रहती थी। उस दिन सन्यासी को उठाने वाले बरामदे में सालटेन के प्रकाश में बंठी हुई मंझली मालकिन छोटे बच्चे को धुप रिमा रही थी और मा भी रही थी—

(तुमि पप बोले बाद छिने,

माँ माँ बोले डाव छिने)

तुम रोते थे, बंटे-बंटे पप मे

ओरी माँ, ओरी माँ

मर्दब का अनाथ शिशु मँडली मालकिन के चेहरे की ओर ध्यानमुग्न आँखों से ताक रहा था। राय जूते से शब्द करता हुआ आ कर घड़ा हुआ। मँडली मालकिन ने छोटा बाँवत घीब कर कहा—कुठ रह रहे हो राय जी ?—राय ने छोड़ा झुक कर प्रणाम करते हुए कहा—बहूमाँ, पाय लागी।

फिर धीरे-धीरे उस ने कहा—यह घेठा साधू तो अच्छा नहीं लगता। साधू को उन ने पागल कर दिया। दिन-रात बम शराब। आज वहाँ ने यहनबा भेजा है कि रात होगी सोटने में, भब दरवाजे घुंसे रहें। मैं यहीं कहने आया हूँ और एक चिलम में तम्बाकू भी भर कर रखे जा रहा हूँ, नहीं तो फिर चिलम-भी मचायेंगे, तुम इसनी सगाम बीती क्यों रखती हो ? बच्चे को ले कर तुम कैसी-कैसी हो गयी हो, जरा उगे सम्हालो।

धीरे में मुमकरा कर कुछ सजाते हुए मँडली मालकिन ने अपना पुँपट छोड़ा और घीब लिया।

रात दोपहर ढल चुकी थी। मँडले मानिक धीरे-धीरे चुपचाप पैरों में घर के भीतर घुसे। गाड़ अगधफार था, केवल दो-तीन घुंसे हुए जँगले के बीच में घर के भीतर का प्रकाश इस अगधफार में अमहाय प्रेत-वेह की भाँति काँप रहा था। इसनी मनकँता के बावजूद भी मँडले मानिक का पैर काँप रहा था। वे धीरे-धीरे भीतर गये गये। पता नहीं कौन रो उठा। मँडले मानिक घोर उठे। मुम ! थोड़ी देर बाद उन्होंने समझा कि वह बुनिया आने दुग्न की नहीं भूम पायी है। आज समझान में उन का पुत्रेष्टि यज्ञ है। नर-यज्ञ के लिए वे आये हैं। गीरी में जा कर वे दो सप्ते पर पने गये। पारी और अगधफार था। नीकरामी के बमरे में साइट जवा कर देगे, वहाँ वह बचवा नहीं था। बाहर था कर वे फिर दरामदे में कुछ मोचो लगे। हटान् उन के महिगुफ में बिजली कीप्र मघी, उन का अनुमान लग्य था—उन की पत्नी की मोद में हो यह मदका मो रहा था। धीरे-धीरे अपनी पत्नी की घाट के पास आ कर उन्होंने देखा कि उन की पत्नी के दोनों स्तन गूँसे हुए हैं। उन की बाँट पर शिशु दोनों हाथों में बबद कर और एक गज की मूँट में बाँधे घुपचाप मो मजा है। बीच-बीच में जैसे मजने में कोई हँसी

को एक रेखा बच्चे के होंठों पर फूट पड़ती है। उन की पत्नी के मुख पर जैसे तृप्ति की एक हास्य-रेखा किसी ने नूतिका में अंकित कर दी है। मैतले मालिक के मुख प्रभावित मस्तिष्क के भीतर गव 'कुछ उलटा-गुलटा' होना जा रहा था, उन के हाथ-पैर काँप रहे थे फिर भी उन्होंने अपने को दृढ़ कर के शिगु को कन्धे के ऊपर लाद लिया और बाहर चल पड़े। जल्दी में घर के बाहर आ कर मैदान में थे और तेज चलने लगे।

हठान् अमावस्या के उन अन्धकार को विदीर्ण करना हुआ जैसे कोई रो उठा। मैतली यह। मैतले मालिक वहीं पुनर्वास्य गड़े हो गए। फिर वही कारण चोत्कार जैसे गारे सत्तार की पीड़ा उस चोत्कार में पुनोभूत हो उठी हो। मैतले मालिक की छाती के भीतर जैसे तूफान बहने लगा, फिर भी उन्होंने एक बार चेष्टा की। लेकिन उन्होंने सामने देखा जैसे कोई गहरे मूर्ति उन के सामने खड़ी हो। लेकिन वह कुछ नहीं था बल्कि ताठ का एक मूला पत्ता था। यह झूल रहा था। लेकिन मैतले मानिक के मन में हुआ जैसे उन बच्चे की मौ अलक्ष भाव से अरुणी गन्तान की भिन्ना चाह रही है। उस तरफ फिर उन के घर में जैसे वही कारण चोत्कार गुनाई पड़ा। उस चोत्कार के कारण उन का हृदय अधीर हो उठा। उन की भारी कामना उड़ गयी। वे मोट पड़े। पागलों की तरह मोट पड़े।—जाना है, जाना है, मैतली यह !—ठीक उसी समय चौकीदार आवाज दे रहा था—ओ गदरदार !—मैतले मानिक के मन में हुआ जैसे वह उसी प्रकाश मानिक का आन्तर्गत है। वे आनन्द में बिस्मा उठे—मैतली यह ! मैतली यह !!

मैतली यह के अवन लगे आश्रय पाने के लिए वे प्रायः-प्राय में पड़े। घर का पाटक खुला हुआ था।

मैतले मानिक की आवाज सुन कर वह तृप्ति उठते पाग या अरुणी केदना प्रकट करने लगी धीरे-धीरे रो कर।

मैतले मानिक की आँखों में सर-सर आँसू बिरने लगे। वे बोले उठे—
नेरा बच्चा मो ॥ ने नहीं निवा दे पा ! नेरा बच्चा मैं ने नहीं दिया।

□

जलसाधर

भोर तीन बजे नियमित समय से शय्या त्याग कर विश्वम्भर राय छत पर टहल रहे थे। पुराना छानमाया अनन्त गत्तीये का आसन और तर्किया बिछा कर फरसो व तम्बाकू लाने के लिए नीचे चला गया। विश्वम्भर राय ने एक बार आँख उठा कर देखा, चिन्तु वे घंटे नहीं। जँने मिर झुकाये टहल रहे थे वहीं ही टहलने रहे। निकट ही रायवंग के काली-मन्दिर के नीचे गुप्त-स्यन्धमलिला गया धीज धारा में बह रही थी।

आकाश के पूर्व-दक्षिण कोण में भुजतारा चमक रहा था। पश्चिम-दक्षिण कोण में उस तारे के साथ भागो दीप्ति की प्रतियोगिता कर के हो दम इसाके के नये अमीर गांगुली बाबुओं के प्रामाद-सिन्धर पर तेज रोमनी वाला बन्ध अविषय जल रहा था। टन्-टन्-टन् कर के गांगुली बाबुओं के छत पर तीन का घण्टा बजाया गया। पहले दो-ती वषों से दम इसाके में राय बाबुओं के परमे घण्टा बजता था पर अब नहीं बजता। अब विश्वम्भर बाबू की नींद टूटती है अश्यागवग और बपूतरी के गुन्न में। आकाश में भुजतारा दिखते ही उन का बतरब शुरू होता है। भोर की हवा के साथ एक बटून भीनी महक आ रही है। अब वगन्त ममारोह के साथ रायवंग में नरी आता। रायवंग के पाग अब उस के श्यामन करने की शक्ति भी नहीं है। मानी के अभाव में वनों का बगीचा सूख पुरा है। बेवत

जलसाधर

मुचुकुन्द, वकुल, नागेश्वर और चम्पा के कुछ बड़े वृक्ष मात्र बच रहे हैं। वे भी इस वन की तरह ही शाखा-डालीविहीन हैं, दम बिनाल टूटने हुए प्रासाद की तरह ही जीर्ण हैं, वास्तव में कुछ पेड़ के तनों में गुराग्र भी दिखाई पड़ रहा था। उन जीर्ण शाखाओं के छोर पर बसन्त दिखाई पड़ता है अथवा वे वृक्ष ही वसन्त को पकड़ने की चेष्टा करते हैं—यह पता नहीं।

अस्तबल का एक छोड़ा हिनहिना उठा।

फरसी के ऊपर हुजरा रख कर उम की नली हाथ में ले कर अनन्त गानेमाने ने बुलाया—हुजूर।

शिवम्बर बाबू की निद्रा टूटी, घोने—हूँ।

धीरे-धीरे गलीचे पर बैठने ही अनन्त ने उन की ओर नली आगे कर दी। नीचे छोड़ा फिर हिनहिना उठा।

नली का दो-एक बार धीरे से बजसगा कर शिवम्बर बाबू ने कहा—मुचुकुन्द के फूल अब खिलने लगे हैं, आज में शरवण में देना।

मिर गुजरा कर अनन्त ने कहा—जी, उम की पगुडियाँ अभी पकी नहीं हैं।

इधर अस्तबल में छोड़ा बेचनी ने हिनहिना उठता था। एक दीर्घ श्वास ले कर राय जरा नाराज हो कर बोले—बुझाये में निने बेटे की नींद बड़ रही है क्या? जा, जरा निने को बुना तो दे। तूझान बेचन है, बुना रहा है, गुनता नहीं?

तूझान उम छोड़े का नाम है। रायगृह के भी अग्निकोश में यह एक छोड़ा अवशेष है। बूढ़ तूझान पचीस वर्ष पहले के अममगाही ज्ञान शिवम्बर राय का बिनाल बाह्य है। उम जमाने में बसो—अभी दो वर्ष पहले भी देश-विदेश के पदिक यादगाही मङ्क पर बिनाल गलेद छोड़े की पीठ पर मिर पर पगड़ी बाँधे गौरवर्न और आरोही की देग कर इस देग के मोर्गे में पूछने दें—ये बीन है, जी?

मोंग बहो—हमारे राजा—शिवम्बर राय है। बहूत बड़े सिपागी हैं, मेर मारता उन का मेर है।

अनिश्चित पवित्र भय-श्रद्धा में आँख उठा कर देखना—अन्तः छोड़ा अपने आरोही को ले कर दूर दिशा में छुड़ चुका है। दूर बेचन एक दूर

जगन्नाथ

की कुण्डली उड़ रही है, मानो एक विक्षिप्त चक्रवात घूमता-घूमता दिगन्त में मिलने के लिए दौड़ा है। विष्णाल तूफान प्रतिदिन भोर में विश्वम्भर राय को ले कर बाहर निकलता था। दो वर्ष पूर्व जिस दिन महाबन गागुली लोगों ने समारोह के साथ ग्राम-ग्राम में दोल-शोहरत के द्वारा दण्ड की घोषणा की, उसी दिन से दिघाई पड़ा—तूफान की पीठ सवार शून्य है, निताइ सार्दम लगाम पकड़ कर तूफान को टहला कर ला रहा है।

नायब ताराप्रमन्न ने एक दिन कहा था—दोने दिन का अभ्यास छोड़ने में आप की तबीयत...

विश्वम्भर की दृष्टि देख कर ताराप्रमन्न बात समाप्त न कर सके।

राय ने दो शब्दों में उत्तर दिया—छि. ताराप्रमन्न !

अनन्त नीचे जा रहा था। विश्वम्भर ने फिर बुलाया—मुनो।

अनन्त लौटा।

राय न कहा—निताइ कल बह रहा था, तूफान शायद दाना पूरा पग नहीं रहा है।

अनन्त ने कहा—मने की कमल अब की अच्छी नहीं हुई, दगलिया

नायब बाबू ने कहा।

—हूँ।

पुन फरजी में दो-चार बार बज दे कर कहा—तूफान बजा बहुत दुबला हो गया है ?

अनन्त ने मृदु स्वर में कहा—नहीं। उनका बहूँ...

—हूँ।

घोड़ी दर बाद फिर बोलने—दाना पूरा देना, ममसा ? नायब की भेरा नाम में बज बहना। तू जा, निताइ को बुला दे।

अनन्त चला गया। तब के ऊपर देख लगा कर मूँह ऊँचा कर विश्वम्भर बाबू आवाज की ओर देखने रहे। फरजी की माली बगल में पड़ी रही। आवाज के साथ तब के बाद एक बुलाने जा रहे थे। विश्वम्भर ने शायद अनमने ही बज अने घोड़े मीने पर ह्राद फेरना शुरू किया—एक, दो। पहले दिन तूफान की पीठ पर सवार होने समय इसी मीने में ही घबरा गया था। उस दिन तूफान का बिजना भयकर था। शाम बह बेचन

अननायक

बाजे के शब्द से होता था। बाजा धजने पर उस ने कभी बेतान पैर नहीं डाला। गरदन मोड़ कर उस का नृत्य देखने लायक होता था।

विश्वम्भर बाबू उठ खड़े हुए। अतीत की स्मृति तारागमूह की तरह रायवश की मर्यादारूपी सूर्य-श्रृंग में छिपी रहती है। आज ममता की छाया से उस मूर्ख में अचानक ग्रहण लग गया। स्मृति का उज्ज्वलतम पारा—तूफान उस आकाश में सब से पहले जल उठा। अज दो मान में वे नीचे नहीं उतरे थे। दो माल बाद तूफान को देखने की इच्छा हुई। गड़गड़ पैर में डाल कर राय दुनहने पर उतरे। चौक मिन ममान का बिलतुत बरामदा राय के बलिष्ठ पैर के गड़गड़ के शब्द से मुगुरित हो उठा। बरामदे के खम्भों के सिरे पर छिड़की से कुछ चकित चमगीदड़ फरफरा कर उड़ गये। इधर अंधेरे तालाबन्द कमरों के भीतर भी चमगीदड़ का शब्द गुनाई पड़ रहा था। छत की सीढ़ी के पास ही मोने का कमरा है। रुई का टुकड़ा बरामदे में पड़ा है। उस के बाद ही एक दुर्गन्ध आती है। यह जमीनपोश रखने का कमरा है। कालीन, दर्रे, गनीचा इन कमरे में रहता है। शायद कुछ सड़ा होगा। बगल के कमरे में चमगीदड़ के पंख के शब्द के साथ गुनगुन शब्द उठ रहा है। यह बत्तीपर है। बेलवारी छान के बल्लग भापद हिल रहे हैं। इन के बाद ही इन ओर का कोने का कमरा है क्राशीवरदार का। इन सब वस्तुओं का भार उस के ऊपर था। यह कमरा ग्लासी पड़ा है।

पूर्व की ओर राय मुड़ गये। यह अमीर भूमिधरो का महल है। राय के दरबार में विभिन्न जिले के बड़े-बड़े धनी भूमिधर थे। पाँच गो में पाँच हजार रुपया लगान देने वाले भूमिधरो का अभाव नहीं था। उन के आने पर वहाँ उन को ठहराया जाता था। बरामदे की दीवार पर बड़े-बड़े चित्र टंगे हैं। मुख उठा कर राय ने एक बार देखा। वहाँ में लगभग नहीं है, भोगा नहीं है, केवल फ्रेम सटक रहा है। दूसरे का भोगा नहीं है तीसरे चित्र का स्थान गुरु है। एक दीपे श्वाभ से कर राय फिर फिर नीचा कर बनने लगे। ऊपर बगुतर निरन्तर गूँज रहे थे। पूरब की ओर बरामदे के छोरे पर ही सीढ़ी है। सीढ़ी से राय नीचे उतरे। बगहरी पर राजबग के डेरी बागों में भरा है।

मात गयो का इतिहास है। विश्वम्भर राय जमींदार रायवंश के मूलतः पुत्र है। अंधेरे में राय थोड़ा हँस। उन को रायवंश के आदि-गुरु की बात याद आयी। वे कहने से शायद, लक्ष्मी की बाँधने के लिए सरस्वती की दया चाहिए। कागज पर स्वाही की टिकियों का साँत बड़ा बटन बंधन है। हिमाचल-किताब ठोक रखी—चनसा के हिलने की क्षमता भी नहीं रहनी। व ये नवाब के दरबार के कानूनगो।

कागज, डलम, स्वाही सब कुछ है पर लक्ष्मी चली गयी है। बरामदे के आगौर में एक कुत्ता कहीं अंधेरे में सोया था, वह भौंक उठा। राय परवा न कर के आगे बढ़ गये। कुत्ते का भौंकना बन्द हो गया। वह पूँछ हिला कर घूम-घूम कर बार-बार राय की प्रदर्शना करता हुआ उन के गाय चलने लगा। कुत्ते को शोकिया किसी ने पाला नहीं था। रायमहल के उच्छिष्टभोजी कुत्ते की कोई तन्त्रति थी यह।

कपहरी का चौघट साँप कर दायी ओर मोशासा और बायी ओर अस्तबन है। उस के उम ओर देवमन्दिर है।

राय ने बुलाया—निताई !

गम्भ्रम गहिर उतर आया—हुनूर !

तूफान की तेज हिनहिनाहट में वह उतर मुनाई न पडा। उधर से एक हाथी का गर्जन मुनाई पडा।

राय आगे बढ़ कर तूफान के सामने आ कर खड़े हो गये। चक्कर हो कर वीर ठोक कर बूढ़ तूफान मिगु की तरह हो गया। उम के मुख पर हाथ फेर कर राय ने कहा—बेडा।

तूफान मानिक के हाथ पर गिर विमाने लगा। उधर हाथी भी चक्कर हो उठा था। लगातार बुना कर वह वीर का गाँवस तोड़ने की कोशिश कर रहा था। महावत रहमत स्वामी की आवाज सुन कर उठ कर आ कर अपने हाथी के पास खड़ा था। उम ने धीमे निष्कासन के स्वर में कहा—हुनूर, छोटीगिन्नी गाँवस तोड़ डालेगी।

गिन्नी का नाम छोटीगिन्नी है। विश्वम्भर की माँ के बिराह की दहेज है वह छोटीगिन्नी। तब नाम था मनि। बिगु मानिक घनेश्वर राय निवार ने लोट कर मनि कहने पादम हो उठे। मनि ने एक तेर बोझ में

जन्मावर

पकड़ कर पैर से रौंदा था। मति के प्रति प्यार का आधिपत्य देख कर विश्वम्भर की माँ ने उस का नाम रखा था सीत। मालिक ने कहा था, यही ठीक है रायगिन्नी, उस का भी नाम 'गिन्नी' रहे।

विश्वम्भर बाबू को माँ ने कहा था—केवल गिन्नी नहीं—छोटी गिन्नी, वह तुम्हारी दूमरी शादी की स्त्री है।

रहमत की यात पर विश्वम्भर बाबू तूफान को छोड़ कर छोटी गिन्नी के पास गये। पीछे तूफान का असन्तुष्ट हेपारख ध्वनित होने लगा। राम ने छोटी गिन्नी से कहा—ब्या है माँ लक्ष्मी? छोटी गृहिणी ने अपना सूँड टेढ़ा कर राय के सम्मुख रखा। यह उन को सवार होने के लिए अनुरोध था। राय हाथी पर चढ़ते थे सूँड द्वारा।

राय उस की सूँड पर हाथ फेर कर बोले—अभी नहीं माँ! छोटी गिन्नी ने अर्ध समझा। यह सूँड राय के कंधे पर रख कर सीधी बप्पी की तरह ही शान्त खड़ी रही। राय ने कहा—निताइ, तूफान को घुमा सा।

अपगत सकोच के माथ निताइ ने कहा—तूफान अब जायेगा नहीं आज हजूर! आप को देखा है, आप के सवार न होने पर...

राय ने इस बात का कोई उत्तर न दिया। छोटी गिन्नी की सूँड पर हाथ फेरते हुए बोले—माँ मेरी बड़ी सीधी लक्ष्मी है।

अपानक शान्त उपाकाल की स्तब्धता को तोड़ कर विचित्र सगीत में बही बैण्ड बज उठा। चकित राय छोटी गिन्नी का सूँड उतार कर घिसक के आ कर बोले—बैण्ड कहाँ बज रहा है?

निताइ ने धीमे स्वर में कहा—गांगुलीपर में बाबू के लक्ष्मी का मन्त्रप्राशन है।

अभ्यास के अनुसार राय ने कहा—हूँ।

तूफान ने तब घरदन टेढ़ी कर ताल-ताल पर नाचना शुरू किया था। राय मोड़ा हँग कर उग के पास जा कर खड़े हुए। पीछे छोटी गृहिणी के पैर की मालिश भी ताल-ताल पर नूपुर की तरह पड़ रही थी—तुम-तुम-तुम।

राय चौपट साँप कर अँधेरे महल में जा कर चुमे। उन को जाना—बभी भोर के रोगनपीकी के साथ ही इसी तरह के मिया

करते थे—एक ओर तूफान, दूसरी ओर छोटीगिन्नी ।
दुतत्वे पर उठ कर उन्होंने बुनाया—अनन्त !

—दुजूर !

—नायब को बुला दे ।

राय छत पर जा कर बैठे । प्रोब नायब ताराप्रसन्न के आ कर चुप-
चाप सामने खड़े होन ही उन्होंने कहा—मर्हम गागुली के लडके का अन्न-
प्राशन है ?

—जी हाँ ।

—नायब निमन्त्रण आया है ?

कुण्ठित हो कर ताराप्रसन्न ने कहा—हाँ ।

—एक गिन्नी और एक घाली—एक काँस की घाली ही भिजवा
देना ।

ताराप्रसन्न चुपचाप खड़े रहे । प्रतिवाद का साहम उन में नहीं था ।
किन्तु यह दन्तज्ञान भी सन्तापजनक नहीं हुआ ।

राय ने कहा—एक मोहर भरे पात्र में ले जाना ।

नायब चला गया । राय चुपचाप बैठे रहे । अनन्त आ कर दुबका बदल
कर नली पकड़ कर बोला—दुजूर !

राय ने जम्मा के अनुरार हाथ आगे कर दिया । उस के बाद
कहा—छाटी गृहिणी की पीठ की गद्दी, कालीन, घण्टा निवास देना ।

पहले तीन पुरानों में राय ने सबय किया था । अनुरार में राजय किया
था । पचम और षष्ठ पुराने में किया भोग और श्रृण । सप्तम पुराने विषयभर
के उमाने में राय-परान की सदमी श्रृणममुद्र में डूब गयी । विषयभर

सामोहिन दबराज की तरह बेवकूफ बैठे-बैठे देखते रहे । केवल यही नहीं ।
रायवंश का इस मानवे पुरान में निवेश भी हो गया । जिने के प्रत्येक व
हार्दकोट के विचार के निर्देशानुसार रायवंश की सदमी सब पिढारी हाथ
में निवे । पर पर छोटी थी । प्रनीता भी बेवकूफ प्रिविवाउमिन के आदेश
की ।

पुन के उदयन के अवसर पर रायवंश विनास उगव में मुगुरित हो

जतमापर

उठा था। दान-भोजन, विलास-व्यसन पूर्णिमा के ज्वार की तरह बढ़ उठा था। उम के बाद ही प्रारम्भ हुआ भाटा। भाटा के पिचाव में रायवण का मारा प्रवाह समाप्त हो गया था। सातवें दिन विलास विप हो उठा। पर में हँसा का प्रकोप हुआ। उस के बाद सात दिन के बीच में रायगिन्नी, दो पुत्र, एक कन्या, कुछ सम्बन्धी सब समाप्त हो गये। केवल विशम्भर राय भगवत्प्रशयन की प्रतीक्षा की तरह सिर झुकाये मृत्यु की प्रतीक्षा करते बैठे रहे।

गलत कहा गया। मृत्यु की प्रतीक्षा उस दिन में कर रहे थे कि नहीं बोन जाने, किन्तु नतसिर हुए और भी दो माल बाद। त्रिम दिन प्रिय-कावन्मिल के फैमले का पता चला—उस दिन। मही तो म्यो-गुन-नन्या की मृत्यु के बाद भी हम घर के उत्सव-गृह में रोगनी हुई है, नितार-नारगी और पुंफल यजे हैं। विराट् हास्यवर्णन में अन्धकार रात्रि चकित-नन्या हो उठी है। छोटी गृहिणी का पीठ पर चिकार का होश पडा है। मूरान ने उस दिन भी रोप और क्षोभ में वन्धन तोडा है।

घर, प्रिविकावन्मिल के फैमले से रायवण की भू-मन्गति सब समाप्त हो गयी। रह गया मकान व लाघराज का स्यामी बन्दोवस्त मात्र। राद-बंग के आदिपुरुष ने कागज-कलम से इतने को ऐसा बाँधा था कि उमने छूने की क्षमता किसी की भी नहीं हुई। उमी बन्दोवस्त में ही देवनेवा होनी है, छोटीगिन्नी का निश्चित चावव आता है, रहमत की येनन दिया जाता है। गशेष में अभी भी जो कुछ है वह उमी बन्दोवस्त के ही बन्धान में। वह महीने के प्रारम्भ में ही चावत आता है—महीने भर का बादशाहभोग चावत, प्रतिदिन प्रातः सायराज ताताब के बन्दोवस्त के कारण मछनी बागी है, उमी ताताब में ही जलवर पत्नी के बन्दोवस्त के पन्थमन्त्र परी जाता है। यह सब अतीत है पर स्मरणनीय नहीं। इसी कारण उमी ओले दुर्लभ हुए राजमहल का नाम अब भी राजमहल है, धनहीन विशम्भर राय का नाम ही इस इलाके में राय हुआ है।

परी है नरे ममीर गांगुली बाबुओं के क्षोभ का कारण। उन्होंने मरे हपी की वस्त्र में मोने की दीवाल पड़ी थी थी। पृथिवी उन मरे हपी की ही देवती थी, मोने की दीवाल की ओर कोई देखता भी नहीं। उन के

कीमती मोटर से बूढ़ा छोटीगिन्नी की यातिर अधिक है।
महिम गांगुली मोचता है—दस मने हाथी को हमें हटाना ही है।

छोटीगिन्नी की पीठ पर घण्टा बंधने ही वह गविणी की तरह अपना
शरीर दिसाने लगी। घण्टा बजने लगा—टन्-टन्-टन्।

नायब ताराप्रमन्न आ कर विश्वम्भर बाबू के सामने खड़े हो गये।
विश्वम्भर बाबू अन्दर के हॉल-कमरे में बैठे थे। अब यही एक कमरा वे
काम में लाते हैं। दीवार पर रायवश के मासिक-मासिकों का चित्र टंगा
था। मय की प्रौढ़ावस्था की समबोर है। मय के शरीर पर बाली मांसा
की नामावली है, गले में रक्षा की मांसा और हाथ में जपमाना है।
विश्वम्भर बाबू उमीलमयोर को ओर देख रहे थे। नायब को देख कर घीरे-
घीने आंग फेर कर बोले—अनन्त, हाथ-बचन दे तो।

हाथ-बचन से सोहे के मन्दूक की पापी ले कर मन्दूक उन्होंने घोष
झाना। मन्दूक के ऊपरी स्तर पर रायवराने की सदमी का दिवारा गुप्तो-
भिन था। नीचे दो-तीन बचन थे। राय ने एक अस्पष्ट गुदर बचन गीब
निकासा। यह उन के मृत पत्नी के गहने का बाल है। राय ने बचन घोषा।
उस का गर्भ करीब गुप्त ही था। अलकारी में एक मौल-टीका बच रहा
था। यह टीका मान पुरुषों के वधूवरण की मासिक सामग्री है। इस के
गिवा मय गहना जा चुका है। बचन के एक हिस्से में कुछ मोहरें रगी थीं।
इस में से कुछ रायगिन्नी के आशीर्वाद की मोहर हैं, कुछ युवक
विश्वम्भर का पत्नी को प्रथम उपहार। शिवाह के साल ही वे पहली बार
दोरे पर गये। नवराते की मोहरों में से कुछ उन्होंने पत्नी को उपहार में
दिया था। उमी में से एक उन्होंने नायब के हाथ पर पुरस्कार रख दिया।
नायब खता गया।

कुछ देर बाद ही छोटीगिन्नी के पंखे का मन्द तेज हो गया। मय आ
कर जिहवी पर खड़े हुए।

छोटीगिन्नी के मांसे पर लेम दिया गया है। मवाद के तैमनित प्रंग
पर गिन्दूर की रेखा है। छोटीगिन्नी शिखरी-शिखरी बच रही है।
लामने प्रहृष्ट गांगुली बाबू का बचनमाना मोटर आ कर रायमह्य की
दूरी देहमोत्र पर गिरा हो गया। गाड़ी में अब महिम गांगुली उतरे।

अनन्त

नाथय ताराप्रसन्न जल्दी-जल्दी बाहर आ कर सादर स्वागत करने हुए बोले—आइए-आइए ।

अनन्त ने भी दुत्तले से यह घटना देखी थी । यह जल्दी-जल्दी नीचे आ कर रायमहल के खास बैठक का किवाड घोल कर चला गया ।

महिम ने कहा—दादा जी कहीं हैं—भेंट करनी है ।

गांगुली यंत्र ने जमाने से राय-दफ्तर के इलाके में महाजनी की है ।

महिम के पिता जनार्दन तक ने रायवश के मानिक को हुजूर बहा है । तारा-प्रसन्न महिम के यात करने के तरीके में असन्तुष्ट हो उठा था । लेकिन शास्त्र स्वर में बोला—हुजूर अभी उठे नहीं । ग्या कर गोये है ।

महिम ने कहा—बुला कर उठाने को वह दीविए ।

ताराप्रसन्न ने सूझी हँसी हँस कर कहा—वह साहस हम में ने बिमी में नहीं है । न हो आप मेरे से कह जाइए क्या कहना होगा, मैं कह दूँगा ।

अमहिष्णु हो कर महिम ने कहा—मुझे भेंट करना ही है ।

अनन्त ने आ कर चाँदी के गिलास में महिम के सामने शर्बंठ रखा । गिलास में कर महिम ने अनन्त से पूछा—दादा जी उठे हैं ?

—उठे हैं । आप की भूषणा दी है । आप को वे बुला रहे हैं । शर्बंठ पी कर महिम उठते हुए बोले—बाह, बड़ी अच्छी खुशबू है ! बिग चीज का शर्बंठ है रे ?

अनन्त झूठ बोला—जी, काशी का ममाना है, मुझे टीक पना नहीं । दुत्तले के दमरे में घुमते ही महिम ने कहा—बहाँ दादा जी, आर खाना खाने नहीं गये ?

विश्वम्भर ने हँस कर कहा—आओ-आओ, भाई !

महिम ने कहा— मुझे क्या दुख पहुँचा है दादा जी !

जगी तरह हँस कर विश्वम्भर ने कहा—दादा जी को बुद्धा जल पूर आओ भाई ! बुद्धा हैं, निष्कम का उन्नयन गरीर को नहीं गृहता ।

महिम ने कहा—वह दुख तो भूल जाऊँगा, पर रात पछाना ही होगा ।

विश्वम्भर गुडगुदा पीने के बहाने मौन रहे ।

महिम बोला—दादा—बड़ी समझा से सदयक मे ।

है, उस के गाने की कद्र आप के बिना हम लोग नहीं समझेंगे ।

कुछ देर चुपचाप तन्म्याकूषी कर हुक्का की नली राख ने रख दिया । उस के बाद बोले—भाई महिम, मेरी तबीयत बहुत खराब है, हृदय मे एक ददं उठता है दघर बीच, वह बीच-बीच मे मुझे बहुत परेशान कर डालता है ।

महिम कुछ देर चुप रह कर बोले—अच्छा, चर्लू दादा जी ! मुझे एक बार गदर जाना है । साहबों को ने आना है, वे सब आयेगे न ?

विश्वम्भर ने केवल कहा—दुःख मत करो भाई !

महिम कमरे से बाहर निकल आये । घरामदे में एक बार छडे हो कर महमा घोल उठे—घर को क्या बना रखा है दादा जी ! घरम्मत की जरूरत है न ?

उस बात का किमी ने उत्तर नहीं दिया ।

अनन्त केवल बोला—आइए दूबूर !

गांगुलीपर में नाच की बैठक प्रकाश में घमक रही थी । सँदोरे के पारों और नाना रंग के घल्ल जल रहे थे । गांगुलियों का अपना हायनमो था । द्योत्क्रिफ तार की लाइन खड़ा कर बिजली की व्यवस्था की गयी है । प्लेटिफो को पेड की पत्ती व फूल में गाया गया था । रंगीन बागुन की माना पारों और में झूल रही थी । नीले दरी पर चादर बिछा कर बैठक लगी है । एक ओर कनार में कुरमियाँ लगी हैं, दूसरी ओर बिजलुन जिगरे पर गाधारम थोताओं का स्थान था । थोड़ी ही दूरी पर महिमाओं का आगम था ।

राज आठ घंटे ही बैठक भर गयी । सबनची, मारंवी घाने भरने-अपने घन्ना का काम रहे थे । पत्रिमन्त्री तरफ नर्वेकी अन्नबारी से मगिज हो कर भा बैठे । बैठक का कोणाटन क्षण में जाग्य हो गया ।

गाना प्रारम्भ हुआ । उधर कुरमी पर विनिष्ट थोताओं में महिम गांगुली बैठे थे ।

सो न कि जो मे मे घड़ी ने उठ कर गाना प्रारम्भ किया था । रायिनी के दोने आगा ने बैठक मानो बेजान-जा हो गया । थोताओं में घोरे-धीरे घानपोग होने लगी । विनिष्ट थोताणदी में किमी बात पर हाय-नहिदान

चल रहा था। गागुलियो का चपरामी का दल माघारण थोना के पीछे आ कर चुपचाप कहने लगा।

गाना समाप्त होने के प्रारम्भ में महिम मम्भनावन बोल उठे—वाह-वाह !

ननकी की मृत्युमति जरा धीमी हो गयी। गाना समाप्त कर वह बैठ गयी। तटणी के साथ थोड़ा भुगकरा कर कुछ यात कर के ध्रुव उन की उठन का इशारा किया।

देखने-देखने सभा जम गयी। बदल गति के कण्टममिति और गपल-नृत्य में मानो एक पहाड़ी तरना सभा के मध्य में कूद पड़ा। तारीफों के पुल से सभा में एक जोर मन उठा। विविष्ट धोनामहल में रपवा, नोट का पुरस्कार आया।

उन के बाद फिर-फिर वही। सभा फिर धैर्यमान नहीं हुई। सभा-मममिति पर महिम ने बुला कर कहा—गव बहुत खुश हुए हैं।

मलाम कर के उदेष्टा ने कहा—आप की मेहरबानी।

सब महिम की मेहरबानी का अन्त नहीं था। तीन दिन के बसाने के स्थान पर पाँच दिन तक गाना हुआ।

विदाई के दिन और भी मेहरबानी उन ने की। विदा कर के वह दिया—पहली हम सोमो का राजमहल है, एक बार हो जाना। फिरगभर राय ममगदर अमीर ध्वजित है। जायद गाना हो सकता है।

उदेष्टा ने मन्त्रम में कहा—उन की बात हम ने सुनी है दूर, गव-बतादुर के दरबार में उरर दाऊगी। वह दूकटा मेरी पाल में ही है।

ताराप्रगन्न मन-ही-मन आगदबूला हो उठा। उन ने खुद ममता था—वह उन कुटिन महिम गागुली की कूट धान है। धागिर में एक थैला द्वारा अनमान की कोशिश की है। उन ने गम्भीर हो कर कहा—बाहू की गवीदन ठीक नहीं—नाच-गाना अभी नहीं होगा।

उदेष्टा ने कहा—मेहरबानी कर के...

रोक कर ताराप्रगन्न ने कहा—कहाँ नहीं होगा।

बाई की ने दुगिन हो कर कहा—मेरे नहीं है !

वे लोग उठन की मैदारी करने लगे।

इतने में दुतल्ले से पुकार आयी—नाराप्रसन्न !

ताराप्रसन्न के आते ही विश्वम्भर ने कहा—वे कौन हैं ?

मिर झुका कर ताराप्रसन्न ने कहा—गांगुलियों के घर ये ही सोम मुजरा करने आये थे ।

—हैं ।

उन के बाढ़ घोड़ा रक कर बोले—घाला को लौटा दिया ?

—दुबूर को गलाम पहुँचे । मुमलमानी कापड़े से कर्तौ तालामी दे कर बाई जी गामने आ कर छोड़ी हुई ।

कापहरी घर से दम और बरामदे व कमर का घोड़ा हिस्सा दीयता है । विश्वम्भर का कण्ठम्बर मुन कर बाई जी उठ आयी ।

बिना इतला के ऊपर चढ़ आने से विश्वम्भर नाराज हुए थे, पर उन का वह गुस्सा टिका नहीं । बाई जी के सौन्दर्य ने उन का चित्त कोमल कर डाला ।

बाई जी ने फिर गलाम कर के कहा—कुभूर माफ करने का हुक्म हो मेहरबान, बिना इतला आ पड़ी हूँ ।

विश्वम्भर बाई जी का सौन्दर्य देख रहे थे । अनारदाने की तरह रंग, मुरमा लगी बड़ी दो आँखें—मादकता भरी नजर, गुलाब की पंखुड़ी की तरह दो मोठ, घोड़ा मम्बा बदन, क्षीण बटि, नृत्य ने माने आत्मसदृश उम के शरीर में विधाम लिया है । इस के वक्ल होने ही वह मुघर हो उठेगा ।

विश्वम्भर ने प्रसन्न हाव्य के साथ कहा—बैटिए ।

निबट के गर्मीधि पर बाई जी सम्प्रम सहित बैठ कर बोली—दुबूर बहादुर के दरबार में बीसी गाना सुनाने को हाजिर है ।

विश्वम्भर कहना चाहते थे—उन की तबीयत खराब है । पर कुछ लग्नाली हुई, एक लबायत के सामने झूठ बोलने में साधद घूना हुई ।

बाई जी ने कहा—गड के मूँट में मुना है, यही दुबूर बहादुर को समझाता है ।

लादुता बाबू ने भी कहा—अमीर, यहाँ के राजा आर है ।

राय के हुक्मे की आवाज बन्द हो गयी । मूँट हँग कर बाई जी के दुय

की ओर देख कर बोले—शाम के समय मुझरा होगा।—उस के बाद सुनाया—अनन्त !

अनन्त बाहर ही था। सामने आते ही बोले—इन सोंगों को टहरने की जगह दो। नीचे तालुकदार का एक कमरा खोल दो।

अनन्त ने कहा—आइए।

अनन्त का अनुसरण कर के वह चली गयी।

नायब ताराप्रसन्न खड़ा था। निर्वाक हो कर वह खड़ा ही रहा। थोड़ी देर बाद उस ने कहा—गांगुली बाबू के यहाँ सौ रुपया एक रात का लिया है उन सोंगों ने।

—हैं।

कुछ बार कश लगा कर राय ने कहा—तुम्हारे घाते में कितना... रात अतमाप्त रख कर उन्होंने फिर हुक्का पीना शुरू किया। ताराप्रसन्न ने कहा—देवोत्तर के घाते में केवल डेढ़ सौ के करीब है।

थोड़ी देर चिन्ता कर के राय ने उठ कर सोहे का मन्दूका खोल कर वही बखस बाहर निकाला। बकम के मध्य से रायबंग का मांगनिक मांग-टीका उठा कर ताराप्रसन्न के हाथ में दे कर कहा, देवोत्तर के घाते में गर्ब लिखो—आनन्दमयी के लिए जड़ाऊ मांग-टीका गरीदा, मूल्य वही डेढ़ सौ रुपया।

आनन्दमयी रायबंग की दृष्टिदेवी पापानमूर्ति जाती हैं।

चट्टन दिन बाद शान्त रायमहन ताता खोलने के शब्द में मुखरित हो उठा। जलसापर का चिड़की-किवाड़ खोला गया। रोगनी के कमरे का ताता गुत्ता। जमीन-पीन के कमरे में प्रकाश का प्रवेश हुआ।

अनन्त परन्दार साफ़ कर रहा था। निताइ व रहमत उन की मत्प्राप्ति कर रहे थे। टाकुट्टारे की पुरानी नौकरानी मत रही थी—बड़े-बड़े पराश, गुड़गुदा, गुनायराग, इनदान। नायब ताराप्रसन्न खड़े हो कर मजबोर का मुआइना कर रहे थे।

अनन्त ने कहा—नायब बाबू, शहर बादनी भेजना होगा।

नायब ने कहा—मैं ने निस्ट बनाया है। मुनो, देखूँ कुछ घूना है कि नहीं ! निस्ट गुन कर अनन्त ने कहा—कर है, बेचन दो खीज छूरी है।

दो तोला के करीब द्रव और विलायती बोटस कुछ ।

नायब ने कहा—एक तो या ।

—उम में अब थोड़ा ही है । बीच बीच में थोड़ा-थोड़ा पीते हैं न ।
लेकिन आज यदि मांगे, तो एक बोटल में न होगा नायब बाबू !

नायब ने कहा—लेकिन भेजू किसे ? पैदल जा कर शाम के पहुँचे
क्या कादं लीटेगा ?

अनन्त ने हिचकिचा कर कहा—तुफान को से कर निगाह ही न हो
आवे ।

निगाह ने कहा—दुर्जुर के हुक्म न करने से...

नायब ने कहा—मच्छा, मैं कह आता हूँ ।

विश्वम्भर बाबू सोचें ये । नायब के जा कर छड़े होने ही बोलें—मुझे
बुलाने की नाच रहा था । एक बार गांगुलीपर जाओ । महिम को
निमन्त्रण का आओ । और गाँवों में बड़े-बड़े लोगों को धुन-धुन कर
निमन्त्रण करना होगा । गांगुलीपर तुम स्वयं जाओ ।

नायब ने कहा—यही होगा ।

राय न कहा—छोटीगिल्ली की पीठ पर गद्दी देने को कहो ।

नायब न कुछ देर प्रमीक्षा कर के कहा—तुफान को से कर निगाह
को मदद भजना जरूरी है ।

—है ।

चोरी देर बाद राय बोलें—ठीक है जाने ।

और चाही दर बाद तुफान की हिनहिनाहट सुन कर राय ने गामने
की गिरकी ध्यान दी । घर के पीछे में देवदार छायो से बड़े, रायों की
निजी गढ़क दिखाई परती है । छोटे के गुर का शब्द उन गढ़क पर बज
उठा । पैसी ही टूटो गड़गन, पैसा ही पदचोप ।

और चाही दर बाद छोटीगिल्ली की पीठ का पन्ना बज उठा । राय
उठ बैठे । गिरकी में देजा, गिरकी छोटीगिल्ली बनी जा रही है । राय
दिग्गज छोड़ कर बगने की धूमि पर टहलने लगे । देह-मन उन का बचन
हो उठा है ।

ममारोह ! रायमहन में दीर्घकाल बाद ममारोह हो रहा है ।

उधर के जलसागर से ही शायद शब्द आ रहा था—उ—ग,—टु, नं। बेलवारी झाड़ का शब्द। राय कमरा छोड़ कर बरामदे में निकल पड़े। अनन्त झाड़-दीवालवस्ती हर दूक में टाँग रहा था। आवाज गुन कर द्वार की ओर उम ने देखा। द्वार पर, विश्वम्भर राय खड़े थे। वे देख रहे हैं—दीवाल की तमबीरों की ओर। बिराट् हॉल-कमरे में चारों ओर की दीवाल पर रायवंश के मातृका की युवावस्था की तसवीर लटक रही है। आदिपुरुष भुवनेश्वर राय से ले कर उन की अपनी भी—सब की पिता-भोग तसवीर। प्रपितामह रावणेश्वर राय खड़े हैं—शिकार बिचे गेर पर पैर रख कर, हाथ में है बल्लम, पीठ पर डाल। पिता धनेश्वर गद्दी पर बैठे हैं, बगल में छोटीगिन्नी। मुक्क विश्वम्भर तृपन्न परसवार है।

रायवंश इस कमरे में आधी के समान सेल सेल गया है। राय को किननी बात याद आयी। प्रचण्ड रावणेश्वर इस बंश के प्रथम भोगी पुरुष रहे। उन्होंने ही यह जलसागर बनवाया था। बल्लु भोग करने का साहम उन्हें नहीं हुआ। पहले जिस दिन इस कमरे में मजलिस बँटी, उसी दिन रावणेश्वर के रत्नी-मुत्र मज द्युतम हो गये। बत्तीदान की बत्ती आधी जल कर ही बुझ गयी। उम के बाद फिर उन्होंने साहम कर के जलसागर का द्वार नहीं खोला।

उसी दिन रायवंश की समाप्ति हो जानी तो अच्छा था। बल्लु रावणेश्वर ने रायवंश की ममता में पुनः अपनी गाली के गाय विवाह किया। वे कहते—मह उन की आनन्दमयी का आदेश है। उन्हीं के पुत्र रावणेश्वर राय ने इस जलसागर का विवाह खोल कर पुनः रोगनी की दी। उन्होंने एक रात में इसी कमरे में एक अमीर मित्र के गाय प्रशि-मोदित कर के पीस ली मोहर एक बार्ड जी की बरसीग दिया था। उन की अपनी बात भी याद आयी—बन्दा, बन्दाबार्ड! गभा धगम होने के बाद मित्रों ने छिपा कर बन्दा के गाय रोगनी हृदय में अवर है। पून के दुष्टों की तरह ही बन्दा।

अनन्त के हाथ का काम बन्द हो गया। मातृका के मुख की ओर देख कर उम का हाथ हट नहीं रहा था। राय का मुख दम्भीर ओर मातृका —मानो बिही बन्द शिरा का मुख काय पुन कर द्युत पुन की धार

बैठन कर निकल आयी हो।

सन्ध्या के पहले अनन्त ने परात के ऊपर चाँदी के गिलास में शर्बत रख कर राय के सामने धूपचाप रखा। राय ने देखा—अनन्त के शरीर पर जरीदार चोबदारों की बर्दी, कमर में पेटो, सिर पर पगड़ी, सीने पर राजपर का बिल्ला है। उन्होंने धूपचाप गिलास उठा लिया। अनन्त धसा गया। कुछ देर बाद सौट कर सामने चुन्नटदार धोती, सफेद महीन मुमल-आनी कुरता और रेसम का चादर उतार रखा। राय ने पहचाना, पाँच साल पहले मुँगिदाबाद के जमींदार मित्र के घर जान के लिए यह पोशाक बनवाई गयी थी।

पूछा—सब ठीक है ?

मृदुस्वर में अनन्त ने कहा—रोगानी की जा रही है।

—आदमी ?

अनन्त ने कहा—नाथराजदार के भण्डारी बाप-बेटे आये हैं। चार सिपाही आये हैं, वे देहली पर हैं।

नीचे मोटर का हॉर्न गुनाई पड़ा।

अनन्त शीघ्र नीचे उतर गया। महिम गांगुसी आये हैं। सीढ़ी पर चलते-फिरते का शब्द गुनाई पड़ रहा था। नीचे की मजिस् पर अतिथि-गस्कार का सादर सम्भाषण गुनाई पड़ रहा था, परस्पर वार्तालाप का मूँजल उठ रहा था। त्रमजः जयगाथर में तारपत्र का मृदु स्वर इमिति हुआ। तार कगा जा रहा है।

अनन्त ने आ कर किबाड़ के पास खड़े हो कर बुलाया—दूर ! विश्वम्भर बेप बहाल कर कमरे में टहल रहे थे। बोले—हूँ।

—गमा जम नहीं रही है।

—हूँ।

कुछ मुट्ठें बाद बोले—जुता दे।

अनन्त ने कमरे के बीच में खड़े हो कर जरा हिचकिचा कर कुरचा के नीचे की टेबिल का दरवाजा खोल कर बोलम और निजाम बाहर निकाला। दरवाजा पर उसे उगार कर वह जुता निजाम कर आखने बैठा। राय दर

बार रुक गये। फिर टहलने लगे। नीचेयन्त्र सगीत का स्वर क्रमशः ऊँचा उठ रहा था।

अनन्त ने कहा—दुजूर।

राय ने केवल कहा—हूँ।

फिर कुछ दफ़े वे धूमे। वह गति थोड़ी तेज थी। अनन्त प्रतीक्षा में पड़ा था। धूमते-धूमते राय टेबिल के किनारे पड़े हो कर ही बोले—सोचा।

बिनाल हॉल के तीन ओर लम्बे टुकड़े की तरह गद्दी बिछा कर उन के ऊपर कासीन बिछा कर श्रोताओं के बैठने का स्थान निश्चित किया गया था। पीछे कतार में तकिया था। हॉल की छत पर पाग-यास तीन बेतबानी झाड़ में बत्ती जल रही थी। दीवान पर दीवाल-गिरी में बगी की रोगनी हवा से थोड़ी काँप रही है।

झाड़ और दीवाल-गिरी में से कुछ में शेट न रहने के कारण हवा से वे गुन-गुने हैं। दीवाल पर इसी कारण में बीच-बीच में छोटी-सी छाया दीर्घाकार में दिखाई पड़ रही है मानो प्रच्छन्न दुःख हो।

सभा बैठ चुकी है पर गति अभी मन्द है। याग्निक बाजे की शब्द-मंजुर की तरह मुनाई पड़ रही है। चारों ओर बड़े तीम-चानीग लम्बे धीरे-धीरे बात-लाप कर रहे हैं। चार-पाँच गुह-गुहे और प्रती में तम्बाकू भरा जा रहा है। दोनों तबलफे धुप-धाप बीठी है। बीच-बीच में बेरस महिम गांगुली का कण्ठस्वर मुनाई पड़ता है। तिमरेट का बग मगा कर वह गुमती हुई बत्ती की ओर देख कर उठा—बुछ बत्ती बुत जो दनी भाई!—बिमी ने इस बात का उत्तर नहीं दिया। उन ने बुलाया—मायब बाबू! ताराप्रमन्न के बिबाह के मामले गढ़े होने ही बह बोले—मुनिए, रोगनी ठीक नहीं हो रही है। मेरे झाइपर से बह बीजिए, दो पैदोमैरम से आये।

मायब धुप रहा। ज़ेप्टा मंजु की मे बेबल उर्दु में मानो खोली-बारेने हुए बरा—इस बमरे में बह रोगनी बना शोभा देदी?

बाहर भारी पैर के जूते की आवाज से मायब पीछे मुड़ कर देख कर लम्बान से हट गया। मूर्त बाद ही अनन्त के पीछे बिबाह के मामले का

कर पड़े हुए विश्वम्भर राय । दोनों बाई जी सम्मान में पड़ी हो गयीं । मञ्जलिस के गव उठ पड़े हुए । महिम भी अपने अनजान में साधे उठ कर अचानक फिर बैठ गये ।

राय थोड़ा हँस कर बोले—मुझे जरा देर हो गयी । फिर उन्होंने आसन ग्रहण किया । तक्रिया खोच कर महिम ने धिमका दिया । जब से सम्मान निकाल कर तक्रिया को कुछ दफा झाड़ कर विरक्त हो कर उस ने कहा—बाप रे बाप, कितनी धूल ! ताराप्रमन्न इन बाँट गया । सारे गुड़-गुड़ा-फर्शों का किलम बदल कर राय के सामने उन की अपनी फर्शें रख कर मनन ने हाथ में नसी पकड़ा दी ।

बड़ी मर्तकी कोनिश कर के उठ पड़ी हुई । सगीत प्रारम्भ हुआ । उगी दीर्घ धीर गति में रागिनी का आलाप । मैरिन एक पैविश्य था । आज मभा निस्तब्ध थी । राय आँख बन्द कर सम्भोर हो कर बैठे हैं । दीर्घ मन्द गति की तुलना में उन की बिनास देह थोड़ी हिन रही है । दक कर उन के माथे हाथ ने बगल के तबिये पर एक मुटु आघात किया । ठीक उगी के माथ तपलची का तबसा झकार दे उठा । राय ने आँख मीची, माई जी के पैर के घुंघरू में धीमी द्यनि प्रारम्भ हुई थी । नृप्य प्रारम्भ हुआ । कन्तारी का नृप्य । आकाश में मेघ देख कर उगावसी मगूरी की तरह नृप्यगगी है । गरदन थोड़ी टेढ़ी है । मगूर-शुष्क की तरह तागा-जाग पर नाच रही है । घुंघरू की द्यनि तेज हो उठी ।

राय कह उठे—बाह !

माथ ही माथ मर्तकी की परल चपलता मान्य हो गयी । उपर गवने पर समाप्ति का आघात हुआ ।

महिम धिमक कर आ कर राय के कान में बोला—दादा जी, मभा जम नहीं रही है, कन्त मूखड़े लगा है । कृष्णाबाई ने गव ठंडा जी कर दिया ।

कृष्णाबाई थोड़ा हँसी—शायद उस ने ममता । भजन ने शरंग ला कर महिम के सामने रखा । महिम ने कहा—रूने ही, कुछ दिन से रात जगने के कारण जुकाम है मुझ को ।

राय ने थोड़ा हँस कर मनन को इगारा किया ।

अनन्त लौट कर एक परात में हिस्रती, गोटा की बोटन और गिनाम
ने कर द्वार पर धा कर खड़ा हुआ।

पेय प्रस्तुत कर के अनन्त ने महिम को दिया और दूसरा गिनाम उठा
कर लम्बा की ओर देखा। सब फिर झुकाये बैठे थे। उन ने पितृम्भर
बाबू के सामने गम्मान के साथ पेय बट्टा दिया। राय ने चुनवान गिनाम
उठा लिया। महिम बहुत देर में छोटी नर्तकी को देख रहा था। थोड़ा हट
कर बैठ कर बोला—पियारी बाई, तुम एक दफे आग फेंका दो जरा।

पियारी ने गाना प्रारम्भ किया—नीत्र गति थी। राय जोग मूँडे थे,
एक बार शवसर ने घोने—जरा धीरे ने।

लेकिन अभ्यासयुक्त पियारी में बचपन नृत्य और चान मगीन में मज-
लिंग ॥ मानो फेन के अनमिलित गुप्पारें उड़ा दिवें। महिम बार-बार हाँकने
लगा—बहुत अच्छा !

राय माहुर की भीहे निकुड़ गयी थी। महिम का शरब का उच्छ्वास
उन्हें पीड़ित कर रहा था।

किन्तु फिर भी वे मगीनमुग्ध अत्रयर की नरदृष्टि रदे थे। गरीर में
रायबग की उग्र रक्तधारा और देववती हो गयी थी। पियारी त्रिभुज
सर्पवाती तितली की तरह नाच रही थी। पियारी को देख कर मज्जन्त की
बोटन की बात याद आनी है। कृष्णा के माय मादुर दिन्नी पावो
पद्माबाई का है। पद्माबाई उन के जीवन का एक अंग है। पियारी
का नृत्य समाप्त हुआ। राय अतीत की याद मोष रहे थे। शब्द के शब्द
में गिनाम टूट गयी। महिम ने पियारी को इनाम दिया। महिम ने निमज
भग किया था। प्रथम इनाम देने का अधिकार मूर्खतामी की है। पवित्र
हो कर राय ने सामने, बगल में देखा। मानने वाली का पदम नहीं है,
राय भी नहीं है। समीन की ओर नज़र माद कर ये बैठे रहे। कृष्णाबाई
ने तब गाना प्रारम्भ किया। लम्बा के एक शब्द में दूसरे शब्द तक गहर
की तरह वह मगीन चैन रहा था। वह था रही थी। उन के मगीन और
नृत्य का उच्छ्वास भूबं था। राय गह झुन गये थे। गाना - समाप्त हुआ।
राय बोल उठे—बहुत अच्छा अच्छा !

बाँकी ने गजाम करके कहा—बाँकी का गान कृष्णा बाई है। महिम

ने उधर से बुलाया, कृष्णा बाई थोड़ा इनाम इधर । राय उठ बैठे । धीरे-धीरे सभा से बाहर निकल गये । वरामदे पर से खाली पैरों को आवाज प्रमत्तः क्षीण हो कर समाप्त हो गयी ।

महिम ने कहा—पियारी बाई, अब तुम्हारा एक और ।

कृष्णा ने कहा—हुजूर बहादुर को आने दीजिए ।

महिम ने कहा—वे आ रहे हैं, इस की क्या बात है ! चायद वे आ रहे हैं ।

राय नहीं—प्रवेश किया नायब ताराप्रसन्न ने । एक चांदी का प्लेट सभा में उम में उतार दिया । प्लेट पर दो मोहरें थीं । नायब ने कहा—बाय ने इनाम दिया है ।

महिम अमहिम्न हो उठा—वे कहाँ हैं ?

उन के दिन में ददं उठा है । वे अब आ नहीं सकेंगे । आप लोग माना लुनिए । उन्होंने सब से माफी मांगी है । सभा में एक अस्पष्ट मूँजन उठा ।

महिम ने उठ कर अलगाये असन्तुष्टि के स्वर में बदन तोड़ कर कहा—घसता हूँ ताराप्रसन्न ! बस साहब आयेँगे ।

ताराप्रसन्न ने आपत्ति न की । दूम्मे भी उठ पड़े । सभा टूट गयी ।

कमरे की जमीन पर रायगृहिणी का हाथ-बल्ल गुला पड़ा था । उग के अन्दर कुछ नहीं था । राय स्वयं बिना दुष्प्रान् किये कमरे में गिर ऊँचा बिये चक्कर लगा रहे थे । रायवग की मर्यादा अक्षुण्ण रही । उत्तेजना और गुरा की गर्मी के कारण शरीर का रक्त मानो खोप रहा था । रक्त-काल अब गंध बदल गया था । अनजाने ही वे कमरे के बाहर आ पड़े । जलमापर के प्रकाश की दीप्ति ने उन्हें आकर्षित किया । पुनः उन्होंने जलमापर में आ कर प्रवेश किया । सभा शून्य है । दीवाल पर केवल राय-वगप्रमाण जीवित है । विश्वाम्बर ने गुप्ती गिरदी की ओर देखा । उद्योतना में पुपिबी नहा रही है । वसन्तवमार के साथ मुषुपुग्न वृत्त की लुब्धक आ रही है । वहीं बिम्बी पेड़ पर बैठ कर एक क्षीण सदाचार की बर्त, पी बर्त की रट लगा रहा है । राय के मन में समीप मूँज उठा । बहुत दिन पहले की झुनी हुई चन्द्रा के गले का विशाद—गुनु जा गुनु जा निदा—। गिर उठा कर देखा, चाँद मध्य आकाश में है । धीरे की भाषा

से पीछे मुड़े। अनन्त बत्ती बुझाने की तैयारी कर रहा है।

राय ने मना करते हुए कहा—रहने दो।

अनन्त चला जा रहा था। राय ने बुझाया—मेरा इसराज ता दो। गिड़की के सामने इसराज गोद में ले कर राय ने कहा—डाँतो। परान पर खुसा बोतल पड़ा था—राय ने इसारे से दिगा दिया। पेय दे कर अनन्त चला गया।

इसराज के तार पर छड़ी फिराया। गान्त महल में स्वर फँस गया। बिभोर हो कर राय इसराज बजाते रहे। इसराज के बजा बोल कूटे ? मीठी भावाव तो साक-साक गुनार्द पड़ रही थी।

गाने के बोल राय के कान में बज रहे थे—निगीब रात में दुभांगी बगिनी, द्वार के पास पहरे पर खड़ी बिपैसी ननद, मेरी आँधों में निद्रा नहीं, निद्रा के बहाने मैं तुम्हारा रूप ध्यान करती हूँ, हे प्रिय ! तुम ने इस समय क्यों बाँसुरी बजायी ?

राय इसराज रख कर उठ पड़े हुए। धीरे से उन्होंने बुझाया—चन्द्रा ! चन्द्रा !!

उन की चन्द्रा ! यह गाना भी तो उसी का था। बाहर में मधुर बन्द से किसी ने बुझाया—जनाब !

राय ने व्यग्र हो कर कहा—चन्द्रा, चन्द्रा आओ, इसर आओ ! दोग्ग सब चले गये। चन्द्रा !

इन्ना ने मुस्कराते हुए आ कर अभिवादन कर के अद्वय मधुर स्वर में जो गाना उन्होंने इसराज पर बजाया था उसी का अन्तिम वर गाना—हे प्रिय ! इस समय क्यों बगी बजायी ?—हम कर राय ने अपनी माँ की भावाव की मयागम्भव दवा कर गाना प्रारम्भ किया—हे प्रिया ! ऐसी छत, मेरे हृदय में विजयोत्साह है, अबेले बँने रहा जाये ?

राय बीउल का कोकं खोल रहे थे। हाथ बढ़ा कर इन्ना बाई ने कहा—जनाब का हृदय हो तो बाँसुरी दे सकती है।

सोड़ा हँस कर राय ने बीउल छोड़ दी। इन्ना ने बीउल छोड़ी और परान उठेंस कर गिलास राय बाबू के हाथ में पकड़ा दिया।

फिर इसराज का स्वर उठा। साथ ही इन्ना ने मधुर बन्द में राग

प्रारम्भ किया। गाते-गाते वह नाचने लगी। उस ने गाया—हे प्रिय, तारे फूल की माला मैं नहीं गुंथती, ऊँची डाली पर जो फूलों का गुच्छा है वह मुझे दो, मुझे तुम पकड़ कर उठाओ, मैं स्वयं तुम्हारे लिए फूल चुनूँगी। मुँह उठा कर हाथ बढ़ा कर वह नाच रही थी। राय ने इसराज फेंक कर हाथ की मुट्ठी में कृष्णा के दोनों पैर पकड़ कर ताल-ताल पर उसे नचा दिया। गाना समाप्त हुआ। कृष्णा मिरने के बहाने चीख पड़ी। दूसरे ही क्षण वह उतर गयी। मदिरा से मस्त राय ने प्यार से बुलाया—चन्द्रा—चन्द्रा—प्यारी।

गाने के बाद गाना। साथ में मुरा। एक बोलस समाप्त हो गयी। दूसरी बोलस भी प्रथम होने पर थी। पाँचों देर बाद ही चार्द जी का अचेत शरीर दर्ज पर लुढ़क गया। विश्वम्भर तब भी बैठे थे—मस्त नीलकण्ठ की तरह। एक सक्रिया गम्हास उम के मिर के नीचे रख कर अच्युती तरह ने उसे गुला दिया। और इसराज चीख कर फिर बजाने लगे। गागुली घर का तीन बजे का घण्टा बोल उठा—टनू-टनू-टनू।

राजमहल के ग्रम्भे-ग्रम्भे से कबूतरों का शोर उठा। राय की होश आया। निम्न दूमी शब्द ने निद्रा टूटती है। ये उठ खड़े हुए। गौरी कृष्णा की एक बार प्यार किया—चन्द्रा-चन्द्रा प्यारी! फिर बरागदे के बाहर आ कर उन्होंने बुलाया—अनन्त।

अनन्त गया था छत पर प्रभु के लिए तबिया-गनीषा बिछाने। नीचे उतर आने ही गय ने उम में कहा—पगड़ी का चादर, सवारी का योगाक दे। नितान्त में कह दे, लूटान की पीठ कम दे—जन्दी। विमय में अनन्त ने स्वामी के मुख की ओर देखा। देखा, राय मुँहों पर साय दे रहे हैं।

यह सुनि उन की अस्मिन्त मरी, लेकिन बहुत दिन से देखा नहीं था। उम ने मृदुस्वर में कहा—मुँह-हाथ पर पानी डाल भोजिए। कुछ देर बाद ही लूटान की हुरंगुनी शिर्हाट्ट ने सेर राति प्रमान हो ली। नारायणन की मोद टूट गयी थी। फिरभी ने देखा—गुरा की पीठ पर विश्वम्भर राय हैं। शरीर पर अस्त पात्रपात्र, जवहन और

अनन्त

माथे पर पगड़ी है। ओंघेरे में पूरा न देख कर भी ताराप्रसन्न ने कल्पना की—पैर में जरीदार नागरा, हाथ में धावुक। तूफान झूझता-झूझता बाहर चला गया।

मैदान के बाद मैदान पार कर धूल की धुलकी उड़ा कर तूफान तूफान के वेग से उड़ रहा था। रात्रि की भीतल हवा राय के सप्त मनाट का रसंग कर रही थी। शराब का नशा धीरे-धीरे घटता जा रहा था। मैदान के घाद या घास कुमुमटिहि। बगल में सच्ची लाद कर एक गाड़ी जा रही है। उस में दो आरोही थे। शायद ये हाट जा रहे थे। कुछ शब्द उन के बान में आया—गागुली बाबू लोग छरीद कर...

राय ने जोर से लगाम खींच कर तूफान की गति रोक दी। तब भी गाड़ी के आरोही कह रहे हैं—लगाम दे कर भय कोई साभ नहीं है। गुप्त या राय राजाओं के जमाने में।

घारो ओर देख कर राय चौंक उठे।

तूफान की पीठ पर! कहीं!—यह वे कहीं आ गये। जमना ममता, हाथ में निकला इलाका की निघट सामने है। क्षण भर में सीधे हो कर, लगाम खींच कर तूफान को मोड़ कर जोर से उनमें बैठ मारा। निर बैठ मारा। तूफान वेग में दोड़ा। अस्तव्यस्त के सामने आ कर राय ने चारों ओर भाँख उठा कर देखा, पूरब की ओर प्रकाश की रेखा पट रही है। अभी रात समाप्त नहीं हुई।

राय ने बुलाया—निगाह!

वे हाँक रहे थे। अनुभव किया, तूफान भी चरचरा रहा है। रात उतर पड़े। देखा, लगाम के विषाद से तूफान का मुख पट गया है। उन के निर पर हाथ फेरा—बेटा-बेटा!

तूफान मुख न उठा गया। शराब का नशा शायद तब भी पूरा गया नहीं था। बोले—जमनी बेटा, तेरी भी जमनी, मेरी भी जमनी। लगाम बिम बाग की तूफान, उड़-उड़!

निगाह सीधे घड़ा था। उन ने कहा—बड़ा हीरकवा है—रफा होने पर ही उठेगा।

बसित हो कर राय ने मुख घुमा कर देखा—निगाह! निगाह के

हाथ में तूफ़ान को सोंप कर राय घोड़ा मकान के अन्दर चले गये ।
 दुमजिने पर बैठ कर देखा, जलसागर तब भी घुसा है । शोक कर देखा,
 कमरा शून्य है, अभिसारिका जा चुकी है । शराब की ग्रासी बोतल कमरे
 में लुढ़क रही है । झाड़ और दीयालपिरो की बत्ती तब भी जल रही है ।
 दीवाल पर दूध रायबनधरण हैं, मुख पर मत्वाली हूँमी है । भय से
 राय पीछे हट आये । अचानक लगा, दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखा है—
 मोह ! बेबल उन्ही का नहीं, मात रामों का मोह इसी कमरे में द्रवठा है ।
 दरवाजे पर मे ही बे सोट पड़े । रेलिंग पर झुक कर हरे हुए के
 समान उन्होंने बुलाया—अनन्त-अनन्त !
 अनन्त उतर दे कर दौड़ आया । प्रभु का ऐसा कष्टस्वर उस में कभी
 नहीं सुना था । उस के आ कर पड़े होन ही राय बोल उठे—बत्ती बन्द
 कर दो, बत्ती बन्द कर दो—जलसागर का किवाड़ बन्द करो—
 फिर बात सुनाई न पड़ी । हाथ का चादक आवाज करता हुआ आ
 कर जलसागर के किवाड़ पर गिर पड़ा ।

• • •

भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित

प्रमुख कहानी-संग्रह

अमृता प्रीतम : पुनी हुई कहानियाँ	
: पुने हुए निबन्ध	अमृता प्रीतम 50.00
प्यार की बातें तथा अन्य कहानियाँ	गुरेन्द्र वर्मा 10.00
भूतलीला	हरिमोहन शर्मा 14.00
एक और नीलाग्रना (डि. सं.)	वीरेन्द्रकुमार जैन 8.00
नये पादस (तृ. सं.)	मोहन रावेरा 17.00
गताह मे उठता आदमी (पुर., च. सं.)	ग.मा. मुक्तिबोध 18.00
काठ का मदन (तृ. सं.)	" 15.00
बन्द गली का आगिरी मकान (प. सं.)	प्रमोद भारती 8.00
	[साहदेवी 16.00
बादलों के बीच धूप	बमन जोशी 4.00
तीन गहेनियाँ	पु. मि. रेगे 4.00
एक भयपित्त महिला	नरेग मेल्गा 4.00
प्रतिनिधि मकानन : मिह्र कहानियाँ	ग. : भ. आ. बोनन्यायन 6.00
गरेरा मपरं मर्जन	भयवाकरन उताग्रनाथ 8.00
मुरदा गराय	शिवप्रसाद मिह्र 5.00
प्यार के बन्धन (डि. सं.)	रावी 5.00
मेरे बदायुध का कहना है : 2 (डि. सं.)	" 5.00
शिखरी और गुमाब के पुन (प. सं.)	उषा त्रिवेदी 3.00
एक परछाई दो हाथों	गुमाबराज बोहर 5.00
मोहियों जाने (पुर., डि. सं.)	बालारामिह्र दुग्गल 5.00
चन्दोच (पं. सं.)	अर्जुन 14.00
बाम के पथ (डि. सं.)	बालकृष्णराज जैन 5.50
अनील के बन्धन (डि. सं.)	" 6.00

नये चित्र	सत्येन्द्र चरतू	5.00
कुछ मोती कुछ गीप (पुर., तृ. म.)	अयोध्याप्रसाद गोपनीय	4.00
आकाश के तारे	विनय वैक	7.00
जसलापर (दूसरा स)	सादवेरो	14.00
	तारासवर कन्धोपाध्याय	25.00

(अन्य कहानी संग्रह : अभी अप्राप्य)

गुलमोहर के गुच्छे	मजुल भगत	9.00
अतीत में कुछ	गंगाप्रसाद बिमल	7.00
अपराजिता	भगवतीनरण सिंह	4.00
जहर	धवल कुमार	4.00
पंचपन कहानियाँ	करतारसिंह दुग्गल	14.00
प्राचीन भारत की श्रेष्ठ कहानियाँ (डि. म.)	जगदीश चन्द्र जैन	प्रेस में
दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ (डि. स.)	" "	" "
आँगमर वादस्त की कहानियाँ (डि. स.)	तारासवर कन्धोपाध्याय	4.50
राजा निरवगिया (डि. स.)	कमलेश्वर	6.00
छोटी हृद दिमाग (डि. स.)	"	4.50
कर्मनामा की हार	निवप्रसाद सिंह	5.00
शाही (डि. स.)	धीरान्न वर्मा	4.50
बोगता (डि. स.)	मेख मादी	5.00
मेरे गवागुद का कहना है - भाग 1	राजी	5.00
गुने आँगन रंग बरगे	समीताराजन मान	5.00
हरिपाना सोवमय की कहानियाँ	राजाराज काली	4.00
सो कहानी गुनो	अयोध्याप्रसाद गोपनीय	3.00
त्रिन घोत्रा तिन पाद्यों (प. मं.)	"	5.00
महरे पानी पैठ (प. स.)	"	"
मेख गिनीना (डि. मं.)	राजेंद्र दादब	4.50
मयच के बाद (पुर., तृ. म.)	विजय प्रभाकर	5.00

